साहित्य अकादमी से पुरस्कृत उपन्यास

आर.के.नारायण

गाइड

गाइड

अनुवाद
शिवदान सिंह चौहान
विजय चौहान

ISBN : 9788170287506
संस्करण : 2016 © आर.के. नारायण के कानूनी उत्तराधिकारी
हिन्दी अनुवाद © राजपाल एण्ड सन्ज़
GUIDE (Novel) by R.K. Narayan

राजपाल एण्ड सन्ज़
1590, मदरसा रोड, कश्मीरी गेट-दिल्ली-110006
फोन: 011-23869812, 23865483, फैक्स: 011-23867791
e-mail : sales@rajpalpublishing.com
www.rajpalpublishing.com
www.facebook.com/rajpalandsons

गाइड

(साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत उपन्यास)

The Guide का हिन्दी अनुवाद

आर. के. नारायण

राजपाल

अंतर्वस्तु

1
2
3
4
5
6
7
8
9
10

1

उस अजनबी का आना राजू को अच्छा ही लगा–उस जगह की निबिड़ एकान्तता कुछ तो दूर हुई थी इससे। अजनबी श्रद्धापूर्वक उसके चेहरे की ओर टकटकी बाँधे खड़ा था। राजू को इससे कुतूहल भी हुआ और संकोच भी। खामोशी तोड़ने के लिए उसने कहा, "अगर चाहते हो तो बैठ जाओ।" अजनबी ने कृतज्ञतापूर्वक सिर हिलाकर इस सुझाव को स्वीकार किया और अपने पाँव और मुँह धोने के लिए घाट की सीढ़ियों से उतरकर नीचे नदी तक गया। फिर कन्धे पर रखे एक पीले, चारखाने तौलिये से हाथ-मुँह पोंछता हुआ ऊपर आया और उस पटिया से दो कदम नीचे बैठ गया जहाँ रामू टाँग पर टाँग रखे इस मुद्रा में बैठा था जैसे वह किसी प्राचीन मन्दिर के निकट राजसिंहासन पर बैठा हो। नदी की धारा पर छत्र की तरह छाई पेड़ों की शाखें उन चिड़ियों और बन्दरों की कूद-फान्द से पत्तियों में सरसराहट पैदा करती हुई कांप उठती थीं, जो उनपर रैनबसेरा करने के लिए उपयुक्त जगह तलाश कर रहे थे। जिधर से नदी का प्रवाह था, वहाँ पहाड़ी के पीछे सूरज डूब रहा था। राजू इन्तज़ार करता रहा कि अजनबी कुछ बोलेगा। वह शिष्टाचारवश खुद बात शुरू नहीं करना चाहता था।

आखिरकार राजू ने पूछा, "तुम कहाँ के रहने वाले हो?" उसे डर था कि कहीं अजनबी भी मुड़कर यही प्रश्न न पूछ बैठे।

अजनबी ने उत्तर दिया, "मैं मंगल का रहने वाला हूँ...।"

"मंगल कहाँ है?"

अजनबी ने बाँह हिलाकर नदी के ऊँचे कगार के पार की ओर इशारा किया। "यहाँ से ज़्यादा दूर नहीं है," उसने कहा। फिर अजनबी ने अपने बारे में और भी बातें बताईं। "मेरी बेटी नज़दीक ही रहती है। मैं उससे मिलने गया था। अब मैं घर वापस जा रहा हूँ। खाने के बाद ही मैं उसके यहाँ से चल पड़ा था। उसने तो रात के खाने तक रुकने के लिए बड़ी मिन्नत की, लेकिन मैंने इन्कार कर दिया। रुक जाने का मतलब होता कि मैं कहीं आधी रात को लौटकर घर पहुँचता। मैं किसी चीज़ से डरता नहीं लेकिन जिस वक्त आदमी को बिस्तर में सोना चाहिए, वह पैदल चलने में क्यों गुज़ारे?"

"तुम बहुत समझदार हो," राजू ने कहा।

वे दोनों कुछ देर तक बन्दरों की चीं-चीं सुनते रहे, फिर उस अजनबी को जैसे कुछ ख्याल आ गया और वह बोला, "मेरी बेटी मेरी अपनी बहन के लड़के से ब्याही गई है, इसलिए कोई परेशानी की बात नहीं है। मैं अक्सर अपनी बहन से मिलने जाता हूँ और इस बहाने अपनी बेटी से भी मिल लेता हूँ। कोई बुरा नहीं मानता।"

"आखिर कोई बुरा भी क्यों मानेगा, जब तुम अपनी ही बेटी से मिलने जाते हो?"

"अपने दामाद के यहाँ बार-बार जाना अच्छा नहीं माना जाता," ग्रामीण अजनबी ने बताया।

राजू को यह ऊटपटांग चर्चा अच्छी लग रही थी। एक दिन से ज़्यादा हुआ, वह इस जगह एकदम अकेला पड़ा था। फिर से इन्सान की आवाज़ सुनना उसे सुखकर लग रहा था। इसके बाद ग्रामीण अजनबी फिर बड़ी श्रद्धा से उसके मुँह की ओर एकटक निहारने लगा। राजू ने विचारपूर्ण मुद्रा में अपनी ठुड्डी सहलाकर देखी कि कहीं अचानक वहाँ एक पैगम्बरी दाढ़ी तो नहीं उग आई। लेकिन ठुड्डी अभी भी चिकनी थी। उसने अभी दो दिन पहले ही हजामत करवाई थी और अपने जेल-जीवन के कड़े परिश्रम की कमाई में से उसके लिए पैसे दिए थे।

बातूनी हज्जाम ने, उस्तरे की तेज धार से साबुन की झाग छीलते हुए पूछा था, "अभी जेल से छूटकर आ रहे हो, क्यों?" राजू ने अपनी आँखें घुमाईं और चुप रहा। वह इस प्रश्न से चिढ़ गया, लेकिन उसने उस आदमी पर अपना भाव ज़ाहिर नहीं होने दिया जिसके हाथ में उस्तरा था। "अभी छूटकर आ रहे हो?" हज्जाम ने फिर प्रश्न दुहराया।

राजू ने सोचा कि ऐसे आदमी पर गुस्सा करने से कोई लाभ नहीं होगा क्योंकि हज्जाम अपने तजुर्बे से बोल रहा था। फिर भी राजू ने पूछा, "तुम कैसे जानते हो?"

"मैं बीस साल से यहाँ हजामत कर रहा हूँ। तुमने देखा नहीं कि जेल के फाटक से निकलकर यह पहली दुकान है? कामयाबी का नुस्खा यह है कि सही जगह पर दुकानदारी की जाए। लेकिन इससे और लोगों की ईर्ष्या जाग उठती है और आदमी उनकी आँखों का काँटा बन जाता है!" उसने उस्तरा घुमाकर ईर्ष्यालु हज्जामों की फौज को जैसे खदेड़ते हुए कहा।

"क्या तुम अन्दर जाकर कैदियों की हजामत नहीं करते?"

"नहीं, जब तक वे छूटकर बाहर नहीं आते तब तक नहीं। अन्दर के लिए मेरे भाई के बेटे की ड्यूटी लगी है। मैं उससे मुकाबला नहीं करना चाहता, न मैं रोज़ जेल के फाटक के भीतर दाखिल ही होना चाहता हूँ।"

"बुरी जगह तो नहीं है," राजू ने साबुन की झाग के बीच से कहा।

"तो फिर अन्दर चले जाओ," हज्जाम ने कहा और पूछा, "क्या मामला था? पुलिस ने क्या कहा?"

"इसकी चर्चा मत करो," राजू ने तपाक से कहा और बाकी हजामत के दौरान एक गम्भीर चुप्पी साध कर बैठा रहा। लेकिन हज्जाम इतनी आसानी से दबने वाला नहीं था। गुंडे-बदमाशों से ज़िन्दगी भर उसका सम्पर्क होता रहा था, जिसने उसे भी सख्त बना दिया था। "अठारह महीने या चौबीस? मैं दावे से कह सकता हूँ कि इनमें से कोई न कोई तो है ही।"

राजू के दिल में उस आदमी के लिए आदर का भाव उमड़ पड़ा। वह सचमुच उस्ताद था। उसपर नाराज़ होने से कोई फायदा नहीं था। "तुम इतने अक्लमंद और जानकार हो। फिर सवाल क्यों पूछते थे?"

हज्जाम इस तारीफ से बहुत प्रसन्न हुआ। उसकी उंगलियाँ एक क्षण के लिए ठहर गईं

और उसने आगे को झुककर राजू के चेहरे का सामना करते हुए कहा, "सिर्फ तुम्हारे मुँह से सुनने के लिए। तुम्हारे चेहरे पर साफ लिखा है कि तुम दो-साला कैदी हो, जिसका मतलब यह है कि तुम हत्यारे नहीं हो।"

"तुम यह कैसे कह सकते हो?"

"क्यों, अगर तुम सात साल काट के आए होते तो तुम्हारी शक्ल ही दूसरी हो जाती। कत्ल अगर साबित न हो तो, जानते हो, सिर्फ सात साल की सज़ा होती है।"

"अच्छा तो मैंने और क्या-क्या नहीं किया?" राजू ने पूछा।

"तुमने कोई बड़ा गबन भी नहीं किया, शायद थोड़ी रकम ही गायब की हो।"

"और क्या?"

"तुमने न औरत भगाई है, न किसी औरत के साथ बलात्कार ही किया है, और न किसी के घर को आग लगाई है।"

"तुम यह क्यों नहीं बताते कि किस खास जुर्म में मुझे दो साल की सज़ा मिली थी? अगर ठीक बूझ दोगे तो मैं चार आने इनाम दूँगा।"

"बूझ-बुझौवल खेलने का वक्त नहीं है मेरे पास," हज्जाम ने कहा और पूछा, "तुम अब क्या करोगे?"

"मुझे नहीं मालूम। कहीं तो जाऊँगा ही, शायद," राजू ने सोचते हुए कहा।

"अगर तुम लौटकर अपने जेल के साथियों के पास जाना चाहते हो तो फिर बाज़ार में जाकर किसी की जेब क्यों नहीं काटते, या किसी घर के खुले दरवाज़े में घुसकर कोई रद्दी-सद्दी चीज़ ही क्यों नहीं उठाकर चलते बनते, जिससे लोग शोर मचाकर पुलिस को बुला लें? फिर तो तुम जहाँ जाना चाहते हो वहाँ पहुँचाने का ज़िम्मा पुलिस पर रहेगा।"

"बुरी जगह तो नहीं है," राजू ने जेल की चारदीवारी की ओर सर हिलाकर इशारा करते हुए कहा। "वहाँ लोग दोस्ताना ढंग से पेश आते हैं–लेकिन पाँच बजे तड़के जगाए जाने से मुझे सख्त नफरत है।"

"हाँ, वह ऐसा वक्त होता है जब शायद चोर रात की कारगुजारी के बाद सोने के लिए घर वापस आता है," हज्जाम ने संकेत से लांछन लगाया। "अच्छा, अब उठो, हजामत हो गई।" उसने उस्तरा रखते हुए कहा। "अब तो तुम एक महाराजा दिखाई देते हो।" हज्जाम ने कुरसी से ज़रा हटकर उसका निरीक्षण करते हुए कहा।

निचली सीढ़ी पर बैठा ग्रामीण अजनबी सर उठाकर राजू के चेहरे की ओर इस श्रद्धाभाव से देख रहा था कि राजू को यह बात खटकने लगी। "तुम मेरी ओर ऐसे क्यों देख रहे हो?" उसने जल्दी से पूछा। अजनबी ने उत्तर दिया, "मैं नहीं जानता। मैं आपको नाराज़ नहीं करना चाहता, स्वामी।" राजू सच-सच कह देना चाहता था, मैं यहाँ पर इसलिए हूँ क्योंकि मेरे पास जाने के लिए कोई जगह नहीं है। मैं उन लोगों से दूर रहना चाहता हूँ जो मुझे पहचानते हैं।' लेकिन वह हिचकिचाया, सोचता रहा कि इस बात को कैसे कहा जाए। उसे लगा कि उसने अगर 'जेल' का नाम भी लिया तो उस अजनबी की हार्दिक भावनाओं को गहरी ठेस लगेगी। उसने फिर कोशिश करनी चाही, 'मैं उतना बड़ा

आदमी नहीं हूँ, जितना तुम सोचते हो। मैं दरअसल बहुत मामूली आदमी हूँ।' लेकिन वह अभी शब्दों के लिए मन को टटोल ही रहा था कि अजनबी बोला, "मेरे सामने एक सवाल है, स्वामी।"

"मुझे बताओ क्या सवाल है," राजू ने दूसरों की मदद करने की अपनी पुरानी आदत से लाचार होकर पूछा। यात्री आपस में एक-दूसरे से उसकी सिफारिश करते हुए एक बार ज़रूर कहते थे, "अगर राजू तुम्हारा गाइड हुआ तो तुम सब कुछ जान जाओगे। वह न सिर्फ तुमको हर दर्शनीय स्थान दिखा देगा, बल्कि और सब बातों में भी तुम्हारी मदद करेगा।" दूसरे लोगों के काम और मतलब की बातों में अपने को फँसा लेना उसका जैसे स्वभाव बन गया था। 'नहीं तो', राजू ने सोचा, 'मैं भी हज़ारों और लोगों की तरह नार्मल आदमी होता, जिनकी ज़िन्दगी में फालतू चिन्ताएँ नहीं होती।

'रोज़ी न होती तो मेरी ज़िन्दगी में ये मुसीबतें कभी शुरू न होतीं (जैसा कि राजू ने इस अजनबी को, जिसका नाम वेलान था, बाद में अपनी कहानी सुनाते हुए बताया)। वह अपने को रोज़ी कहकर क्यों पुकारती थी? वह विदेशी नहीं थी। वह तो खालिस हिन्दुस्तानी थी, जिस पर देवी, मीना, ललिता या वे हज़ारों नाम जो हमारे देश में चलते हैं, खूब फबते। लेकिन उसने अपने लिए रोज़ी नाम ही चुना। यह नाम सुनकर यह मत सोचना कि वह स्कर्ट पहनती थी या उसने मेमों की तरह बाल कटा रखे थे। वह एक नर्तकी थी और हमारे देश की परम्परावादी नर्तकियों की तरह ही दीखती थी। वह चटकीले रंगों की सुनहरी गोटा लगी साड़ियाँ पहनती थी, अपने घुंघराले बालों की वेणियाँ गूंथकर उनमें फूल-मालाएँ बाँधती थी, कानों में हीरे की ईयरिंग और गले में सोने का हार पहनती थी। मैंने पहली बार मौका पाते ही उससे कहा था कि वह कितनी महान नर्तकी है और वह किस तरह हमारी सांस्कृतिक परम्परा को आगे ले जा रही है, और यह सुनकर वह प्रसन्न हुई थी।

'तब से हज़ारों लोगों ने उससे यह बात कही होगी, लेकिन इस पंक्ति में मैं सबसे पहला आदमी था। हर कोई प्रशंसा के शब्द सुनना पसन्द करता है, और नर्तक-नर्तकी तो शायद सबसे ज्यादा। वे शायद हर घंटे बाद यह सुनना पसन्द करते हैं कि उनके अंग ताल और लय पर कैसे थिरकते हैं। मुझे जब भी अकेले में, उसके पति की नज़रों से बचाकर उसके कान में फुसफुसाकर कुछ कहने का मौका मिलता था, मैं उसकी कला की खुले दिल से तारीफ करता था। ओह, उसका पति भी कैसा आदमी था। मैंने आज तक अपनी ज़िन्दगी में उससे ज़्यादा विचित्र आदमी नहीं देखा। अपने को रोज़ी के नाम से पुकारने की बजाय यह ज़्यादा संगत होता अगर वह अपने पति को मार्कोपोलो कहकर पुकारती। उसका लिबास ऐसे आदमी जैसा था जो फौरन किसी सुदूर अभियान पर जा रहा हो। उसका मोटा रंगीन चश्मा, मोटा जैकेट, मोटा टोप जिस पर हमेशा एक हरा, चमकीला वाटर-प्रूफ खोल चढ़ा रहता था–इन सबसे लैस उसकी शक्ल एक अन्तरिक्ष-यात्री जैसी लगती थी। बेशक मुझे यह बिल्कुल नहीं मालूम कि असली मार्कोपोलो की शक्ल कैसी थी, लेकिन पहली बार उस पर नज़र पड़ते ही मेरी इच्छा उसको मार्को कह कर पुकारने की हुई थी और तब से और किसी नाम के साथ मैं उसका सम्बन्ध नहीं जोड़ सका हूँ।

'उस दिन जब पहली बार रेलवे स्टेशन पर मेरी नज़र उस पर पड़ी तो उसी क्षण मैं समझ गया कि मुझे ज़िन्दगी-भर के लिए एक ग्राहक मिल गया है। एक गाइड, आखिरकार,

ज़िन्दगी-भर ऐसे आदमी के सम्पर्क में आने की ही तलाश में रहता है जो हमेशा एक स्थायी पर्यटक के लिबास में रहना पसन्द करता हो।

'तुम शायद जानना चाहो कि मैंने क्यों और कब गाइड का पेशा अख्तियार किया। मेरे गाइड बनने का तो वही कारण था जिस कारण से कोई सिगनलर, कुली या गार्ड बनता है। मेरे भाग्य में यही लिखा था। रेलवे से सम्बन्ध रखने वाली इन मिसालों पर हँसने की ज़रूरत नहीं है। बहुत बचपन में ही रेलवे मेरे रक्त में घुलमिल गई थी। ज़बर्दस्त आवाज़ें करते हुए और धुआँ उगलते हुए इंजन मेरी चेतना को जैसे इन्द्रजाल में बाँध लेते थे। रेलवे प्लेटफार्म पर घूमने में मुझे सुख मिलता था और स्टेशन मास्टर और कुलियों की संगत में उठना-बैठना जैसे सबसे शानदार चीज़ थी और उनकी रेलवे-सम्बन्धी बातचीत सबसे ज्यादा बुद्धिमानीपूर्ण लगती थी। मैं उनके बीच ही बड़ा हुआ था। हमारा छोटा-सा मकान मलगुदी स्टेशन के ऐन सामने था। मेरे बाप ने जब खुद अपने हाथों से यह मकान बनाया था, उस वक्त तक वहाँ ट्रेन चलने की किसी ने कल्पना भी नहीं की थी। मेरे बाप ने यह जगह इसलिए पसन्द की थी क्योंकि एक तो यह कस्बे से बाहर थी, दूसरे इसकी कीमत सस्ती थी। उन्होंने खुद नींवें खोदी थीं, कुएँ से पानी भरकर मिट्टी का गारा तैयार किया था और दीवारें चिनी थीं और उनपर ताड़ के पत्तों का छप्पर डाला था। उन्होंने उसके गिर्द पपीते के पेड़ लगाए थे, जिनमें खूब पपीते लगते थे। इन पपीतों को तोड़कर और उनकी फांकें काटकर वे बेचते थे–एक-एक पपीते से उन्हें करीब आठ आने की आमदनी हो जाती थी, वे कुशलतापूर्वक उन्हें छीलकर उनकी फाँकें काटते थे। मेरे बाप के पास तख्तों और टाट से बनी एक छोटी-सी दुकान थी और सारे दिन उस पर बैठे वे पिपरमिंट, फल, तमाखू, पान, भुने हुए चने (जिन्हें वे बांस की एक नली में भरकर नापते थे) और दूसरी कई चीज़ें बेचते रहते थे, जिनकी माँग ट्रंक रोड पर चलने वाले राहगीर किया करते थे। यह 'झोंपड़ी वाली दुकान' के नाम से मशहूर थी। उनकी दुकान के आगे हर वक्त किसानों और बैलगाड़ियों के हाँकने वालों की भीड़ जमा रहती थी। सचमुच वे बड़े व्यस्त आदमी थे। दोपहर का खाना खाने के लिए जाने से पहले वे मुझे बुलाते थे और रोज़ नियमपूर्वक एक ही आदेश देते। कहते, "राजू, आकर मेरी जगह बैठो। देखो, ख्याल रखना कि जो भी चीज़ ग्राहक को दो, उसके पैसे न भूल जाओ। खाने की कोई चीज़ खुद मत खा लेना, ये सब चीज़ें बिक्री के लिए हैं। अगर किसी चीज़ के दाम के बारे में कोई शक हो तो आवाज़ देकर मुझे बुला लेना।" और जब ग्राहक आता तो मैं चिल्लाकर पूछता, "बापू, हरी पिपरमिंट आधे आने की कितनी?" "तीन," मेरे बाप घर के भीतर से कौर चबाते हुए चिल्लाकर जवाब देते। "लेकिन अगर पौने आने की खरीद रहा हो तो उसे...।" वे रियायत के बतौर कोई मुश्किल-सा अनुपात बताते जो मेरी समझ में कभी न आता। मैं ग्राहक से मिन्नत करके सिर्फ आधा आना ही लेता और उसे तीन पिपरमिण्ट पकड़ा देता। अगर संयोगवश बोतल में से चार हरी पिपरमिण्ट निकल आती तो हिसाब की पेचीदगियों से बचने के लिए मैं उसे फौरन निगल जाता।

'पड़ौस का कोई सनकी मुर्गा बांग देकर सुबह होने की घोषणा करता–जब शायद उसे लगता कि हम लोग काफी वक्त सो लिए हैं। वह इतने ज़ोर की बांग लगाता कि मेरे बाप बिस्तर से उछलकर खड़े हो जाते और मुझे भी जगा देते।

'मैं कुएँ पर जाकर स्नान करता, माथे पर पवित्र भस्म मलता, फिर दीवार पर टंगी देवताओं की तस्वीर के आगे कुछ देर तक हाथ जोड़कर ऊँचे स्वर में प्रार्थना के गीत गाता। मेरे पूजा के अभिनय को कुछ देर तक देखने के बाद मेरे बाप भैंस दुहने के लिए चुपके से पिछवाड़े के आँगन में चले जाते। फिर जब वे दूध की बाल्टी लेकर लौटते तो हमेशा कहते, "आज इस भैंस को कुछ हो गया है। आधा भी दूध नहीं दिया।" और मेरी माँ रोज़ एक ही उत्तर देती, "हाँ, हाँ, मुझे मालूम है, इसका दिमाग खराब हो गया है। मुझे मालूम है, क्या करने से यह दूध उतारेगी।" दूध की बाल्टी लेकर रसोई की ओर जाते हुए वे एक रहस्यमय, डरावना संकेत करती। फिर एक क्षण में ही मेरे लिए गरम दूध का कटोरा लेकर वे रसोई से बाहर आतीं।

'एक पुराने, जंग लगे टीन में बढ़िया किस्म की चीनी थी, जो मेरी पहुँच से दूर रसोई की धुआंरी दीवार से लगे लकड़ी के एक टांड़ पर रखा रहता था। मेरा ख्याल है कि ज्यों-ज्यों मेरी उमर बढ़ती जाती थी, टीन की जगह भी बदलकर ऊँची होती जाती थी, क्योंकि मुझे याद है कि बचपन में बड़ों की मदद के बिना मैं कभी उस कम्बख्त जंग लगे टीन तक नहीं पहुँच सका था। जब आसमान सुबह के सूरज की रोशनी से प्रकाशमान हो उठता था, मेरे बाप बाहर चबूतरे पर मेरा इन्तज़ार करते थे। वहाँ वे एक पतली टहनी लेकर बैठते थे। उन दिनों बाल-मनोविज्ञान की आधुनिक धारणाएँ अज्ञात थीं। शिक्षक के हाथ में बेंत या छड़ी की अनिवार्यता में सभी का विश्वास था। "पिटाई के बिना बच्चा कभी सीख-पढ़ नहीं सकता," मेरे बाप अक्सर पुराने ज्ञानियों की यह उक्ति दुहराते। उन्होंने मुझे तमिल की वर्णमाला सिखाई। वे मेरी स्लेट पर दोनों ओर वर्णमाला के अक्षर लिख देते। फिर मैं उनकी आकृतियों पर तब तक लगातार पेन्सिल घुमाता रहता जब तक उनकी शक्लें विकृत होकर पहचान में आने लायक न रह जातीं। बीच-बीच में मेरे बाप मेरे हाथ से स्लेट छीनकर देखते और फिर मेरी ओर क्रोध से घूरते हुए कहते, "क्या लीपा-पोती की है! तुम अगर वर्णमाला के पवित्र अक्षरों की शक्लें इस तरह बिगाड़ोगे तो ज़िन्दगी में कभी तरक्की नहीं कर सकोगे।" इसके बाद वे गीले तौलिये से स्लेट साफ करते, दोबारा अक्षरों को लिखते और स्लेट मेरे हाथ में देते हुए आदेश करते, "याद रखो, इस बार फिर तुमने इन अक्षरों को बिगाड़ा तो मुझे गुस्सा आ जाएगा। जैसे मैंने लिखा है, ठीक उसी तरह उनपर पेन्सिल फेरो और उनपर अपने चील-गोड़े मत खींचना, समझे?" यह कहकर वे मारने की मुद्रा में मेरी आँखों के आगे टहनी को जोर से लपलपाते। मैं विनीत स्वर में कहता, "अच्छा, बापू," और फिर लिखना शुरू करता। उस वक्त की तस्वीर आज भी मेरी आँखों में खिंच जाती है कि मैं अपनी जीभ बाहर निकालकर और अपने सर को एक ओर से मोड़कर किस तरह अपने नन्हे शरीर का सारा बोझ पेन्सिल पर डाल देता था–किस तरह अक्षरों की विचित्र रेखाकृतियों पर उसे ज़ोर से ठेलते हुए स्लेट से कैसी चीत्कारें-सी उठी थीं जिन्हें सुनकर मेरे बाप डाँट लगाते थे, "पेन्सिल से ये बेहूदी आवाज़ें मत निकालो! तुम्हें हो क्या गया है?" इसके बाद गणित का नम्बर आता। दो और दो = चार। चार और तीन = कुछ और। किसी बड़ी संख्या को छोटी संख्या से गुणा करो, छोटी संख्या को बड़ी संख्या से गुणा करो। हे ईश्वर, इन संख्याओं से तो मेरा सर ही चकरा जाता था। जिस समय बाहर खुले आसमान के नीचे सुबह की ठंडी हवा में चिड़ियाँ फुदकती और चहकती फिरती थीं, मैं बैठा अपने भाग्य को

कोसता रहता था, जिसने मुझे अपने बाप की संगत में पढ़ाई का अभ्यास करने के लिए नज़रबन्द कर दिया था। कभी-कभी जैसे मेरी मौन प्रार्थना के फलस्वरूप तड़के ही कोई ग्राहक दरवाज़े पर दिखाई दे जाता था और उस दिन मेरी पढ़ाई अचानक बीच में ही खत्म हो जाती थी। मेरे बाप यह कहते हुए उठकर चल देते, "सुबह के वक्त एक गधे को पढ़ाकर विद्वान बनाने से तो मेरे पास और दूसरे बेहतर काम है।"

'हालाँकि ऐसे दिनों में भी मुझे लगता था कि मेरी पढ़ाई अनन्त काल तक चलती रही है, लेकिन मेरी माँ मुझे देखते ही कहतीं, "अच्छा तो आज इतनी जल्दी छुट्टी हो गई! ताज्जुब है कि आधे घंटे में तुमने क्या सीखा होगा।" मैं उनसे कहता, "माँ, मैं बाहर जाकर खेलूँगा। तुम्हें ज़रा भी तंग नहीं करूँगा। लेकिन मेहरबानी करके आज दोबारा मुझे पढ़ाई पर मत बैठाना।" और मैं सड़क के पार इमल ी के पेड़ की छांह में खेलने के लिए भाग जाता। यह एक प्राचीन पेड़ था, खूब फैला हुआ और घनी पत्तियों से लदा, जिनके बीच बन्दर और चिड़ियों का बसेरा था और जहाँ बन्दर हर वक्त किलकारियाँ मारते और चिड़ियाँ चहकती और कच्ची इमलियाँ कुतरती थीं। वहाँ सूअर और उनके बच्चे कहीं से आकर ज़मीन पर पड़ी पत्तियों की मोटी तह को अपनी थूथनी से कुरेदते थे और मैं सारे दिन खेलता था। मेरा ख्याल है कि मैं उन दिनों कल्पना करता था कि ये सूअर मेरे किसी खेल में शामिल हैं और मैं उनकी पीठ पर सवार होकर कहीं जा रहा हूँ। सड़क से गुज़रते हुए मेरे बाप के ग्राहक मुझे अक्सर प्यार से बुलाते। मेरे पास संगमरमर की बटियाँ, ढलकाने के लिए लोहे का चक्कर और रबड़ की एक गेंद थी, जिनसे मैं खेला करता था। मुझे न तो यह होश रहता था कि कब दोपहर हुई और कब शाम और न इस बात का कि मेरे गिर्द क्या हो रहा है। मैं अपने खेल में भूला रहता था।

'कभी-कभी दुकान के लिए सामान-सौदा खरीदने के लिए शहर जाते वक्त मेरे बाप मुझे भी अपने साथ ले जाते थे। वे सड़क पर जाती हुई किसी बैलगाड़ी को आवाज़ देकर रोक लेते। मैं तब तक याचना-भरी दृष्टि से उनको देखता रहता (मुझे सिखाया गया था कि मैं खुद कभी साथ जाने की माँग नहीं करूँ) जब तक वे आदेश न देते, "बैलगाड़ी में चढ़ जाओ, नन्हें।" उनका वाक्य पूरा होने से पहले ही मैं उछलकर चढ़ जाता। बैल के गले की घंटियाँ बज उठतीं और गाड़ी के पहिये ऊबड़-खाबड़ सड़क की धूल उड़ाते और चूं-चरर-मरर करते हुए बढ़ते। मैं गाड़ी के डंडों को पकड़कर लटक जाता था और मेरी हड्डियाँ काँपने लगती थीं, फिर भी मुझे गाड़ी में भरे भूसे की गन्ध और रास्ते के दृश्य बहुत पसन्द आते थे। आदमियों और गाड़ियों से, सूअरों और लड़कों से भरे चारों ओर के इस दृश्य ने मेरा दिल मोह लिया था।

'बाज़ार में मेरे पिता अपने एक परिचित दुकानदार के सामने लकड़ी के एक तख्त पर मुझे बैठाकर खुद खरीदारी करने चले जाते थे। मेरी जेबें तले हुए काजुओं और मिठाइयों से भरी रहती थीं। उन्हें खाते-खाते मैं बाज़ार में खरीद-फरोख्त करते, बहसें करते, हँसते, गालियाँ बकते और चिल्लाते हुए लोगों को देखा करता था। मुझे याद है कि अक्सर एक सवाल मुझे परेशान किया करता था, 'बापू आप तो खुद एक दुकानदार हैं, फिर आप क्यों दूसरी दुकानों पर खरीदारी करने के लिए जाते हैं?' मुझे इस सवाल का कभी कोई जवाब न मिला। तीसरे पहर की चिलचिलाती धूप में बाज़ार के अविरल कलरव से मेरी चेतना

सुन्न हो जाती थी। मटमैली धूप से मेरी आँखें चौंधिया जाती थीं और मैं उस अपरिचित स्थान की दीवार का सहारा लेकर सो जाता था, जहाँ मेरे पिता मुझे छोड़ जाते थे।'

"श्रीमान, मेरी एक समस्या है," वेलान ने कहा। राजू ने सिर हिलाकर कहा, "हर आदमी की कोई न कोई समस्या होती है।" अचानक उसके मन में पैगम्बरियत उमड़ पड़ी। जब से वेलान आकर उसके सामने बैठा टकटकी लगाकर उसकी तरफ देखने लगा था, उसे अपने महत्त्व का आभास होने लगा था। उसे लगा जैसे वह कोई अभिनेता हो, जिसे हमेशा सही वाक्य बोलना चाहिए। इस प्रसंग में सही वाक्य यह था, "अगर तुम मुझे कोई ऐसा इन्सान दिखा दो, जिसके सामने कोई समस्या नहीं है तो मैं तुम्हें सम्पूर्ण संसार के दर्शन करा सकता हूँ। जानते हो महान बुद्ध ने क्या कहा था?" वेलान सरककर नज़दीक आ गया। "एक बार एक औरत अपने बच्चे की लाश को सीने से लगाए हुए विलाप करती हुई बुद्ध महाराज के पास पहुँची। बुद्ध ने कहा, 'जाओ, जाकर यह मालूम करो, क्या शहर में कोई ऐसा घर भी है, जहाँ मौत नहीं आई। उस घर से मुट्ठी-भर सरसों लाकर मुझे दो, तब मैं तुम्हें मौत पर काबू पाना सिखा दूँगा।' " वेलान ने जीभ तालू से सटाकर 'च्चि! च्चि!' की आवाज़ की और पूछा, "और मरे हुए बच्चे का क्या हुआ श्रीमान?"

"माँ को मजबूर होकर बच्चा दफनाना पड़ा और क्या!" राजू ने जवाब दिया, हालाँकि मन ही मन उसे इस तुलना पर सन्देह हो रहा था। "अगर तुम मुझे एक भी ऐसा घर दिखा सको जहाँ लोग समस्याओं से मुक्त हो चुके हों तो मैं तुम्हें सारे संसार की सभी समस्याओं से छुटकारा पाना सिखा दूँगा।" वेलान इस भारी-भरकम वक्तव्य से प्रभावित हुआ। उसने झुककर प्रणाम करते हुए कहा, "श्रीमान, मैंने आपको अपना नाम नहीं बताया। मैं वेलान हूँ। मेरे पिता ने अपनी ज़िन्दगी में तीन शादियाँ की थीं। मैं उनकी पहली पत्नी का सबसे बड़ा लड़का हूँ। उनकी तीसरी पत्नी की सबसे छोटी लड़की भी हमारे साथ ही रहती है। गृहस्वामी होने के नाते मैंने घर में उसे हर सुख-सुविधा दे रखी है। एक लड़की को जितने भी गहनों और कपड़ों की ज़रूरत हो सकती है, मैं उसे खरीदकर देता हूँ लेकिन..." वेलान अन्तिम आश्चर्यपूर्ण वाक्य कहने से पहले ही रुक गया। राजू ने उसकी बात पूरी की, "लेकिन लड़की कृतघ्न है।"

"बिलकुल ठीक, श्रीमान," वेलान बोला।

"और तुमने उसके लिए जो लड़का ढूँढ़ा है वह भी उसे पसन्द नहीं है?"

"बिलकुल सच है श्रीमान," वेलान ने चकित स्वर में कहा। "मेरे चचेरे भाई का बेटा बड़ा अच्छा लड़का है। शादी की तारीख भी पक्की हो गई थी, लेकिन जानते हैं श्रीमान, लड़की ने क्या किया?"

"भाग गई। तुम उसे वापस कैसे लाए?" राजू ने पूछा।

"मैंने पूरे तीन दिन, तीन रात उसे ढूँढ़ने में लगा दिए। दूर किसी गाँव के मेले की एक भीड़ में जाकर मैंने उसे पकड़ा। मन्दिर के रथ को लोग खींच रहे थे। वहाँ पचास गाँवों के लोग इकट्ठे थे। मैं भीड़ में हर आदमी का चेहरा देखने लगा। मेरी बहन कठपुतली का तमाशा देख रही थी। जानते हैं, अब वह क्या कर रही है?" राजू ने इस बार वेलान को कहानी पूरी करने के सन्तोष से वंचित नहीं किया। वेलान ने कहा, "वह दिन-भर कोठरी में

बैठी कुढ़ती रहती है। समझ में नहीं आता, क्या करूँ। हो सकता है उस पर कोई चुड़ैल सवार हो गई हो। बताइए उसका क्या इलाज करूँ, आपकी कृपा होगी, श्रीमान।''

''राजू ने क्लान्त दार्शनिक मुद्रा में कहा, ''ऐसी मामूली चीज़ें तो ज़िन्दगी में होती ही रहती हैं। किसी भी बात से ज़्यादा घबराना नहीं चाहिए।''

''तो मैं उस लड़की का क्या इलाज करूँ, श्रीमान?''

''उसे यहाँ ले आओ। मैं उससे बात करूँगा,'' राजू ने शान से कहा। वेलान खड़ा हो गया। उसने झुककर प्रणाम किया और राजू के पैर छूने चाहे। राजू दूर हट गया। ''मैं किसी को ऐसा काम करने की इजाज़त नहीं दे सकता। सिर्फ ईश्वर ही इस दण्डवत् प्रणाम का अधिकारी है। अगर हम लोगों ने ईश्वर का अधिकार छीनने की कोशिश की तो वह हमें नष्ट कर देगा।'' उसे लगा कि वह एक संत बनता जा रहा है। वेलान विनीत भाव से सीढ़ियाँ उतरकर नदी पार करने के बाद दूसरे किनारे पर जाकर ओझल हो गया। राजू सोचने लगा, 'काश मैं उससे यह पूछ लेता कि लड़की की उम्र क्या है। उम्मीद है कि वह दिलचस्प नहीं होगी। मैं ज़िन्दगी में बड़ी मुसीबतें झेल चुका हूँ।''

रात होने तक वह नदी का प्रवाह देखता रहा। बीच-बीच में पीपल और बरगद के पेड़ों की सरसराहट प्रचण्ड और भयानक हो उठती थी। आसमान साफ था। राजू को और कोई काम नहीं था, इसलिए उसने तारे गिनने शुरू कर दिए। वह मन ही मन कहने लगा, 'मैंने मानव-जाति की जो गहरी सेवा की है, उसका पुरस्कार मुझे ज़रूर मिलेगा। लोग कहेंगे–यह है वह आदमी जिसे आकाश के तारों की सही संख्या मालूम है। अगर नक्षत्रों के कारण कोई आफत उठ खड़ी हो तो जाकर उसी से सलाह लो। वही रात के आसमान के बारे में तुम्हारा पथ-प्रदर्शक बन सकता है।' फिर वह अपने-आपसे कहने लगा, 'बेहतर होगा अगर मैं एक कोने से गिनती शुरू करूँ और आसमान को टुकड़ों में बाँटकर सारे तारों को गिन डालूँ। मध्य आकाश से क्षितिज की ओर जाने का कोई फायदा नहीं, बल्कि क्षितिज से मध्य आकाश की ओर गिनना चाहिए।' वह एक सिद्धान्त का प्रतिपादन करने जा रहा था। उसने बायीं तरफ दूर नदी पार खजूर के पेड़ों पर खिंची क्षितिज-रेखा से गिनती शुरू की। एक-दो-पचपन अचानक उसे एहसास हुआ कि गहरा देखने पर तारों का एक और पुंज दिखाई देने लगता है। वह गिनती भूल गया और वह आँकड़ों के जाल में उलझ गया। उसे थकान महसूस होने लगी और वह खुले आसमान तले एक पत्थर की सिल पर पैर फैलाकर सो गया।

आठ बजे सुबह की धूप उसके चेहरे पर चमक रही थी। राजू की आँखें खुलीं तो उसने देखा घाट की निचली सीढ़ी पर वेलान आदरपूर्वक खड़ा था। वेलान ने कहा, ''मैं अपनी बहन को ले आया हूँ।'' और उसने चौदह साल की एक लड़की को धकेलकर आगे कर दिया जिसने कसकर बालों को चोटियों में बाँध रखा था और गहने पहने थे। वेलान ने बताया, ''ये गहने मैंने अपने पैसों से खरीदकर इसे दिए हैं, आखिरकार यह मेरी बहन है।'' राजू आँखें मलता हुआ उठ बैठा। इतने सवेरे वह सांसारिक मामलों को सुलझाने की ज़िम्मेदारी लेने के लिए तैयार नहीं था। वह तत्काल एकान्त जाकर नित्यकर्म से निबटना चाहता था। उसने वेलान और उसकी बहन से कहा, ''तुम लोग वहाँ जाकर मेरा इन्तज़ार करो।''

बाद में राजू ने देखा कि वे लोग पुराने खम्भोंवाले हॉल में उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

राजू एक चबूतरे पर बैठ गया। वेलान ने उसके सामने केलों, खीरों, गन्ने के टुकड़ों, तले हुए काजुओं से भरी एक टोकरी और दूध से भरा एक ताम्बे का बर्तन रख दिया।

राजू ने पूछा, "यह किसलिए है?"

"श्रीमान, अगर आप यह भेंट स्वीकार कर लें तो हमें बहुत खुशी होगी।"

राजू बैठा टोकरी की तरफ ताकता रहा। इस भेंट से उसे अप्रसन्नता नहीं हुई। अब वह कोई भी चीज़ खा सकता था और हज़म कर सकता था। उसने खाने-पीने के मामले में नखरा न करना सीख लिया था। अतीत के दिनों में वह कहता, 'यह कौन खाएगा, मुझे सुबह के वक्त सबसे पहले इडली और कॉफी चाहिए– ये चीज़ें बाद में चबाने के लिए ठीक हैं।' लेकिन जेल की ज़िन्दगी ने उसे किसी वक्त कोई भी चीज़ खा सकने की आदत सिखा दी थी। कभी-कभी उसका कोई कैदी साथी किसी वार्डर की कृपा से छ: दिन की बासी गोश्त की कचौड़ी छिपाकर ले आता, जिसके तेल में से खटाई की बू आती। राजू को भी उसमें से हिस्सा मिलता। एक बार राजू ने तड़के तीन बजे उठकर बासी कचौड़ी खाई थी ताकि दूसरे साथी उठकर हिस्सा न माँगने लगें। अब उसे जो चीज़ मिल जाती थी, वह खा लेता था। उसने पूछा, "आप मेरे लिए इतना कुछ क्यों कर रहे हैं?"

"ये चीज़ें हमारे अपने खेतों की हैं, आपको भेंट देकर हमें गर्व का अनुभव हो रहा है।"

राजू को और ज्यादा सवाल पूछने की ज़रूरत नहीं पड़ी। ऐसे मौकों पर अनुभव द्वारा वह पूरी तरह से काबू पाना सीख गया था। वह महसूस कर रहा था कि यह भक्ति-भाव अवश्यम्भावी ही था। क्षण-भर के लिए वह उस भेंट को देखता रहा फिर टोकरी उठाकर मन्दिर के भीतर चला गया। दोनों जनें उसके पीछे-पीछे चले गए। राजू अँधेरे में आले में बनी एक मूर्ति के सामने जाकर रुक गया। यह चार बाँहों वाले एक लम्बे देवता की मूर्ति थी जिसके एक हाथ में चक्र था और दूसरे हाथ में राजदण्ड था। मूर्ति का सिर बड़े सुन्दर ढंग से तराशा गया था, लेकिन एक शताब्दी से किसी ने इस मूर्ति की तरफ ध्यान नहीं दिया था। राजू ने धार्मिक भाव से टोकरी में रखी भेंट मूर्ति के चरणों में रखकर कहा, "यह इस देवता की पहली भेंट है। देवता को पहले भोग लगाकर हम लोग बचा-खुचा खा लेंगे। जानते हो, ईश्वर को भेंट चढ़ाने के बाद खाने की चीज़ें कम होने की बजाय कितनी बढ़ती हैं? तुम्हें वह कहानी याद है न।"

राजू ने प्राचीन काल के देवक नामक व्यक्ति की कथा सुनाई जो प्रतिदिन मन्दिर के फाटक पर भीख माँगा करता था और अपनी कमाई को खर्च करने से पहले देवता के चरणों में रख देता था। कथा पूरी करने से पहले राजू को एहसास हो गया कि न उसे कथा याद आ रही है न कथा का उद्देश्य ही याद आ रहा है। वह खामोश हो गया। वेलान धैर्य से कथा जारी रहने की प्रतीक्षा करने लगा। वह आदर्श चेला था। अधूरी नसीहत या कथा से उसके दिमाग में कोई परेशानी नहीं होती थी। वह इन बातों को जीवन के विधान का अंग समझता था। जब राजू पीठ मोड़कर शान से घाट की सीढ़ियों की तरफ जाने लगा तो वेलान और उसकी बहन भी उसके पीछे-पीछे चल पड़े।

'बरसों पहले मेरी माँ ने जो कहानी मुझे सुनाई थी वह मुझे कैसे याद आ सकती है? हर रोज रात को बापू दुकान बन्द करके जब घर लौटते थे तो हम उनका इन्तज़ार किया

करते थे और माँ हमें कोई न कोई कहानी सुनाया करती थीं। बापू की दुकान आधी रात तक खुली रहती थी। रोज़ शाम को सुदूर गाँवों से बैलगाड़ियों के लम्बे काफिले आया करते थे। इन गाड़ियों में नारियल, चावल और मण्डी में बिकने के लिए किस्म-किस्म का माल भरा रहता था। इमली के पेड़ तले गाड़ियों को खड़ा करके बैलों की गर्दनों पर से जुआ उतार दिया जाता था और गाड़ीवान दो या तीन-तीन करके गपशप करने, खाना खाने और बीड़ी पीने के लिए हमारी दुकान में चले जाते थे। मेरे बापू को उन लोगों से अनाज के दामों, वर्षा, फसलों और नहरों की हालत के बारे में बातें करने में कितना मज़ा आता था। वे लोग पुरानी मुकद्दमेबाजियों का ज़िक्र भी किया करते थे। उनकी बातचीत में बार-बार मजिस्ट्रेटों का, हलफनामों का, गवाहों का, अपीलों का ज़िक्र आता था, बीच-बीच में हँसी-ठहाकों की आवाज़ें आती थीं। कानून के किसी हास्यास्पद नुक्ते या खामी की स्मृति उन्हें गुदगुदा देती थी। मेरे पिता इन लोगों की सोहबत में खाना-पीना और सोना तक भूल जाते थे। मेरी माँ कई बार मुझे यह देखने के लिए दुकान में भेजती थीं कि पिता को घर आने के लिए राज़ी किया जा सकता है या नहीं। वे बड़े गर्ममिज़ाज आदमी थे और अगर उनकी बातों में कोई दखल देता तो वे क्या कर बैठते इसका कोई ठिकाना नहीं था। इसलिए मेरी माँ मुझे समझा-बुझाकर भेजतीं कि मैं जाकर उनका मूड देखूं और फिर शिष्ट स्वर में उनसे कहूँ कि वे घर आकर खाना खा लें। मैं दुकान की दहलीज पर खड़ा खाँसता-खखारता रहता, ताकि बापू की नज़र मुझपर पड़ जाए, लेकिन वे बातचीत में इतने बेसुध रहते कि उन्हें मेरी तरफ आँख उठाकर देखने की फुर्सत भी न मिलती। मैं भी उनकी बातचीत में खो जाता, हालाँकि बातचीत का एक भी शब्द मेरे पल्ले नहीं पड़ता था। थोड़ी देर बाद रात के सन्नाटे में मेरी माँ की मुलायम आवाज़ सुनाई देती थी, "राजू! राजू!" और मेरे पिता बातों के बीच सिर उठाकर मेरी तरफ देखते और कहते, "जाकर अपनी माँ से कह दो, वे मेरा इन्तज़ार न करें। कटोरे में मुट्ठी-भर चावल और रायता रख दें। नींबू के अचार का एक ही टुकड़ा रखें। मैं देर से लौटूंगा।" हफ्ते में पाँच दिनों तक यही फार्मूला चलता था और वे हमेशा साथ में यह वाक्य जोड़ देते थे, "आज रात सचमुच मुझे भूख नहीं है।" और मेरा ख्याल है, इसके बाद वे साथियों से स्वास्थ्य की समस्याओं पर चर्चा छेड़ देते थे। लेकिन मैं वहाँ रुके बगैर फौरन घर की तरफ चल देता। दुकान की रोशनी और हमारे घर की दहलीज़ में रखी हुई लालटेन की मद्धम लौ के बीच सिर्फ दस गज का फासला था, लेकिन वहाँ से गुज़रते वक्त मेरा शरीर ठण्डे पसीने से तर हो जाता था। मुझे लगता कि जंगली जानवर और भूत-प्रेत अंधेरे से निकलकर मुझपर टूट पड़ेंगे। मेरी माँ दहलीज़ के पास आकर कहतीं, "उन्हें भूख नहीं है न? अब उन्हें रात-भर गाँव के लोगों के साथ बैठकर गपबाज़ी करने का बहाना मिल गया। आकर वे मुश्किल से एक घण्टा सोएंगे और किसी बेवकूफ मुर्गे की बांग के साथ ही उठ जाएँगे। उनकी सेहत इसी तरह चौपट हो जाएगी।" मैं माँ के पीछे-पीछे रसोई में चला जाता। वह फर्श पर अपनी और मेरी थाली पास-पास रखकर पतीले में से चावल परोस देतीं और हम दीवार में एक कील से टंगी ढिबरी की धुआँ-भरी रोशनी में बैठकर खाना खत्म करते। माँ सामने वाली कोठरी में मेरे लिए एक चटाई बिछा देतीं, जिस पर लेटकर मैं सो जाता। वे मेरे सिरहाने बैठकर पिता का इन्तज़ार करती रहतीं। माँ के सामीप्य में मुझे एक अवर्णनीय सुख की अनुभूति होती। मैं उस सामीप्य का लाभ उठाने के

लिए झूठमूठ शिकायत करता, "मेरे बालों में कोई चीज़ चल रही है।" माँ मेरे बालों में उंगलियाँ फेरतीं और गर्दन खुजलातीं। मैं फिर हुक्म जारी करता, "कोई कहानी सुनाओ।" माँ फौरन कहानी शुरू कर देतीं, "बहुत दिन पुरानी बात है, देवक नाम का एक आदमी था..." रोज़ रात को यह नाम सुनने में आता था। देवक हीरो या सन्त किस्म का आदमी था। उसके कारनामों की भूमिका समाप्त होने से पहले ही मुझे नींद आ जाती।'

राजू घाट की सीढ़ी पर बैठकर सुबह की धूप में चमचमाती हुई नदी की धार को देखने लगा। हवा की ठंडक ने उसके मन में एकान्त पाने की इच्छा जगा दी। वेलान अपनी बहन के साथ धैर्यपूर्वक निचली सीढ़ी पर बैठा था–दोनों जने डाक्टर के कमरे में बैठे प्रतीक्षाकुल मरीज़ों की तरह मालूम हो रहे थे। राजू के मन को अनेक व्यक्तिगत समस्याएँ परेशान कर रही थीं। अचानक यह सोचकर कि वेलान उस पर अपनी ज़िम्मेदारियाँ थोप रहा है, उसने साफ-साफ कह दिया "वेलान, मैं तुम्हारी समस्याओं के बारे में नहीं सोचना चाहता–इस वक्त समय नहीं है।"

"क्या मैं इसका कारण जान सकता हूँ?" वेलान ने विनीत स्वर में पूछा।

"बस कह जो दिया" राजू ने निश्चयात्मक स्वर में कहा।

"श्रीमान, मैं फिर कब आपको कष्ट दूँ?"

राजू ने शान से जवाब दिया, "जब उसका समय आए।" बात समय की सीमा से निकलकर अनन्त में विलीन हो गई। वेलान ने इस फैसले को स्वीकार कर लिया और जाने के लिए उठ खड़ा हुआ। राजू को उसपर तरस आया। वह खाद्य सामग्री के लिए कृतज्ञ था, इसलिए उसने वेलान को सन्तुष्ट करने के लिए पूछा, "तुम अपनी जिस बहन का ज़िक्र कर रहे थे, क्या यह वही लड़की है?"

"हाँ श्रीमान, वही लड़की है।"

"मैं तुम्हारी समस्या को समझता हूँ, लेकिन उस पर और विचार करना चाहता हूँ। हम ज़बर्दस्ती कोई समाधान नहीं निकाल सकते। हर समस्या अपना पूरा वक्त लेती है, समझे।"

"जी श्रीमान, जी श्रीमान," वेलान ने उंगलियों से अपना मस्तक छूकर कहा, "यहाँ जो लिखा है वही होगा। हम लोग उसे रोक भी कैसे सकते हैं?"

"हम किस्मत को बदल तो नहीं सकते, लेकिन समझ ज़रूर सकते हैं," राजू ने शान से कहा। "और ठीक से समझने के लिए समय की ज़रूरत है।" राजू को लगा जैसे उसके पंख उग आए हैं और थोड़ी देर बाद उसे महसूस हुआ कि जैसे वह हवा में उड़कर प्राचीन मन्दिर के कलश पर जा बैठेगा, उसे किसी बात पर हैरानी नहीं हो रही थी। अचानक उसके मन में यह सवाल उठा, 'मैंने कैद काटी है या मेरा पुनर्जन्म हुआ है?' वेलान की उद्विग्नता शान्त हो गई और अपने गुरु के मुख से इतनी सारी बातें सुनकर उसे मन ही मन गर्व महसूस होने लगा। उसने अर्थपूर्ण दृष्टि से अपनी जटिल बहन की तरफ देखा। बहन ने शर्म से सिर झुका लिया। राजू टकटकी बाँधे लड़की की तरफ देखता हुआ बोला, "जो होना है, वह होकर रहेगा, धरती या आकाश की कोई शक्ति उसे रोक नहीं सकती जैसे कोई इस नदी का रुख नहीं बदल सकता।"

दोनों जने नदी की तरफ देखने लगे, मानो उसी में उनकी समस्याओं का समाधान निहित हो और फिर वहाँ से जाने लगे। राजू ने उन्हें नदी पार करके दूसरे किनारे पर चढ़ते हुए देखा। जल्दी ही वे आँखों से ओझल हो गए।

2

‘हमारे घर के सामने खेत पर बड़ी हलचल मची थी। हर रोज़ सुबह शहर से नये लोगों का दल आता और रात तक खेत में जुटा रहता। हम लोगों ने सुना कि वे लोग रेल की लाइन तैयार कर रहे थे। जब खाना खाने के लिए वे बापू की दुकान में आते तो बापू उत्सुक भाव से पूछते, “यहाँ ट्रेनें कब से आना शुरू होंगी?” अगर वे अच्छे मूड में होते तो जवाब देते, “क्या पता, छह या आठ महीने लग जाएं,” अगर बुरे मूड में होते तो कहते, “ऐसे सवाल मत पूछो! इसके बाद तुम हुक्म दोगे कि हम तुम्हारी दुकान के सामने इंजन लाकर खड़ा करें।” फिर वे संजीदा हँसी हँसने लगते।

‘ काम तेज़ी से जारी था। इमली के पेड़ के नीचे मेरी खेल-कूद की आज़ादी कुछ हद तक खत्म हो गई, क्योंकि अब वहाँ ट्रक आकर खड़े होने लगे। मैं किसी ट्रक में चढ़कर खेलने लगता। मेरी तरफ ध्यान देने की फुर्सत किसी को नहीं थी। सारा दिन मैं ट्रकों के भीतर घुसा रहता और मेरे कपड़ों में सुर्ख रोड़ी के दाग लग जाते। ज़्यादातर ट्रक लाल रोड़ी लेकर आते थे, खेत के एक कोने में जिसकी ढेरी लगाई जा रही थी। मेरे लिए यह दृश्य बड़ा लुभावना था। इस टीले पर खड़े होकर मैं दूर-दूर तक के स्थानों को देख सकता था। वहाँ से मेप्पी पहाड़ियों की धुँधली रेखाएँ भी नज़र आती थीं। मैं भी पुरुषों की तरह व्यस्त हो जाता। मैं सारा दिन उन मजदूरों के संग गुज़ारता जो रेल की लाइन बिछा रहे थे, उनकी बातें सुनता और उनकी हँसी-दिल्लगी में भाग लेता। लकड़ी के स्लीपर और लोहे की चीज़ों से लदे और बहुत-से ट्रक वहाँ आए। हर ओर अनेक प्रकार के सामान के अम्बार लग गए। मैं लोहे के छोटे-छोटे टुकड़े, ढिबरियाँ और पेंच जमा करने लगा और मैंने इस खज़ाने को माँ के बड़े बक्स के कोने में छिपाकर रख दिया। जहाँ माँ की पुरानी रेशमी साड़ियों के बीच, जिन्हें वे कभी नहीं पहनती थीं, मुझे अपनी चीज़ें रखने की इजाज़त थी।

‘अपनी गायों को चराने वाला एक लड़का टीले के नीचे उस जगह पर पहुँचा जहाँ मैं अकेला अपने-आप कोई खेल खेल रहा था। उसकी गायें टीले के नीचे घास चर रही थीं, जहाँ मजदूर काम कर रहे थे और उस लड़के की इतनी जुर्रत कि वह ढलान पर चढ़ा हुआ वहाँ तक आ पहुँचा था, जहाँ मैं खेल रहा था। मेरे मन में यह भाव पैदा हो गया था कि मैं ही रेल का स्वामी हूँ और मैं उस जगह पर किसी अनधिकारी व्यक्ति का प्रवेश बर्दाश्त नहीं कर सकता था। मैंने गुस्से से चिल्लाकर उस लड़के से कहा, “यहाँ से चले जाओ!”

‘ “क्यों?” उसने पूछा, “मेरी गायें यहाँ पर हैं, मैं उनकी रखवाली करता हूँ।”

‘ “अपनी गायों को लेकर फौरन भाग जाओ, नहीं तो वे रेल के नीचे कट जाएंगी, क्योंकि रेल बस अब आने ही वाली है।”

‘ “कट जाने दो, तुम्हें क्या पड़ी है?” उसने कहा। इस बात पर मुझे इतने ज़ोर का

गुस्सा आया कि मैं चीखकर, "कुतिया के...," जैसी नई सीखी गालियाँ बकता हुआ उस पर झपटा। मेरे हमले का जवाब देने की बजाय वह लड़का गुहार मचाता हुआ भागकर मेरे पिता के पास पहुँचा, "तुम्हारा बेटा मुझे गन्दी-गन्दी गालियाँ दे रहा है।" यह सुनकर मेरे पिता फौरन उठ भागे। मेरा दुर्भाग्य! मैं जहाँ खेल रहा था, वहाँ वे क्रोध से तमतमाते हुए पहुँचे। "तुमने इस लड़के को क्या कह के पुकारा था?" मैंने गाली को न दोहराने की अक्लमन्दी दिखाई। मैं चुपचाप खड़ा आँखें झपकाता रहा। इस पर उस लड़के ने वे सब गालियाँ हू-ब-हू दोहराकर बताईं, जो मैंने उसे दी थीं। सुनकर मेरे पिता अप्रत्याशित रूप से उग्र हो गए। उन्होंने अपने पंजे से मेरी गर्दन पकड़कर मुझे झकझोरते हुए पूछा, "कहाँ से सीखी तूने ये गालियाँ?" मैंने रेल की पटरी पर काम करते हुए मजदूरों की ओर इशारा किया। उन्होंने उनकी ओर नज़र उठाकर देखा, फिर एक क्षण खामोश रहकर बोले, "अच्छा, तो यह बात है? अब तुम्हें गालियाँ और गन्दी बातें सीखने के लिए आवारा घूमने की इजाजत नहीं मिलेगी। कल से तुम रोज स्कूल जाया करोगे, समझे?" "बापू!..." मैं चिल्लाया। उन्होंने बहुत कड़ी सज़ा का फैसला सुनाया था। वे मुझे एक ऐसी जगह से हटाकर जिसे मैं प्यार करता था, उस जगह भेजना चाहते थे जिससे मैं नफरत करता था।

'स्कूल जाने से पहले घर में रोज हंगामा-सा मच जाता। माँ मुझे तड़के ही खिला-पिलाकर तैयार कर देतीं और एल्यूमीनियम के डिब्बे में दोपहर के लिए नाश्ता बनाकर रख देतीं। वे बड़ी सावधानी से एक बैग में मेरी स्लेट और किताबें रखकर उसे मेरे कन्धे पर लटका देतीं। मुझे साफ धुले निकर और कमीज पहनाकर मेरे बालों की कंघी की जाती, जिससे मेरी घुंघराली लटें पीछे गर्दन पर ज़मा हो जातीं। शुरू के कुछ दिनों तक तो मुझे यह देखभाल बहुत पसन्द आई, लेकिन बाद में मुझे इससे चिढ़ हो गई। मुझे यह पसन्द था कि मैं घर पर रहूँ और कोई मेरी देखभाल न करे, बजाय इसके कि लोग मेरी देखभाल करें और मुझे स्कूल भेजा जाए। लेकिन मेरे पिता कठोर अनुशासन के पाबन्द थे, शायद उनमें अहंकार भी था और वे लोगों के सामने गर्व से यह कहना चाहते थे कि उनका बेटा स्कूल जाता है। हर रोज़ सुबह जब तक मैं सही-सलामत सड़क पर नहीं पहुँच जाता था, वे मेरी हर गतिविधि का निरीक्षण करते थे। अपनी दुकान में बैठे-बैठे वे थोड़ी देर के बाद आवाज़ देकर पूछते थे, "लड़के, तू यहीं है या चला गया है?"

'स्कूल का लम्बा रास्ता मुझे पैदल ही तय करना पड़ता था। स्कूल से मेरे घर की तरफ आने वाला कोई लड़का नहीं था। मैं रास्ते-भर अपने से बातें करता रहता, रुककर राहगीरों को, मरियल चाल से चलने वाली किसी देहाती बैलगाड़ी को या किसी दरार में घुसते हुए किसी हरे टिड्डे को देखने में व्यस्त रहता। मेरी चाल इतनी सुस्त थी कि जब मैं बाज़ार की गली में पहुँचता तो उस वक्त मेरे सहपाठी सम्मिलित स्वर में अपना सबक याद कर रहे होते थे, क्योंकि हमारे बुड्ढे मास्टर साहब लड़कों से ज़्यादा से ज़्यादा शोर मचवाने में विश्वास करते थे। मालूम नहीं, किसकी सलाह से मेरे पिता ने मुझे वहाँ दाखिल करवाया था, क्योंकि फैशनेबल अल्बर्ट मिशन स्कूल हमारे घर के करीब ही था। अपने को अल्बर्ट मिशन स्कूल का विद्यार्थी कहने में मैं गर्व महसूस कर सकता था लेकिन पिताजी अकसर कहा करते थे, "मैं अपने लड़के को वहाँ नहीं भेजूंगा; लगता है वे लोग हमारे लड़कों को

ईसाई बनाने की कोशिश करते हैं और सारा वक्त हमारे देवी-देवताओं का अपमान करते रहते हैं।'' पता नहीं यह बात बापू के दिमाग में कैसे बैठ गई थी। खैर, जो भी हो, उनका खयाल था कि मैं जिस स्कूल में जाता था, वह दुनिया का सबसे शानदार स्कूल था। वे अकसर गर्व से कहा करते थे, ''बहुत-से लड़के इस बुड्ढे मास्टर से पढ़कर अब मद्रास में बड़े अफसर, कलक्टर वगैरह बन गए हैं...'' यह पिताजी की कोरी कल्पना या बुड्ढे मास्टर की ईजाद थी। इस स्कूल को शानदार संस्था कहना तो दूर रहा, उसे किसी माने में स्कूल भी नहीं कहा जा सकता था। दरअसल यह 'चबूतरा' स्कूल था क्योंकि एक भद्र व्यक्ति के घर के चबूतरे पर क्लासें लगती थीं। कबीर कूचे में एक पुराना तंग-सा मकान था, जिसके सामने सीमेंट का एक चबूतरा बना था जिसके नीचे गली की गन्दी नाली बहती थी। हर रोज़ सुबह बुड्ढा मास्टर मेरी उम्र के बीस लड़कों को इकट्ठा करके खुद एक कोने में तकिये का सहारा लेकर बैठ जाता था और बेंत हिलाता हुआ लड़कों को डाँटता रहता था। सारी क्लासें एक साथ लगती थीं और बुड्ढा मास्टर बारी-बारी से सब टोलियों की तरफ ध्यान देता था। मैं सबसे छोटी क्लास में था। हम लोगों को वर्णमाला और गिनती सिखाई जाती थी। मास्टर हम लोगों से वर्णमाला ऊँचे स्वर में पढ़वाता था, फिर स्लेटों पर हम लोग अक्षरों की नकल करते थे, मास्टर हर लड़के की स्लेट देखता था और बार-बार गलतियाँ करने वालों को डाँटता और बेंत मारता था। उसे गालियाँ देने की आदत थी। मेरे पिता मुझे रेलवे लाइन पर काम करने वाले मजदूरों की भाषा से बचाना चाहते थे, लेकिन मुझे इस बुड्ढे के पास भेजकर उन्होंने कोई खास अक्लमन्दी नहीं दिखाई थी। वह विद्यार्थियों को गधा कहता था और बड़ी सतर्कता से उनकी सातों पुश्तों का बखान करता था।

'उसे न सिर्फ हमारी गलतियों से बल्कि हमारी मौजूदगी से ही चिढ़ थी। छोटे फूहड़ लड़कों को देखकर, जो हर वक्त हिलते-डुलते रहते थे, मास्टर को बड़ी बेचैनी होती थी। इसमें शक नहीं कि हम लोग चबूतरे पर बहुत शोर मचाते थे। खाना खाने, कुछ देर सुस्ताने या दर्जनों छोटे-मोटे कामों के लिए जब वह घर जाता था तो हम एक-दूसरे पर लुढ़कने लगते थे, खूब चीखते-चिल्लाते थे, एक-दूसरे को नोचते थे और लड़ते थे या जाकर मास्टर के घर में ताक-झाँक करते थे। एक बार हम छिपकर उसके घर में घुस गए, सब कमरों को पार करने के बाद, हम रसोईघर में पहुँचे जहाँ चूल्हे के सामने बैठा मास्टर कुछ पका रहा था। ''ओह! मास्टर, तुम्हें खाना पकाना भी आता है!'' हम खिलखिलाकर हँस पड़े। पास खड़ी एक औरत भी हँसने लगी। मास्टर ने गुस्से से हमारी तरफ देखकर हुक्म दिया, ''निकल जाओ लड़को यहाँ से! यहाँ मत आना! यह तुम्हारी क्लास का कमरा नहीं है।'' हम लोग उछलकूद मचाते हुए अपनी जगह वापस आ गए। बाद में मास्टर ने इतनी ज़ोर से हमारे कान उमेठे कि हम लोग दर्द से चिल्ला उठे। उसने कहा, ''मैंने तुम शैतानों को सभ्य बनाने के लिए यहाँ भर्ती किया है, लेकिन तुम हो कि...'' उसने हमारे गुनाहों और हमारी शरारतों का सूचीपत्र बखानना शुरू कर दिया। हम लोगों ने जब पश्चाताप प्रकट किया तो उसका दिल पसीज गया। उसने कहा, ''खबरदार जो आज के बाद मैंने तुम्हें उस दहलीज से पार जाते देखा। अगर तुम भीतर घुसे तो मैं पुलिस के हवाले कर दूँगा।'' बस मामला यहीं खत्म हो गया। हम लोगों ने कभी बुड्ढे मास्टर के घर में ताक-झांक नहीं की, लेकिन जब भी वह पीठ मोड़ता, हम चबूतरे के नीचे बहने वाली नाली की तरफ देखने लगते, कापियों में

से पन्ने फाड़कर कश्तियाँ बनाते और नाली में बहा देते। देखते ही देखते कश्तियों की रेस शुरू हो जाती। हम पेट के बल लेट कर नाली में बहती कश्तियों को देखने लगते। मास्टर हमें चेतावनी देता, "अगर इस नाली में गिरे तो सीधे सरयू नदी में जा पहुंचोगे। फिर क्या मैं तुम्हारे बाप को तुम्हें ढूंढने वहां भेजूंगा?" इस भयंकर कल्पना से बूढ़ा मास्टर हंसने लगता। हम लोगों में उसकी दिलचस्पी एक रुपया महीना फीस और खाने-पीने की चीज़ों तक ही सीमित थी। मेरे पिताजी हर महीने उसे गुड़ की दो भेलियां भेजते थे। बाकी लड़के चावल, सब्जियाँ और समय-समय पर उसकी फरमाइश के अनुसार और दूसरी चीज़ें भी घर से लाते थे। रसोईघर में जब कोई चीज़ चुक जाती तो वह किसी एक लड़के को बुलाकर कहता, "अगर तुम अच्छे लड़के हो तो भाग कर अपने घर से थोड़ी-सी चीनी ले आओ। ज़रा देखूं तो तुम कितने फुर्तीले हो।" ऐसे मौकों पर मास्टर अपना काम निकालने के लिए मीठे स्वर में बोलता था और उसकी सेवा करके हमें गर्व महसूस होने लगता था। हम जाकर माँ-बाप से लड़-झगड़कर मास्टर के लिए चीज़ें लाते थे और उसकी सेवा का फख्र हासिल करने के लिए आपस में होड़-सी लग जाती थी। हमारे माँ-बाप भी मास्टर के प्रति सदैव कृपालु रहते थे। शायद वे इसलिए उसके कृतज्ञ थे क्योंकि वह तड़के से लेकर शाम के चार बजे तक हमारी निगरानी करता था। उसके बाद हम लोग उछल-कूद मचाते हुए घर आते थे। ऊपर से दिखाई देनेवाली मारपीट और उद्देश्यहीनता के बावजूद, मेरा ख्याल है कि बुड्ढे मास्टर की निगरानी में हम लोगों ने काफी तरक्की की क्योंकि साल के भीतर ही मैं बोर्ड के हाईस्कूल की पहली जमात के काबिल बन गया था, कोर्स की किताबों से भी ज़्यादा भारी-भरकम किताबें पढ़ लेता था, बिना किसी की मदद के बीस तक के पहाड़े याद कर चुका था। बोर्ड स्कूल हाल में ही खुला था। बूड्ढा मास्टर मुझे वहाँ दाखिल कराने अपने साथ ले गया था। हम तीन लड़कों को वह क्लास में बिठाकर आया था और लौटने से पहले उसने हमें आशीर्वाद भी दिया था। उसकी सहृदयता देखकर हम चकित रह गए थे।'

वेलान चमत्कारपूर्ण घटना का समाचार सुनाने के लिए व्याकुल था। वह हाथ जोड़कर राजू के सामने खड़ा हो गया और बोला, "महाराज, सब कुछ ठीक हो गया है।"

"मुझे बड़ी खुशी है। लेकिन कैसे?"

"बिरादरी के सामने आकर मेरी बहन ने अपनी गलती कबूल कर ली। वह राज़ी ..... हो गई है ।" वेलान ने सारी बात बताई, "सुबह के वक्त जब बिरादरी के लोग जमा हुए तो अचानक लड़की आकर सीधी खड़ी हो गई और सबकी ओर देखकर बोली, 'पिछले दिनों मैंने बहुत गलतियाँ की हैं। अब मेरा भाई और दूसरे बुज़ुर्ग जो कहेंगे, वही करूंगी। वे जानते हैं कि किस बात में हमारी भलाई है।' पहले तो मुझे अपने कानों पर विश्वास ही न हुआ। यह जानने के लिए कि मैं कहीं सपना तो नहीं देख रहा, मैंने अपने शरीर में चुटकी काटी। उस लड़की की वजह से हमारे घर में अंधेरा छा गया था। जायदाद के बंटवारे के मुकदमें के बाद इतनी बड़ी आफत कभी नहीं आई थी। देखिए इस लड़की से हम लोग बहुत स्नेह करते हैं और जब वह खाना-पीना छोड़कर, मैले-कुचैले कपड़े पहने अंधेरी कोठरी में कुढ़ती रहती थी तो हमें बहुत दु:ख होता था। हमने उसे खुश करने की बहुत कोशिशें कीं। आखिर लाचार होकर हमें चुप होना पड़ा। उसकी वजह से हम सभी लोग बहुत परेशान थे। आज सुबह हमारे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसने बालों में तेल डालकर उन्हें सलीके से गूंथा था और

चोटियों में फूल लगाए थे। वह बड़ी खुश नज़र आ रही थी। कहने लगी, 'मैंने इतने दिन आप लोगों को तंग किया। आप सब मुझे माफ कर दीजिए। मैं बड़े-बूढ़ों का कहना मानूँगी।' हम लोग सुनकर हैरान रह गए। फिर हमने पूछा, तुम अपने चचेरे भाई के साथ शादी करोगी न? वह चुपचाप सिर झुकाए खड़ी रही। मेरी बीवी ने एकान्त में ले जाकर उससे पूछा, 'क्या हम लड़केवालों के यहां सन्देशा भिजवा दें?' तो वह राज़ी हो गई। हम लोगों ने यह शुभ समाचार बिरादरी को बता दिया और जल्दी ही हमारे घर में शादी का आयोजन होगा। पैसा, कपड़ा, गहना सब तैयार है। कल सुबह मैं बाजेवालों को बुलाकर तय कर लूँगा। ज्योतिषी से मैंने शादी का मुहूर्त भी निकलवा लिया है और उसने कहा है कि ये दिन बड़े शुभ हैं। मैं नहीं चाहता कि इस शादी में क्षण-भर की भी देरी हो।"

"इस डर से कि लड़की कहीं फैसला न बदल डाले?" राजू ने पूछा। वह जानता था कि वेलान इतना उतावला क्यों है? इसके उतावलेपन का अनुमान लगाना कठिन नहीं था। लेकिन वेलान प्रशंसा से गद्गद हो उठा और पूछने लगा, "महाराज आपने मेरे दिल की बात कैसे भांप ली?" राजू खामोश रहा। अजब खतरनाक हालत थी। उसके ज़बान खोलते ही वेलान प्रशंसा से गद्गद हो उठता था। राजू अपनी खिल्ली उड़ाने के मूड में था। उसने तेजी से कहा, "मेरे अनुमान में कोई असाधारण बात नहीं है।" वेलान ने फौरन जवाब दिया, "आपको ऐसा कहना शोभा नहीं देता, महाराज! आप जैसे महान आदमी के लिए यह आसान बात होगी, लेकिन हम जैसे क्षुद्र लोग कभी भी दूसरों के विचारों का अनुमान नहीं लगा सकते।" वेलान का ध्यान दूसरी तरफ हटाने के लिए राजू ने पूछा, "तुम्हें कुछ मालूम है कि दूल्हा क्या सोचता है? क्या वह इस रिश्ते के लिए तैयार है? लड़की की 'न' का उस पर क्या असर पड़ा था?"

"लड़की के राजी होने के बाद मैंने अपने पुरोहित को दूल्हे के पास भेजा था, उसने लौटकर बताया कि लड़का राज़ी है, बीती बातों पर बहस नहीं करना चाहता। जो बीत गया सो बीत गया।"

"सच है, सच है," राजू ने कहा। उसके पास कहने के लिए और कुछ नहीं था, न ही वह ज़्यादा अक्लमन्दी की बात करना चाहता था। आजकल उसे अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से डर लगने लगा था। इसी डर से वह अपनी ज़बान नहीं खोलता था। उसे मौनव्रत की शपथ का ध्यान आया, लेकिन मौन तो और भी ज़्यादा खतरनाक था। अपनी अक्लमन्दी के बावजूद राजू अपनी रक्षा न कर सका। वेलान अपनी समस्याएँ सुलझाने में सफल हो गया। एक दिन वह राजू को अपनी बहन की शादी का निमन्त्रण देने के लिए आया। राजू ने बहुत दलीलें देने के बाद किसी तरह अपना पिण्ड छुड़ाया। वेलान रेशमी कपड़ों से ढंकी हुई बड़ी-बड़ी थालियों में राजू के लिए फल लेकर आया था। राजू ने सोचा कि वह टूरिस्टों को कोई प्राचीन महल या हॉल दिखाते वक्त यह दृश्य प्रस्तुत करेगा।

वह लड़की की शादी में नहीं गया। वह नहीं चाहता था कि लोग उसे भीड़-भाड़ में देखें या उसके इर्द-गिर्द लोग यह देखने के लिए जमा हों कि जिद्दी लड़की का स्वभाव बदलने वाला व्यक्ति कैसा है। लेकिन अलग रहने से भी कोई लाभ नहीं हुआ। वह जानता था कि अगर वह शादी में न गया तो शादीवाले ज़रूर उसके पास आएँगे। देखते-देखते वेलान दूल्हा-दुल्हिन और रिश्तेदारों की भीड़ के साथ मन्दिर में आ गया। मालूम होता था,

खुद लड़की ने लोगों से कहा था कि राजू ने उसका उद्धार किया है। "वे किसी से बात नहीं करते, लेकिन उनकी दृष्टि मात्र से ही इन्सान का कायाकल्प हो जाता है।"

धीरे-धीरे राजू के पास आने वाले लोगों की संख्या बढ़ती गई। दिन-भर खेत में काम करने के बाद वेलान आकर घाट की निचली सीढ़ी पर बैठ जाता था। अगर राजू कुछ कहता था तो वेलान चुपचाप सुनता रहता था, वरना वह राजू के मौन को भी कृतज्ञभाव से स्वीकार करता था। अंधेरा होने पर वह चुपके से उठकर चला जाता था। धीरे-धीरे राजू के पास कुछ लोग नियमित रूप से आने लगे। राजू ने उनकी तरफ ध्यान नहीं दिया, न ही वह उनसे पूछ सकता था कि वे कौन हैं? घाट सार्वजनिक स्थान था और खुद राजू ने जबर्दस्ती वहाँ कब्ज़ा किया था। लोग आकर घाट की सीढ़ी पर बैठ जाते और लगातार राजू की तरफ देखते रहते। राजू को कुछ भी कहने की ज़रूरत नहीं थी। वह एक ही जगह बैठकर नदी की तरफ, परले किनारे की तरफ देखता रहता और यह सोचने की कोशिश करता कि अब उसे कहाँ जाना चाहिए और आगे क्या करना चाहिए। लोग इस डर से कि कहीं राजू की शान्ति में विघ्न न पड़े, खामोश रहते थे। ऐसे मौकों पर राजू को बड़ी बेचैनी होने लगती थी और वह सोचता था कि उन लोगों से जान छुड़ाने का कोई तरीका निकल सकता है या नहीं। दिन-भर करीब-करीब वह अकेला रहता था, लेकिन अपना काम खत्म करने के बाद शाम को गाँव के लोग वहाँ आ जाते थे।

एक दिन शाम को लोगों के आने से पहले ही वह मन्दिर के पिछवाड़े लाल फूलोंवाली एक झाड़ी के पीछे छिपकर बैठ गया। घाट की सीढ़ियों पर से लोगों की आवाज़ें सुनाई दे रही थीं। वे दबे स्वर में बातें कर रहे थे। लोगों ने मन्दिर की परिक्रमा की, फिर वे झाड़ी के नज़दीक से गुज़रे। राजू एक आक्रान्त पशु की तरह दुबककर बैठा था और उसका दिल ज़ोर से धड़क रहा था। वह सांस रोककर वहीं बैठा रहा। उसने सोचा कि लोगों ने अगर उसे वहाँ देख लिया तो वह कहेगा कि वह वहाँ समाधि लगाकर बैठा था, क्योंकि झाड़ी के नीचे उसे मन को एकाग्र करने में सुविधा होती है। खुशकिस्मती से उनकी दृष्टि राजू पर नहीं पड़ी। वे झाड़ी की ओट में खड़े होकर दबे स्वर में बातें करने लगे। एक ने पूछा, "आखिर वे कहाँ गए?"

"वे महान व्यक्ति हैं। कहीं भी जा सकते हैं। उन्हें हजारों काम हो सकते हैं।"

"ओह, तुम नहीं जानते। उन्होंने संसार त्याग दिया है। चिन्तन के सिवा उन्हें और काम नहीं है। कितने दु:ख की बात है कि वे आज यहाँ नहीं हैं।"

"आह, उनके सामने कुछ मिनट बैठने से ही हमारे परिवार में कितना परिवर्तन आ गया, जानते हो? कल रात मेरे चचेरे भाई ने आकर वह प्रॉमिसरी नोट मुझे लौटा दिया। जब तक वह नोट उसके पास था, मुझे लगता था जैसे अपनी गर्दन कटवाने के लिए मैंने खुद उसके हाथों में छुरा पकड़ा दिया था।"

"अब हमें किसी बात से डरने की ज़रूरत नहीं है। यह हमारा सौभाग्य है कि ये महात्मा हमारे बीच रहने के लिए यहाँ आए हैं।"

"लेकिन आज तो वे गायब हो गए हैं। कहीं हमेशा के लिए तो यहाँ से नहीं चले गए?"

"यह हमारा दुर्भाग्य होगा। उनके कपड़े तो अभी भी मन्दिर की ड्योढ़ी में रखे हैं।"

"उन्हें कोई डर नहीं है। कल मैं जो खाना लाया था, उन्होंने खा लिया।"

"इस वक्त तुम जो चीज़ें लाए हो, वहीं रख दो। बाहर घूमकर जब वे यहाँ लौटेंगे, तब उन्हें ज़रूर भूख लगेगी।"

राजू ने मन ही मन उस व्यक्ति की भावना के प्रति कृतज्ञता महसूस की।

"जानते हो, कई बार ये योगी अपनी आत्म-शक्ति के बल पर ही हिमालय की यात्रा कर आते हैं।"

"मेरे ख्याल में वे इस किस्म के योगी नहीं हैं।"

"कौन कह सकता है? इंसान के बाहरी रूप से कई बार हम धोखा खा जाते हैं," किसी ने कहा। इसके बाद सब लोग जाकर घाट की सीढ़ी पर बैठ गए। राजू को उनकी बातचीत सुनाई देती रही। थोड़ी देर बाद वे वहाँ से चले गए। उनके पैरों से नदी में छप्-छप् की आवाज़ होने लगी। किसी ने कहा, "चलो यहाँ से चलें। कहीं ज़्यादा अँधेरा न हो जाए। सुना है नदी के इस हिस्से में एक बुड्ढा मगर रहता है। इसी जगह मेरे एक परिचित लड़के को टखने पकड़कर मगर ने पानी में खींच लिया था।"

"फिर क्या हुआ?"

"दूसरे दिन उसकी लाश निकली।"

दूर से राजू को उनकी आवाज़ें सुनाई दे रही थीं। उसने झाड़ी के कोने से झाँककर देखा, नदी के पार उनकी धुंधली आकृतियाँ अभी भी दिखाई दे रही थीं। उनके ओझल हो जाने तक वह वहीं बैठा रहा। फिर भीतर जाकर उसने लालटेन जलाई। उसे भूख लग रही थी। वे लोग एक पुरानी प्रस्तर मूर्ति के सामने खाने की चीज़ें केले के पत्ते में लपेटकर रख गए थे। राजू का मन कृतज्ञता से भर उठा, और वह मन ही मन प्रार्थना करने लगा कि कहीं वेलान यह न सोचने लगे कि राजू भूख-प्यास से ऊपर है और केवल हवा खाकर ही ज़िन्दा रह सकता है।

अगले दिन नित्य कर्म से निवृत्त होकर उसने नदी में कपड़े धोए और चूल्हा जलाकर कॉफी बनाई। इस समय उसके मन में कोई परेशानी नहीं थी। अपने भविष्य के बारे में उसे आज ही फैसला करना था। या तो वह अपने शहर को वापस चला जाए, जहाँ कुछ दिनों तक लोग उसकी तरफ घूर-घूरकर देखेंगे और मुँह बिचकाकर उस पर हँसेंगे, या फिर वह कहीं और जाकर रहे। लेकिन वह जा कहाँ सकता था! उसने कठिन परिश्रम करके अपनी जीविका कमाने की आदत नहीं डाली थी। उसे अब बिना माँगे ही खाना मिल जाता था। अगर वह कहीं और चला जाए तो भला कौन उसे इस तरह खाना पहुँचाया करेगा। दुनिया में सिर्फ एक ही और ऐसी जगह थी जहाँ उसे इसी तरह खाना मिल सकता था, और वह जगह थी जेल। अब वह कहाँ जा सकता था? कहीं नहीं। दूर पहाड़ियों के ढलानों पर चरती हुई गायों ने इस जगह के वातावरण में एक अलौकिक शान्ति भर दी थी। राजू को अहसास हुआ कि अब वेलान द्वारा दी गई भूमिका को स्वीकार करने के अलावा उसके सामने कोई चारा नहीं था।

इस फैसले के बाद वह शाम को वेलान और उसके दोस्तों से मिलने की तैयारी करने

लगा। वह हमेशा की तरह शान्त और आनन्दमयी मुद्रा में पत्थर की शिला पर बैठ गया। दरअसल उसे परेशानी इस बात की थी कि कहीं उसके मुँह से निकले हर शब्द को लोग चमत्कारपूर्ण न समझने लगें। इसलिए सतर्क होकर उसने मौन धारण करना शुरू कर दिया था। लेकिन अब वह डर दूर हो गया था। उसने तय किया कि वह अपनी भाव-भंगिमा को भरसक चमत्कारपूर्ण बनाने की कोशिश करेगा। अपनी ज़बान से विचारों के मोती बिखेरेगा। चेहरे को तेजस्वी बनाने की कोशिश करेगा और बिना किसी संकोच के लोगों का आध्यात्मिक मार्ग-प्रदर्शन करेगा। इस अभिनय को और भी चमत्कारपूर्ण बनाने के लिए उसने मंच की सज्जा पर पूरा ध्यान दिया। इस उद्देश्य से वह सिल को मन्दिर के भीतरी भाग में ले गया। इससे पृष्ठभूमि अधिक प्रभावशाली बन गई। वेलान और दूसरे लोगों के आने के समय वह भीतर जाकर बैठ गया और बेचैनी से उनका इन्तजार करने लगा। सूर्य अस्त हो रहा था, दीवार पर गुलाबी लालिमा छा गई थी और नारियल के पेड़ों की फुनगियाँ रक्तिम हो उठी थीं। रात को खामोश होने से पहले पक्षियों के स्वर आकाश में गूँज रहे थे। अँधेरा छा गया था। लेकिन वेलान या किसी दूसरे आदमी का वहाँ नामोनिशान नहीं था। उस रात वे लोग नहीं आए। राजू को भूखा रहना पड़ा। यह उसकी मुख्य परेशानी नहीं थी, अभी भी उसके पास कुछ केले बचे थे। मान लो अगर वे लोग कभी न आएं? तब क्या होगा? राजू घबरा उठा। रात-भर वह चिन्तामग्न रहा। उसके पुराने डर फिर लौट आए। शहर लौटने पर उसे अपना बन्धक रखा मकान छुड़वाना पड़ेगा। अपने घर में रहने की जगह पाने के लिए या तो उसे लड़ाई करनी पड़ेगी या घर छुड़वाने के लिए नकद रुपयों का बन्दोबस्त करना पड़ेगा।

वह मन ही मन सोचने लगा कि क्या वह नदी पार करके गाँव में जाकर वेलान को तलाश करे। लेकिन यह कोई शालीन बात नहीं थी। हो सकता है लोग उसे घटिया आदमी समझने लगें और उसकी तरफ से लापरवाह हो जाएं।

सुबह नदी के उस पार एक लड़का भेड़ें चराता हुआ दिखाई दिया। राजू ने ताली बजाकर आवाज़ दी, "इधर आओ।" वह घाट की सीढ़ियों से उतरकर ज़ोर से चिल्लाया, "ओ लड़के, मैं इस मन्दिर का नया पुजारी हूँ। यहाँ आ, तुझे मैं एक केला दूँगा। इधर देख!" उसने हाथ हिलाकर केला लड़के को दिखाया। वह सोच रहा था, शायद यह जोखिमवाला काम है। उसके पास बस सिर्फ यही केला बच रहा था। हो सकता है लड़के के साथ-साथ यह केला भी चला जाए। वेलान को यह पता ही नहीं चलेगा कि राजू को उसकी कितनी सख्त ज़रूरत है। राजू भूख से तड़पकर मर जाएगा और फिर एक दिन लोगों को धूप में पड़ी हुई उसकी सफेद हड्डियाँ मिलेंगी, जो आसपास के खण्डहरों में खो जाएंगी। लड़के ने राजू की आवाज़ सुन ली और वह नदी पार करके राजू के पास आ गया। वह नाटे कद का लड़का था और वह कानों तक भीग गया था। राजू ने कहा, "लड़के, अपनी पगड़ी उतारकर बदन सुखा ले।"

"मुझे पानी से डर नहीं लगता," लड़के ने कहा।

"लेकिन इतना ज़्यादा भीगना तुम्हारे लिए अच्छा नहीं।"

लड़के ने केले के लिए हाथ बढ़ाते हुए कहा, "मैं तैर सकता हूँ। हमेशा तैर सकता हूँ।"

"लेकिन मैंने तुम्हें यहाँ पहले कभी नहीं देखा," राजू ने कहा।

"मैं इस तरफ नहीं आता, आगे जाकर तैरा करता हूँ।"

"इधर क्यों नहीं आते?"

"यहाँ एक घड़ियाल रहता है।"

"लेकिन मैंने तो यहाँ कोई घड़ियाल नहीं देखा।"

"किसी दिन देख लोगे। मेरी भेड़ें वहाँ सामने चरती रहती हैं। मैं यहाँ किसी आदमी को देखने के लिए आया था।"

"क्यों?"

मेरे चाचा ने मुझे भेजा था और कहा था, "उस मन्दिर के सामने भेड़ें हाँककर ले जाना और देखना वहाँ कोई आदमी है या नहीं। इसीलिए मैं आज यहाँ आया था।"

राजू ने लड़के को केला देते हुए कहा, "अपने चाचा से जाकर कहना कि वह आदमी लौट आया है, और उसने सन्देश दिया है कि तुम्हारे चाचा शाम के वक्त यहाँ ज़रूर आएँ।"

राजू ने उस लड़के के चाचा के बारे में पूछताछ नहीं की। वह चाहे कोई भी हो, राजू उसका स्वागत करेगा। लड़का छिलका उतारकर सारा केला एक साथ खा गया और फिर छिलका भी चबाने लगा। राजू ने पूछा, "तुम छिलका क्यों खा रहे हो? बीमार पड़ जाओगे।"

"नहीं, नहीं पड़ूँगा", लड़के ने जवाब दिया। वह मज़बूत इरादे का लड़का मालूम होता था, जिसे मालूम था कि वह क्या चाहता है।

राजू ने अस्पष्ट सलाह दी, "तुम ज़रूर अच्छे लड़के होगे। अब जाओ, और जाकर अपने चाचा से कह देना–"

लड़का चला गया और जाते-जाते राजू को सावधान कर गया, "मेरे आने तक ज़रा इन भेड़ों का ध्यान रखना।" उसने नदी के दूसरे किनारे की तरफ संकेत किया।

3

एक दिन सुबह इमली के पेड़ से दूर स्टेशन की इमारत तैयार हो गई। फौलाद की पटरियाँ धूप में चमकने लगीं। लाल और हरी बत्तियों वाले सिगनल खड़े हो गए; और हमारी दुनिया दो हिस्सों में बँट गई, एक हिस्सा स्टेशन के इस तरफ था, और दूसरा स्टेशन के दूसरी तरफ। सारी तैयारियाँ मुकम्मल हो गई थीं। फुर्सत के वक्त हम लोग आधी मील दूर पुलिया तक रेलवे लाइन के साथ-साथ चलते, और अपने स्टेशन के प्लेटफार्म पर चहलकदमी करते। स्टेशन के अहाते में गुलमोहर का एक पौधा लगाया गया था। हम लोग बरामदे में जाकर स्टेशनमास्टर के कमरे में झाँककर देखते।

'एक दिन हम सब लोगों को छुट्टी दी गई। लोग कह रहे थे, "आज हमारे शहर में ट्रेन आएगी।" स्टेशन को झंडियों और बन्दनवारों से सजाया गया था। शहनाई और बैण्ड बाजे बज रहे थे। रेल की पटरियों पर नारियल फोड़े जा रहे थे। इसी वक्त भक-भक करता हुआ एक इंजन आया, जिसके पीछे दो डिब्बे लगे थे। शहर के बहुत-से बड़े-बड़े लोग वहाँ मौजूद थे। कलक्टर, पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट, म्युनिसपल कमेटी का चेयरमैन और हाथों में हरे रंग के निमन्त्रण-पत्र लिए स्थानीय व्यापारी भी इकट्ठे थे। प्लेटफार्म पर पुलिस का पहरा था और जनता को भीतर जाने की इजाज़त नहीं थी। मुझे लगा कि मेरे साथ धोखा किया गया है। मुझे इस बात का गुस्सा था कि कैसे कोई मुझे प्लेटफार्म पर जाने से रोक सकता था। प्लेटफार्म के सबसे परले सिरे की रेलिंग में से निकलकर मैं भी इंजन का स्वागत करने वालों की भीड़ में शामिल हो गया। शायद मैं इतना छोटा था कि मेरी तरफ किसी का ध्यान न गया। बरामदे में मेज़ें सजाई गई थीं जिनके गिर्द बैठे अफसर लोग जलपान कर रहे थे। इसके बाद कुछ लोगों ने खड़े होकर लेक्चर दिया। पूरे लेक्चर में सिर्फ 'मालगाड़ी' शब्द मेरे पल्ले पड़ रहा था। लेक्चर खत्म होने पर लोगों ने तालियाँ बजाई, बैण्ड बजने लगा, इंजन ने सीटी मारी, स्टेशन की घंटी बजने लगी, गार्ड ने सीटी बजाई और जलपान करने वाले लोग जाकर ट्रेन में बैठ गए। मैं भी उनके पीछे जाना चाहता था, लेकिन पुलिसवालों ने मुझे रोक दिया। ट्रेन चलने लगी और जल्दी ही आँखों से ओझल हो गई। बाहर खड़ी भीड़ को अब प्लेटफार्म पर आने की इजाज़त मिल गई। उस दिन मेरे पिता की दुकान पर इतनी बिक्री हुई, जितनी पहले कभी नहीं हुई थी। हमारे घर के ऐन सामने स्टेशन के पिछवाड़े बने पत्थर के एक छोटे-से मकान में जब स्टेशन मास्टर और एक खलासी आकर रहने लगे, उस वक्त तक मेरे पिता इतने सम्पन्न हो गए थे कि उन्होंने शहर से सामान खरीदकर लाने के लिए एक तांगा और घोड़ा खरीद लिया था। मेरी माँ ने रत्ती भर उत्साह नहीं दिखाया। वे बोलीं, "दो भैंसों को सम्भालना तो मुश्किल हो रहा है, फिर तुमने यह नई इल्लत क्यों पाल ली? घोड़ा लिया है तो उसके लिए दाने का भी बन्दोबस्त करना पड़ेगा।' पिता ने माँ की बात का ब्योरेवार जवाब नहीं दिया। उन्होंने सिर्फ इतना कहा, "तुम्हें इन बातों का

कुछ पता नहीं। मुझे रोज शहर में इतना काम रहता है और अकसर बैंक भी जाना पड़ता है।'' उन्होंने 'बैंक' शब्द पर गर्व से ज़ोर दिया, लेकिन मेरी माँ पर इसका कोई असर न पड़ा।

'अब हमारे अहाते में छप्पर डालकर एक अस्तबल बनाया गया, जिसमें कत्थई रंग का घोड़ा बाँधा जाता था। उसकी देखभाल के लिए मेरे पिता कहीं से एक साईस भी ले आए थे। घोड़ा-तांगा आने के बाद से सारे शहर में हमारी चर्चा होने लगी थी, लेकिन मेरी माँ इससे कभी खुश नहीं हुई। वह इसे मेरे पिता के असाधारण अहंकार का प्रदर्शन समझती थी और पिता के समझाने का उन पर कोई असर नहीं होता था। माँ का ख्याल था कि दरअसल मेरे पिता को इतना काम-काज नहीं रहता। जब भी पिता घर रहते और तांगा बेकार खड़ा रहता तो माँ उन्हें जली-कटी सुनातीं। शायद माँ चाहती थीं कि मेरे पिता हर वक्त तांगे में बैठकर गलियों के चक्कर काटते रहें। शहर में उन्हें मुश्किल से एक घंटे का काम होता था और वे ठीक वक्त पर आकर दुकान चलाते थे। तब पिताजी दिन में कई घंटों तक दुकान को एक दोस्त की देखभाल में छोड़ दिया करते थे। मेरा ख्याल है कि माँ की जली-कटी बातों का उनपर असर होने लगा था, क्योंकि उनका गुस्सा कम हो गया और जब भी तांगा और घोड़ा इमली के पेड़ तले बेकार खड़े रहते या पिताजी देर से घर लौटते तो वे क्षमा-याचना करने लगते। वे अकसर माँ से कहते, ''तुम चाहो तो तांगा लेकर बाज़ार चली जाओ।'' लेकिन माँ इन्कार कर देतीं। ''रोज मुझे कहाँ जाना होता है? हो सकता है तुम्हारे तांगे में बैठकर मैं किसी शुक्रवार को मन्दिर जाऊँ, लेकिन क्या मन्दिर जाने के लिए साल-भर इतना खर्च बाँधना ठीक है? जानते हो, घास और चने का कितना खर्च है?'' माँ के लगातार विरोध से तंग आकर पिता ने घोड़ा बेचने की बात पर गम्भीरतापूर्वक सोचा और उन्हें एक 'विलक्षण' तरकीब सूझी। वे तांगा तुड़वाकर स्प्रिंगदार बैलगाड़ी बनवाना चाहते थे। बाज़ार के फाटक के पास बैठने वाले लुहार ने ऐसी बैलगाड़ी बनाने का वायदा किया था।

'साईस ने इस विचार का मज़ाक उड़ाते हुए मेरे पिताजी को यह यकीन दिलाने की कोशिश की कि लुहार तांगे को मेज-कुर्सी बनाकर छोड़ देगा जो सिर्फ इमली के पेड़ तले रखने के काबिल होगा। ''इसी तरह कोई घोड़े को बैल में बदलने का वादा भी कर सकता है।'' फिर उसने एक ऐसा सुझाव दिया जो मेरे पिता की व्यावसायिक बुद्धि को बहुत अच्छा लगा। ''मैं भाड़े पर इस तांगे को बाज़ार में चलाऊँगा। घोड़े की घास और चनों का खर्चा मेरे जिम्मे रहा। मैं रोज़ आकर आपको दो रुपये दे दिया करूँगा। आप सिर्फ मुझे अपना शेड इस्तेमाल करने दीजिए, शेड का किराया मैं एक रुपया महीने के हिसाब से दे दिया करूँगा और दो रुपये से ज़्यादा जितनी आमदनी होगी वह मेरी होगी।'' यह बड़ा मज़ेदार सुझाव था। मेरे पिता को जिस वक्त भी ज़रूरत पड़ती, तांगा मिल जाता, बिना किसी झंझट के रोज़ किराया भी मिल जाता था। धीरे-धीरे तांगेवाले ने आकर सवारियाँ न मिलने का रोना शुरू किया। हमारे घर के सामने, सांझ के झुटपुटे में मेरे पिता तांगेवाले से बहस करते थे और अपने दो रुपये वसूल करने की कोशिश करते थे। अन्त में मेरी माँ भी झगड़े में हिस्सा लेने लगीं। ''इन लोगों पर भरोसा मत करो। आज मेले के दिन भी यह कहता है कि इसने पैसे नहीं बनाए। हम इसपर कैसे यकीन कर सकते हैं?'' मेरी माँ को यकीन था कि

तांगेवाला अपनी कमाई शराब में फूँक डालता है। मेरे पिता तपाक से कहते, "शराब पीता है तो हमें क्या? हमें इस बात से कोई सरोकार नहीं।" हर रोज यही काण्ड होता था। रात के वक्त तांगेवाला इमली के पेड़ तले खड़ा होकर रिरियाता था। साफ ज़ाहिर था कि वह हमारे पैसे हड़प रहा था। कुछ दिनों के बाद आकर उसने कहा, "घोड़ा बहुत मरियल हो गया है, उससे अब अच्छी तरह भागा नहीं जाता, उसका दिमाग सही काम नहीं करता। बेहतर होगा कि इस घोड़े को बेचकर हम नया घोड़ा खरीद लें क्योंकि मुसाफिर अब कम किराया देते हैं। उन्हें तकलीफ पहुँचती हैं। पहियों के स्प्रिंग भी बदलवाने होंगे।" वह बार-बार सुझाव देता था कि यह तांगा बेचकर नया तांगा खरीदना चाहिए। जब भी मेरी माँ यह बात सुनती तो आग बबूला होकर चिल्लाने लगतीं कि एक घोड़ा और तांगा खरीदकर ही उन्हें काफी तजुर्बा हो गया है। इन सब बातों से तंग आकर मेरे पिता कहते कि उन्होंने खामखाह इल्लत पाल ली है, तांगेवाले ने कहा कि एक आदमी घोड़े और तांगे के लिए सत्तर रुपये देने को तैयार है। मेरे पिता ने बढ़वाकर कीमत सत्तर से पचहत्तर रुपये करवा ली और अन्त में तांगेवाला नकद रुपये लेकर आ गया और खुद तांगा चलाने लगा। मालूम होता था कि इस काम के लिए उसने हमारे पैसों में से काफी रकम बचा ली थी। खैर, तांगे से छुटकारा पाकर हमें खुशी हुई। तांगेवाले ने बड़ी चालाकी से सौदा किया था, क्योंकि जब रेलगाड़ियाँ नियमित रूप से हमारे स्टेशन पर आने लगीं तो हमने देखा कि हमारा तांगा शहर में सवारियाँ भरकर ले जाता था और तांगेवाले को खूब आमदनी होने लगी थी।

"मेरे पिता को रेलवे स्टेशन में दुकान चलाने की इजाज़त मिल गई। वह कितनी शानदार दुकान थी! उसका फर्श सीमेण्ट का था और दीवारों में अल्मारियाँ बनी हुई थीं। इस दुकान में इतनी जगह थी कि जब मेरे पिता झोंपड़ी की पुरानी दुकान का सारा सामान वहाँ ले गए तो भी मुश्किल से एक-चौथाई जगह भर सकी। अल्मारियों के इतने ज़्यादा खाने खाली थे कि उन्हें देखकर मेरे पिता उदास हो जाते थे, उन्हें पहली बार यह एहसास हुआ था कि इनका पहला कारोबार कोई खास ज़्यादा बड़ा नहीं था। मेरी माँ भी नई दुकान को देखने आई थीं और बोलीं, "बस इतने-से सामान के बूते पर तुम मोटरकार और न जाने क्या-क्या खरीदने चले थे।" मेरे पिता ने कभी भी मोटरकार खरीदने का इरादा नहीं प्रकट किया था, लेकिन उनसे झगड़ा करने में माँ को मज़ा आता था। बापू ने क्षीण स्वर में कहा, "क्यों अब उन पुरानी बातों को बीच में घसीट रही हो?" वे सारी स्थिति पर गौर कर रहे थे। "इस जगह को भरने के लिए मुझे कम से कम पाँच सौ रुपये का सामान खरीदना पड़ेगा।" बूढ़ा स्टेशन मास्टर, जो सिर पर हरी पगड़ी बाँधे रहता था और चाँदी की कमानीवाला चश्मा पहनता था, दुकान का निरीक्षण करने आया। मेरे पिता ने स्टेशन मास्टर के प्रति आदरपूर्ण रुख अपनाया। उसके पीछे नीली कमीज और पगड़ी पहने कड़िया खलासी खड़ा था। मेरी माँ विनीत भाव से भीतर घर में चली गई।

'स्टेशन मास्टर सिर तिरछा करके दूरी से इस तरह दुकान को देखने लगा, जैसे कोई कलाकार किसी कलाकृति को देख रहा हो। वफादार खलासी भी स्टेशन मास्टर की हर बात का समर्थन करने के लिए तैयार हो गया। स्टेशन मास्टर ने कहा, "यह सारी जगह सामान से भर जानी चाहिए, वरना ए. टी. एस. आकर तरह-तरह के सवाल पूछेगा और हमारे सभी मामलों में दखल देगा। तुम्हें यह दुकान दिलाने में बड़ी परेशानी उठानी पड़ी

थी...।'' मेरे पिता मुझे दुकान में बैठाकर सामान खरीदने के लिए शहर चले गए। स्टेशन मास्टर ने सलाह दी थी, ''बहुत ज़्यादा चावल और वैसी चीज़ों की नुमाइश की यहाँ ज़रूरत नहीं है...दूसरी दुकान में ये चीज़ें रखी जा सकती हैं? सफर के दौरान मुसाफिर इमली और दालों की माँग नहीं करेंगे,'' मेरे पिता ने स्टेशन मास्टर की हिदायतों का पूरी तरह से पालन किया। अब वह मेरे पिता की नज़रों में ईश्वर बन गया था और मेरे पिता खुशी-खुशी उसके हर हुक्म को बजा लाते थे। अब स्टेशनवाली दुकान में कीलों से केलों के बड़े-बड़े गुच्छे लटकने लगे। मेम्पू सन्तरे, बड़े-बड़े बर्तनों में तली चीज़ें, बोतलों में पिपरमेण्ट की रंगीन गोलियाँ, मिठाइयाँ, डबल-रोटियाँ और बन्ज दिखाई देने लगे। चीज़ों को इतने आकर्षक ढंग से सजाया गया था कि देखते ही भूख लगने लगती थी। अलमारी के बहुत-से खाने सिगरेटों से भरे थे। बापू को हर किस्म के ग्राहक को सन्तुष्ट रखने के लिए पहले से सारा इन्तज़ाम करना पड़ता था। पुरानी झोंपड़ीवाली दुकान पर उन्होंने मुझे बैठा दिया। उनके पुराने ग्राहक अभी भी अपनी आदत के अनुसार वहीं चीज़ें खरीदने और गपशप करने के लिए आते थे, लेकिन मैं उन्हें सन्तुष्ट नहीं कर पाता था। मुकद्दमेबाज़ी और सिंचाई की बातें सुनकर मैं ऊब जाता था। अभी मेरी उम्र छोटी थी, इसलिए मैं उनकी समस्याओं को और उनके कारोबार की बारीकियों को समझने में असमर्थ था। मैं गुमसुम होकर उनकी बातें सुनता रहता। जल्द ही वे भाँप गए कि मैं उनका साथ नहीं दे सकता। वे मुझे छोड़कर मेरे पिता के पास दूसरी दुकान में चले जाते लेकिन वहाँ भी उनकी मुराद पूरी न होती। नई दुकान उन्हें अजब और फैशनेबल मालूम होती और उन्हें अपनापन महसूस न होता।

' कुछ दिनों बाद मेरे पिता विनीत भाव से अपनी पुरानी दुकान पर आकर बैठ गए और उन्होंने मुझे नई दुकान सम्भालने के लिए भेज दिया। जब मलगुड़ी वाला पुल तैयार हो गया, तो हमारी लाइन पर नियमित रूप से गाड़ियाँ आने लगीं। जब स्टेशन मास्टर और नीली कमीज़वाला खलासी दिन में दो-दो गाड़ियों को 'रिसीव' और 'लाइन क्लीयर' देते थे तो देखने में बड़ा मजा आता था। दोपहर की ट्रेन मद्रास से आती थी और शाम की ट्रेन त्रीची से। नई दुकान में मैं बड़ी फुर्ती से काम करता। पाठकों ने अनुमान लगा लिया होगा कि परिवार के कारोबार बढ़ने से मेरी एक आकांक्षा की पूर्ति हुई थी–बिना किसी झंझट के मेरा स्कूल छूट गया था।'

4

कले ने चमत्कार दिखाया। लड़के ने घर-घर जाकर खबर दी कि मन्दिर वाला संत लौट आया है। मर्द, औरतों और बच्चों का एक बड़ा-सा दल गाँव से आया। उनकी एक ही ख्वाहिश थी कि वे टकटकी बाँध उसके चेहरे की तेजस्विता को देखते रहें। बच्चे राजू के गिर्द जमा हो गए और आतंकित भाव से उसे देखने लगे। स्थिति सम्भालने के लिए राजू ने कुछ बच्चों के गालों पर चिकोटियाँ काटीं, इधर-उधर की अनर्थक बातें कीं, यहाँ तक कि वह बच्चों से तुतलाकर भी बोला। लड़कों के पास जाकर उसने शहर के बड़े आदमियों के अन्दाज़ में पूछा, "तुम लोग क्या पढ़ते हो?" लेकिन उन लोगों के सामने उस अन्दाज़ की नकल करना मूर्खता थी, क्योंकि लड़के खिलखिलाकर हँस पड़े और एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। फिर उन्होंने बताया, "हमारे लिए कोई स्कूल नहीं है।"

"तुम लोग दिन-भर क्या करते हो?" राजू ने पूछा। दरअसल उसे उन लोगों की समस्याओं में कोई दिलचस्पी नहीं थी। एक बुजुर्ग ने बीच में टोककर कहा, "आम शहरियों की तरह हम लोग अपने बच्चों को स्कूल में नहीं भेज सकते। उन्हें मवेशी चराने पड़ते हैं।" राजू ने ज़बान तालू से सटाकर नापसन्दगी जाहिर की और अपना सर हिलाया। लोग बड़े व्यथित और परेशान नज़र आने लगे। राजू ने रौब से समझाया, "सबसे पहले लड़कों का फर्ज़ है पढ़ना। इसमें शक नहीं कि उन्हें अपने माँ-बाप की मदद करनी चाहिए लेकिन उन्हें पढ़ाई के लिए भी वक्त निकालना चाहिए..." फिर किसी आकस्मिक प्रेरणा के वशीभूत होकर वह बोला, "अगर इन्हें दिन में पढ़ाई का वक्त नहीं मिलता तो क्यों नहीं वे शाम के वक्त इकट्ठे होकर पढ़ सकते?"

"कहाँ?" किसी ने सवाल किया।

राजू ने मन्दिर के विशाल हाल की तरफ इशारा करते हुए कहा, "यहाँ भी पढ़ाई हो सकती है। आप किसी मास्टर को भी यहाँ बुला सकते हैं। क्या आप लोगों में से कोई स्कूल मास्टर नहीं है?"

"हाँ हाँ," बहुत-से लोग एक साथ बोल उठे।

"उसे मेरे पास भेजिएगा," राजू ने रौब से आदेश दिया, मानों किसी स्कूल की प्रबन्ध समिति का अध्यक्ष गलती करने वाले किसी छोटे मास्टर को बुलवा रहा हो।

अगले दिन दोपहर के वक्त एक दब्बू-सा आदमी, जिसकी पगड़ी के नीचे से सर की चुटिया लहरा रही थी, मन्दिर के हॉल में पेश हुआ। खाना खाकर राजू हॉल के ठण्डे फर्श पर सुस्ता रहा था। एक पुराने खम्भे के पीछे खड़े होकर दब्बू आदमी ने खखारकर अपना गला साफ किया। राजू ने आँखें खोलीं ओर शून्य दृष्टि से उसकी ओर देखा। उस समाज में जहाँ इतने लोग आते-जाते रहते थे, किसी से उसका परिचय पूछने का रिवाज नहीं था।

राजू ने बांह हिलाकर उस आदमी को बैठने का इशारा किया और आँखें मूँदकर फिर सुस्ताने लगा। बाद में जब उसकी नींद खुली तो उसने उस आदमी को वहीं अपने पास बैठे देखा।

"मैं टीचर हूँ," उस आदमी ने कहा। उनींदी हालत में राजू के मन में स्कूल मास्टरों के प्रति जो डर था, सहसा जाग उठा। क्षण-भर के लिए वह भूल गया कि उसका बचपन पीछे छूट गया है। वह उठकर बैठ गया। यह देखकर मास्टर को ताज्जुब हुआ।

उसने कहा, "उठने का कष्ट न कीजिए, मैं और इन्तजार कर सकता हूँ।"

"कोई बात नहीं," राजू ने जवाब दिया। उसका सन्तुलन फिर ठीक हो गया था और वह अपने आसपास की परिस्थितियों के प्रति अधिक सचेत हो गया। उसने एक सरपरस्त के अन्दाज़ में पूछा, "अच्छा तो तुम्हीं वह स्कूल मास्टर हो?"

क्षण-भर सोचने के बाद उसने फिर सहज भाव से पूछा, "गाँव के क्या हाल-चाल हैं?"

मास्टर ने जवाब दिया, "कोई खास बात नहीं हुई। ज़िन्दगी अपने ढर्रे पर चल रही है।"

"तुम इस स्थिति से खुश हो?"

"उससे क्या फर्क पड़ता है? मैं ईमानदारी से भरसक अपना फर्ज़ अदा करने की कोशिश करता हूँ।"

"वरना कोई भी काम करने का क्या फायदा है?" राजू ने पूछा। वह सोचने के लिए वक्त चाहता था। गहरी नींद के बाद अभी उसका दिमाग पूरी तरह से साफ नहीं हुआ था और इस वक्त लड़कों की तालीम उसकी दृष्टि में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं थी। उसने कहा, "खैर जो भी हो, फर्ज तो..."

"मैं भरसक कोशिश करता हूँ," मास्टर ने बचाव के लिए कहा। वह अपनी कमज़ोरी जाहिर नहीं करना चाहता था। आधा घण्टे की बातचीत के बाद मास्टर ने खुद स्थिति को साफ करते हुए कहा, "लगता है कि आप ही ने यह सुझाव दिया है कि लड़कों को रात के वक्त यहाँ इकट्ठा करके पढ़ाना चाहिए।"

"ओह! हैं! हाँ, मैंने यह बात कही तो थी लेकिन इस मामले में फैसला सिर्फ तुम्हीं को लेना चाहिए। जो भी हो, स्वयं अपनी सहायता करना सबसे अच्छी बात है। मैं आज यहाँ हूँ, हो सकता है कि कल मैं यहाँ से चला जाऊँ। यह काम तुम्हीं को करना है। मेरा मतलब है कि अगर तुम्हें स्कूल के लिए जगह की ज़रूरत हो तो तुम इस जगह का इस्तेमाल कर सकते हो।" राजू ने इस तरह हाथ हिलाया मानो वह ग्रामवासियों को कोई उपहार दे रहा हो।

क्षण-भर के लिए मास्टर किसी सोच में पड़ गया और बोला, "लेकिन मुझे पक्की तरह मालूम नहीं..."

अचानक राजू ने पक्का फैसला कर लिया और उसने रौब से दलीलें देनी शुरू कर दीं, "मैं लड़कों को साक्षर और अक्लमन्द देखना चाहता हूँ।" फिर उसने जोश से कहा, "हर आदमी को सुखी और अक्लमन्द बनाना हमारा फर्ज़ है।"

इस परोपकारिता का मास्टर पर बहुत असर पड़ा। उसने कहा, "आपके निर्देशन में मैं

कुछ भी करने के लिए तैयार हूँ।'' राजू ने इस स्थिति को स्वीकार करते हुए कहा, ''मैं तो माध्यम मात्र हूँ। निर्देशन करने वाला तो ईश्वर है।''

इस मुलाकात के फलस्वरूप मास्टर में एक अद्‌भुत परिवर्तन आ गया। अगले दिन वह एक दर्जन बच्चों को लेकर खम्भों वाले हॉल में पहुँचा। बच्चों के माथों पर तिलक लगे थे और रात की खामोशी में उनकी स्लेटों की खड़खड़ाहट सुनाई दे रही थी। मास्टर उन्हें लेक्चर दे रहा था और राजू चबूतरे पर बैठा कृपालु दृष्टि से उन्हें देख रहा था। मास्टर इस बात पर शर्मिन्दा था कि वह सिर्फ एक दर्जन लड़कों को ही जुटा पाया था। ''इन्हें अँधेरे में नदी पार करने से डर लगता है। इन्होंने घड़ियाल के बारे में सुन रखा है।''

राजू ने रौब से कहा, ''अगर मन स्वच्छ है और अन्तरात्मा शुद्ध है तो घड़ियाल तुम्हारा क्या बिगाड़ सकता है?'' यह एक अद्‌भुत भावना थी। उसे आश्चर्य था कि उसके भीतर से कितनी बुद्धिमत्ता की बातें निकल रही थीं। उसने मास्टर से कहा, ''इस बात पर निराश होने की ज़रूरत नहीं कि तुम सिर्फ एक दर्जन बच्चे जुटा पाए हो। अगर तुम सच्चे दिल से इन्हें पढ़ाओगे, तो समझ लो कि तुमने सौ गुना ज़्यादा बच्चों को पढ़ा दिया है।'' मास्टर ने कहा, ''अगर आप गलत न समझें तो मैं एक बात कहूँ। क्या आप कभी-कभी इन बच्चों के सामने भाषण देंगे?'' अब राजू को बच्चों के सामने जीवन और शाश्वतता के विषय में अपने विचार रखने का मौका मिल गया। उसने उन्हें दिव्यता, स्वच्छता, रामायण और महाकाव्यों के पात्रों के विषय में बताया और सब प्रकार की बातें कीं। वह अपनी आवाज़ से सम्मोहित हो गया था। टिमटिमाती रोशनी में बच्चों के ऊपर उठे चेहरों को देखकर उसे लगा कि उसका आकार बढ़ता जा रहा है। इस दृश्य की भव्यता ने सबसे अधिक राजू को प्रभावित किया था।

'अतीत पर गौर करने से मुझे विश्वास हो गया है कि आखिरकार मैं बुद्‌धू बिल्कुल नहीं था। मुझे लगता है कि हम अपनी अक्लमन्दी का सही अनुमान नहीं लगा पाते। मुझे याद है, किस तरह मैं अपने मन को तैयार कर रहा था। स्टेशन की दुकान पर काम करते वक्त मैंने बहुत-सी अच्छी पुस्तकें पढ़ी थीं, मैं रोटी और सोडावाटर बेचा करता था। कई बार स्कूल के बच्चे अपनी किताबें बेचने के लिए मेरे पास आया करते थे। मेरे पिता अपनी दुकान को बहुत बड़ा समझते थे, लेकिन मैं उनके साथ सहमत नहीं था। रोटी, बिस्कुट के बदले में पैसे लेना मुझे बड़ा साधारण और फालतू काम मालूम होता था। मुझे हमेशा यह महसूस होता था कि मैं किसी बेहतर काम के लिए बना हूँ...।

'उसी साल बरसात के मौसम में मेरे पिताजी चल बसे। उनकी मौत अचानक ही आ गई थी। वे रात को देर तक झोंपड़ीवाली दुकान में बिक्री और अपने दोस्तों से बातचीत करते रहे थे। फिर नकदी गिनने के बाद वे घर आए। चावल और दही खाकर सो गए, उसके बाद वे नहीं उठे।

'मेरी माँ ने वैधव्य के अनुकूल अपने को ढाल लिया। पिताजी काफी पैसा छोड़ गए थे, जिससे आसानी से गुजारा हो सकता था। मैं अब ज्यादा वक्त माँ की देखभाल में लगाता था। माँ की रज़ामन्दी से मैंने झोंपड़ेवाली दुकान बन्द कर दी और स्टेशन की दुकान को नये

ढंग से चलाने लगा। मैं पुराने अखबार और पत्रिकाएँ रखने लगा, और स्कूलों की किताबें खरीदने और बेचने लगा। मेरे ग्राहकों की संख्या अधिक नहीं थी लेकिन ट्रेन में सफर करने वाले विद्यार्थियों की संख्या बढ़ने लगी थी। साढ़े दसवाली लोकल गाड़ी में अल्बर्ट मिशन कॉलेज जाने वाले नौजवान भरे रहते थे। यह कॉलेज मलगुड़ी में हाल ही में खुला था। मुझे लोगों से बातें करने का, और उनकी बातें सुनने का शौक था। मुझे ऐसे ग्राहक पसन्द थे जो सिर्फ केला खाने के लिए मुँह नहीं खोलते थे, बल्कि फसलों, कीमतों और मुकद्दमेबाज़ी के सिवा किसी भी विषय पर बातचीत कर सकते थे। पिताजी की मृत्यु के बाद एक-एक करके उनके पुराने दोस्त अदृश्य हो गए, क्योंकि कोई उनकी बात सुनने वाला नहीं था।

' ट्रेनों का इन्तज़ार करने वाले विद्यार्थी मेरी दुकान पर इकट्ठे होते थे। धीरे-धीरे नारियल के ढेर की जगह किताबें इकट्ठी होती गईं। लोग पुरानी और चुराई हुई चीज़ें, हर किस्म की छपी हुई चीज़ें मेरे पास लाकर पटक देते थे। मैं सौदेबाज़ी में पक्का था। खरीदते वक्त उदासीनता का अभिनय करता था और बेचते वक्त बहुत सतर्कता से काम लेता था। कायदे के मुताबिक तो यह गलत कार्य था, लेकिन स्टेशन मास्टर हमारे परिवार का मित्र था। वह और उसके बच्चे मेरी दुकान से बेहिसाब चीज़ें उधार पर ले जाते थे और पढ़ने की सामग्री भी वह मेरी दुकान से मँगवाता था। सौदा लपेटने के लिए पुराने कागज़ की तलाश करते-करते मैंने किताबें बेचनी शुरू कर दी थी; मुझे यह सख्त नापसन्द था कि लोग हाथ में चीज़ें उठाकर ले जाएं। मैं चीज़ों को अच्छी तरह लपेटकर देना चाहता था। लेकिन जब तक मेरे पिताजी का रौब-दाब था, वे कहा करते थे, "अगर कोई अपने साथ कागज़ लाता है तो बेशक चीज़ें लपेटकर ले जाए, मैं तो उसकी चीज़ें लपेटने से रहा। इतना कम मुनाफा होता है कि हम कागज़ का खर्च नहीं उठा सकते, अगर किसी को तेल की ज़रूरत होती है तो वह अपना बर्तन साथ लाए, क्या बर्तन देना भी हमारा ज़िम्मा है?" पिताजी के इस दर्शन को देखते हुए हमारी दुकान में कागज़ की चिप्पी मिलना भी मुश्किल था। पिता की मृत्यु के बाद मैंने नई नीति अपनाई। मैंने दूर-दूर तक यह प्रचार किया कि मुझे रद्दी कागज़ और किताबों की ज़रूरत है। जल्द ही दुकान पर कागज़ों का ढेर लग गया। फुर्सत के वक्त मैं कागज़ों को तरतीब से छाँटता था। जब ट्रेनों का वक्त नहीं रहता था और प्लेटफार्म पर खामोशी छा जाती थी, तो मैं किस्म-किस्म की किताबों के बण्डल खोलकर आराम से बैठकर पढ़ने लगता था और बीच-बीच में खेत में उगे इमली के विशाल पेड़ को देखने लगता था। कुछ किताबें मुझे दिलचस्प मालूम होती थीं, कुछ को पढ़कर मैं उकता जाता था और कुछ को पढ़कर मैं घबरा जाता था और अपनी जगह पर बैठे-बैठे सो जाता था। मुझे ऐसी किताबें पसन्द थी जिनसे मन में नेक विचार पैदा होते थे, या जिनमें आकर्षित करने वाला जीवन-दर्शन रहता था। मैं प्राचीन मन्दिरों, खण्डहरों, नई इमारतों, जंगी जहाज़ों, सिपाहियों और खूबसूरत लड़कियों की तस्वीरों को देखता था, जिनके विचार हर वक्त मेरे दिल में मण्डराते रहते थे। रद्दी कागज़ों से मैंने बहुत कुछ सीखा।'

राजू का भाषण सुनकर बच्चे मन्त्रमुग्ध हो गए थे (यहाँ तक कि मास्टर भी आश्चर्य से मुँह बाए बैठा था)। घर जाकर बच्चों ने वो आश्चर्यजनक बातें अपने माँ-बाप को बताईं जो उन्होंने राजू से सुनी थी। वे अगले दिन फिर वहाँ आकर राजू का भाषण सुनने के लिए

बेचैन थे। जल्द ही बच्चों के माँ-बाप भी बच्चों के साथ आने लगे और उन्होंने क्षमायाचना के स्वर में कहा, "महाराज, बच्चे रात को देर से लौटते हैं, खासतौर पर नदी पार करने में इन्हें डर लगता है..."

राजू ने कहा, "बहुत खूब! बहुत खूब! मैं खुद आपलोगों को यही सुझाव देने वाला था। मुझे खुशी है कि आप लोगों ने इस बात को सोचा। कोई हर्ज नहीं, अगर आप भी अपना मुँह बन्द रखें और कान खुले रखें। आपका भला होगा।" राजू को अक्लमन्दी से भरी यह कहावत सूझी।

बहुत-से लोग राजू को घेरकर बैठ गए। बच्चे बैठे राजू का मुँह ताक रहे थे। मास्टर भी बैठा राजू की तरफ देख रहा था। गाँववाले अपने साथ लालटेनें लाए थे, जिनकी रौशनी से खम्भोंवाला हॉल जगमगा उठा था। मालूम होता था वहाँ कोई भारी सभा होने वाली थी। राजू ने महसूस किया कि वह रंगमंच का अभिनेता है, दर्शक उसका इन्तज़ार कर रहे हैं लेकिन उसके पास बोलने के लिए न कोई पंक्तियाँ हैं न मुद्राएँ हैं। उसने मास्टर से कहा, "तुम बच्चों को कोने में ले जाकर पढ़ाओ। एक लालटेन अपने साथ लेते जाओ।" वह सोच रहा था कि वह अजनबी लड़कों के बारे में हुक्म दे रहा है, जबकि मास्टर यह हुक्म मानने के लिए बाध्य नहीं है। वह ऐसे लम्प की तरफ इशारा कर रहा था जो उसकी निजी सम्पत्ति नहीं थी। मास्टर तो हुक्म मानने के लिए तैयार था, लेकिन लड़के वहीं डटे रहे। राजू ने कहा, "पहले जाकर पढ़ाई करो, फिर मैं आकर तुम लोगों से बातें करूँगा। अभी मैं तुम्हारे बुजुर्गों से कुछ कहना चाहता हूँ। इन बातों में तुम्हें कोई दिलचस्पी नहीं होगी।" बच्चे उठ खड़े हुए और हॉल के कोने में चले गए। वेलान ने साहस बाँधकर कहा, "महाराज, हमें कोई उपदेश दीजिए।" राजू उसकी बात की तरफ ध्यान दिए बगैर चिन्तन की मुद्रा में बैठ गया। वेलान ने कहा, "हम आपकी सद्बुद्धि का लाभ उठाना चाहते हैं।" बाकी लोगों ने भी वेलान का समर्थन किया। राजू उनकी पकड़ में आ गया और सोचने लगा कि ये लोग जिस भूमिका की मुझसे आशा करते हैं, वह मुझे अदा करनी ही पड़ेगी। अब बचने का कोई रास्ता नहीं है। वह सर खपाकर सोचने लगा कि किस प्रसंग से बात शुरू करे। क्या वह मलगुड़ी के दर्शनीय स्थानों के बारे में बात करे या कोई नैतिक उपदेश दे या बताए कि किसी ज़माने में अमुक अच्छे या बुरे व्यक्ति ने अमुक काम करते समय असफलता से व्यग्र होकर ईश्वर से प्रार्थना की इत्यादि, इत्यादि। वह ऊबने लगा था। लगता था, अब वह केवल जेलखाने की ज़िन्दगी और उसके फायदों के बारे में ही अधिकारपूर्वक बातचीत कर सकता था। खास तौर पर ऐसे व्यक्ति के लिए यह विषय सर्वथा अनुकूल था, जिसे लोग गलती से साधु-महात्मा समझ बैठे थे। सब लोग आदरपूर्वक राजू की प्रेरणा की प्रतीक्षा कर रहे थे। उसके जी में आया कि चिल्लाकर, कहे, 'अबे बेवकूफो, मुझे अकेला क्यों नहीं छोड़ते? अगर मेरे लिए खाना लाए हो, तो धन्यवाद, खाना यहीं छोड़कर चले जाओ।' फिर लम्बी सोच-भरी खामोशी के बाद ये शब्द उसके मुँह से निकले, "हर चीज़ का अपना वक्त होता है जिसके लिए इन्तज़ार करना पड़ता है।" अगली कतार में बैठे वेलान और उसके साथी क्षण-भर के लिए परेशान नज़र आए। अभी भी उनकी मुद्रा आदरपूर्ण थी। लेकिन राजू की बात का सिर-पैर उनकी समझ में नहीं आ रहा था। थोड़ी देर खामोश रहने के बाद उसने बड़प्पन की मुद्रा बनाकर कहा, "मैं फिर किसी दिन आप लोगों से बात करूँगा।" एक आदमी ने

सवाल किया, "किसी और दिन क्यों, महाराज?"

"बस, ऐसा ही होगा," राजू ने रहस्यपूर्ण अन्दाज़ में कहा। "मेरी सलाह है कि जब तक बच्चे अपना सबक खत्म न कर लें, आप सब सुबह से लेकर अब तक की अपनी बातों और कामों पर संजीदगी से गौर करें।"

"कौन-सी बातें और कौन-से काम?" इस सलाह से परेशान होकर एक ने पूछा।

"अपनी बातें। आज सुबह से अब तक अपने मुँह से निकले हुए हर शब्द पर गौर करें।"

"मुझे तो ठीक से याद भी नहीं।"

"इसीलिए तो मैं कहता हूँ कि याद करो और गौर करो। जब तुम्हें अपने शब्द ही याद नहीं हैं तो दूसरों के शब्द कैसे याद रहेंगे?"

इस चुटीली उक्ति से श्रोताओं का मनोविनोद हुआ। लोग दबे स्वर में हँसने लगे। हँसी बन्द होने पर राजू ने कहा, "मैं चाहता हूँ, आप सब लोग अपनी मरजी से, स्वतन्त्र रूप से इन बातों पर गौर करें, ताकि आपको जानवरों की तरह न हाँका जाए।"

इस सलाह पर कुछ लोगों ने विनम्र स्वर में अपना मतभेद प्रकट किया। वेलान ने पूछा, "महाराज, यह काम हमसे कैसे होगा? हम खेत जोतते हैं और मवेशियों की देखभाल करते हैं...ये सब तो हमारे बस की बातें हैं, लेकिन ऊँची बातें सोचना हमारे बस में नहीं है। यह मुमकिन नहीं। आप जैसे बुद्धिमान व्यक्तियों को ही ये बातें सोचनी चाहिए।"

"और आप हमें सुबह से कही गई बातों की याद क्यों दिलाना चाहते हैं?"

खुद राजू को इसका जवाब मालूम नहीं था, इसलिए उसने कहा, "अगर आप ऐसा करेंगे तो आपको स्वयं ही इसका कारण मालूम हो जाएगा।" लगता था कि रहस्यपूर्ण उक्तियों में ही महात्मापन निहित था। उसने पूछा, "बिना कोशिश किए ही आप लोग अपनी क्षमताओं को कैसे जान सकते हो?" वह उन मासूम लोगों को धुंधले विचारों की दलदल में और भी गहरा घसीट रहा था। उसके एक भक्त ने शिकायत की, "मुझे तो यह भी याद नहीं है कि मैंने थोड़ी देर पहले क्या कहा था। आदमी के दिमाग में बहुत-सी चीज़ें आती हैं।"

"बिल्कुल ठीक। मैं यही तो चाहता हूँ कि तुम इस कठिनाई को पार करने की कोशिश करो," राजू ने कहा। "जब तक तुम ऐसा नहीं करोगे, इसका आनन्द भी तुम्हें नहीं मिल सकता।" उसने भक्त मण्डली में से तीन जनों को चुनकर उनसे कहा, "तुम लोग कल या किसी और दिन जब यहाँ आओ तो तुममें से हर एक मुझे कम से कम ऐसे छः शब्द दुहराकर बताना जो तुम सुबह से बोलते रहे हो। मैं तुमसे सिर्फ़ छः शब्द ही याद करने को कह रहा हूँ, छः सौ नहीं, "उसने अनुरोधपूर्वक कहा मानो वह भारी रियायत कर रहा हो।

"छह सौ! क्या महाराज कोई आदमी छः सौ शब्द भी याद रख सकता है?" एक ने आश्चर्यपूर्वक कहा।

"हाँ, मैं याद रख सकता हूँ," राजू ने उत्तर दिया। इस पर प्रसंशात्मक स्वर में सबने साधुवाद किया, जिसका राजू अपने को हकदार समझता था। इतने में उसके भाग्य से बच्चे वहाँ आ गए और राजू तुरन्त उठ खड़ा हुआ, मानो कह रहा हो कि 'बस, आज यहीं तक,'

और नदी की तरफ़ चल पड़ा। सारे लोग उसके पीछे-पीछे चल दिए। "इन बच्चों को नींद आ रही होगी। इनको हिफ़ाजत से घर ले जाओ और फिर आना।"

जब दोबारा यह सभा एकत्र हुई तो राजू ने एक निश्चित कार्यक्रम पेश किया। उसने हाथों से ताल देकर एक मधुर लय में भजन गाना शुरू किया, जिसको दर्शक भी आसानी से दुहरा सकते थे। मन्दिर की प्राचीन छत मर्दों, औरतों और बच्चों के समवेत स्वर से गूँज उठी। एक आदमी पीतल के लम्बे चिरागदान ले आया और उसने उनपर रखे दीपक जला दिए। दूसरों ने उनमें तेल भर दिया। कुछ लोग इन दीपकों के लिए सारे दिन बैठे रुई की बत्तियाँ बटते रहे थे। लोग अपने-आप ही विभिन्न देवताओं की छोटी-छोटी फ्रेम में मढ़ी तस्वीरें ले आए थे जिनको उन्होंने हॉल के खम्भों पर टांग दिया था। औरतों के जत्थों ने आकर दिन में ही मन्दिर के फर्श धो-पोंछ दिए थे और उनपर आटे से विभिन्न पैटर्नों के सांतिये काढ़ दिए थे। उन्होंने हर जगह फूल और पत्तियों के बन्दनवार टांग दिए थे। खम्भोंवाले हॉल की कायापलट हो गई। किसी ने हॉल के बीच के चबूतरे को एक रंगीन, मुलायम कालीन से ढंक दिया था और लोगों के बैठने के लिए फर्श पर चटाइयाँ बिछा दी थीं।

राजू ने शीघ्र ही महसूस किया कि अगर वह दाढ़ी रख ले और उसके केश बढ़कर उसकी नाभि तक आ जाएँ तो भक्तों की दृष्टि में उसका सम्मान बहुत बढ़ जाएगा। दाढ़ी-मूंछरहित और महीन कटे बालों वाला सन्त तो लोगों के अनुभव के विपरीत जन्तु होता है। उसने सन्त का यह मेकअप बनाने के लिए साधना की सभी मंज़िलें बड़े धैर्य और बहादुरी से पूरी की, यहाँ तक कि आरम्भ में बालों के चुभने की भी परवाह नहीं की। आखिरकार वह जब उस मंज़िल पर पहुँचा, जब वह विचारमग्न मुद्रा बनाकर अपनी लम्बी दाढ़ी को सहलाने लगा, तब तक उसकी ख्याति और प्रतिष्ठा इतनी बढ़ गई थी जिसकी वह स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकता था। उसके जीवन की व्यक्तिगत सीमाएँ बेमानी हो गई थीं और उसकी सभाओं में इतने लोग जमा होते थे कि मन्दिर के बरामदों और नदी के किनारे तक उन्हें बैठने की जगह न मिलती थी। वेलान और कुछ अन्य लोगों को छोड़कर राजू को अपने असंख्य भक्तों के चेहरे तक याद नहीं थे और न वह यह जानने की परवाह करता था कि वह किससे बात कर रहा है। वह अब दुनिया का बन गया था। उसका प्रभाव असीम था। वह सिर्फ भजन ही नहीं गाता था, या दार्शनिक उपदेश ही नहीं देता था, बल्कि अब बीमार लोगों को दवा-दारू भी बताता था। माताएँ उसके पास उन बच्चों को लेकर आती थीं जिन्हें रात को नींद नहीं आती थी। वह उनका पेट टटोलकर एक जड़ी पीसकर खिलाने का आदेश देते हुए कहता, "अगर इससे बच्चे को आराम न हो तो फिर मेरे पास लाना।" लोगों में यह आस्था पैदा हो गई थी कि वह जिस बच्चे के सर को अपने हाथ से सहला देता है, वह चंगा हो जाता है। खैर, लोग उसके पास अपनी पैतृक सम्पत्ति के बंटवारे के झगड़े लेकर तो आते ही थे। इन कार्यों के लिए उसने दोपहर के बाद के कई घंटे निश्चित कर दिए थे। फिर ऐसा वक्त आया जब वह रोज़ तड़के उठकर जल्दी से नित्य-कर्म से निवृत्त होकर तैयार होने के लिए विवश हो गया, क्योंकि उसके भक्त सवेरे ही आकर उसे घेर लेते थे। उसकी ज़िन्दगी एक कठिन आवर्त में फँस गई थी और जब नदी के किनारे रात-भर के लिए भक्तों का कलरव शान्त हो जाता, तब वह सुख की गहरी सांस लेकर अपनी ओर मुड़ता, स्वयं होने की कोशिश करता और एक साधारण इन्सान की तरह अपना भोजन करता और सो जाता।

5

मुझे लोग 'रेलवे राजू' के नाम से पुकारने लगे। मलगुड़ी स्टेशन पर उतरते ही अजनबी लोग भी मेरा पता पूछते। कुछ लोगों के कपाल की रेखा में लिखा रहता है कि उन्हें एकान्त नसीब नहीं होगा। मेरा ख्याल है कि मैं भी उन्हीं लोगों में से हूँ, हालाँकि मैंने कभी लोगों से परिचय बढ़ाने की कोशिश नहीं की। लेकिन लोग खुद-ब-खुद आकर मुझसे मिलते थे। गाड़ी से उतरकर लोग हमेशा सिगरेट या सोडा खरीदने के लिए मेरी दुकान पर आते, किताब के ढेर को उलटते-पलटते और हमेशा यही सवाल पूछते, "फलां जगह यहाँ से कितनी दूर है?" या "फलां जगह पहुँचने के लिए किधर से होकर जाना पड़ता है?..." "क्या यहाँ बहुत-से ऐतिहासिक स्थान हैं?" "मैंने सुना है कि तुम्हारी सरयू नदी यहीं किसी पहाड़ी में से निकलती है जो बड़ी खूबसूरत जगह है।" इस तरह के सवालों को सुनकर मैं सोचने लगता कि मैंने इस विषय पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया। मैं यह कभी नहीं कहता था, "मुझे नहीं मालूम।" शायद यह कहना मेरे स्वभाव के विपरीत था। अगर मेरी यह कहने की प्रवृत्ति होती, "पता नहीं तुम किस बारे में बात कर रहे हो," तो मेरी ज़िन्दगी शायद दूसरे किस्म की होती। इसकी बजाय मैं कहता था, "हाँ, वह बहुत अच्छी जगह है। क्या तुम अभी तक वहाँ नहीं गए? तुम्हें वक्त निकालकर वहाँ ज़रूर जाना चाहिए, वरना तुम्हारा यहाँ आना बेकार होगा।" मुझे अफसोस है कि मैं सफेद झूठ बोला करता था, इसलिए नहीं कि मैं झूठ बोलना चाहता था, बल्कि इसलिए कि मैं खुशगवार बनना चाहता था। यह स्वाभाविक था कि इसके बाद वे मुझसे पहाड़ी का रास्ता पूछते थे। मैं कहता, "बाज़ार के चौराहे पर जाकर किसी टैक्सी ड्राइवर से पूछ लेना...।" यह सन्तोषजनक निर्देशन नहीं था। फौरन ही एक आदमी ने कहा कि मैं उसे बाज़ार के चौराहे तक ले जाकर टैक्सी दिलवा दूँ। जब भी कोई ट्रेन आने वाली होती थी तो खलासी का छोटा बेटा सिगनल के प्वॉइण्ट्स की ड्यूटी पर तैनात रहता था, बाकी वक्त उसे खास काम नहीं रहता था। मैं उस लड़के को दुकान पर बैठाकर यात्री को टैक्सी दिलवाने के लिए चला गया। बाज़ार में फव्वारे के पास बूढ़ा घाघ गफ्फूर किसी शिकार की तलाश में खड़ा था। वह मुल्क की पुरानी मोटरों को खरीदकर मरम्मत करवाने में माहिर था। वह पुरानी मोटरों में नई जान डाल देता था और उन्हें पहाड़ी सड़कों और जंगलों में चलाता था। आम तौर पर वह फव्वारे के पत्थर पर बैठा रहता था और उसकी मोटर सड़क पर नाले के पास धूप में खड़ी रहती थी। मैंने आवाज़ दी, "गफ्फूर, ये सज्जन मेरे दोस्त हैं। ये...जगह देखना चाहते हैं। इन्हें घुमाने ले जाओ और सही-सलामत लौटाकर लाना...इसीलिए मैं खुद इन्हें तुम्हारे पास लाया हूँ, हालाँकि इस वक्त मुझे अपनी दुकान अकेली नहीं छोड़नी चाहिए।" हम लोगों ने किराये पर झगड़ा किया। यात्री ने जो रकम बताई, मैंने गफ्फूर को उस पर राजी कर लिया। जब यात्री मोटर की शक्ल देखकर हिचकिचाया तो मैंने गुफ्फूर का पक्ष

लेकर समझाया, "गफ्फूर कोई बेवकूफ नहीं है। उसने सोच-समझकर ही इस किस्म की मोटर खरीदी है। इस मॉडल की मोटर उसने बड़ी मेहनत के बाद तलाश की है। सिर्फ यही मोटर उन जगहों में जा सकती है जहाँ कोई सड़क नहीं है, लेकिन गफ्फूर आपको वहाँ ले जाएगा और रात के खाने के वक्त यहाँ पहुँचा देगा। पहुँचा दोगे न गफ्फूर?"

"खैर, दोनों तरफ सत्तर-सत्तर मील का सफर है। इस वक्त एक बजा है। अगर हम फौरन चल दें और रास्ते में गाड़ी का पंक्चर न हो तो..." गफ्फूर नकसुरी आवाज़ में बोला। लेकिन मैंने इतनी जल्दी मचाई कि वह अपना वाक्य खत्म न कर सका। जिस वक्त वे लोग वापस लौटे उसे खाने का वक्त नहीं कहा जा सकता था, क्योंकि आधी रात हो गई थी। लेकिन गफ्फूर यात्री को सही-सलामत ले आया था। उसने हॉर्न बजाकर मुझे जगाया, अपना किराया वसूल किया और चला गया। यात्री को अगले दिन सुबह आठ बजे की गाड़ी से जाना था। उसे प्लेटफार्म पर मेरे तिरपाल के नीचे सोकर रात काटनी पड़ी। भूख लगने पर मैंने उसे फल वगैरह दे दिया। यात्री बड़े उत्साही जीव होते हैं। बस, उन्हें अगर कोई दर्शनीय स्थान देखने को मिल जाए तो वे किसी भी असुविधा की परवाह नहीं करते। यह बात मेरी समझ में नहीं आती थी कि कोई आदमी खाना-पीना और आराम छोड़कर किसलिए सौ मीलों की खाक छानता है, लेकिन इसके कारण से मुझे कोई सरोकार नहीं था, जिस तरह मेरी दुकान पर लोग क्या खाते थे या कौन-सा सिगरेट पीते थे इससे मुझे कोई सरोकार नहीं था। मेरा काम सिर्फ उनकी ज़रूरत की चीज़ें मुहैया करना था। जब सरयू नदी पहाड़ से लुढ़ककर अपने-आप हमारे दरवाज़े के पास आ गई थी तो फिर उसके उद्गम-स्थान को देखने के लिए इतनी तकलीफ उठाना मुझे बेवकूफी मालूम होती थी। मैंने उस वक्त तक नदी के उद्गम का ज़िक्र तक नहीं सुना था। लेकिन वह यात्री उस स्थान की तारीफों के पुल बाँध रहा था, "मुझे अफसोस है कि मैं अपनी बीबी और माँ को अपने साथ नहीं ला सका।" ज़िन्दगी में बाद में जाकर मैंने देखा कि हर आदमी जो किसी दर्शनीय स्थान को देखने जाता है उसे यही अफसोस होता है कि वह अपनी बीवी या बेटी को साथ लेकर नहीं आया। उनकी बातों से ऐसा लगता था, मानो उन्होंने अपनी बीवी या बेटी को किसी बढ़िया चीज़ से वंचित कर दिया हो। बाद में जब मैं बाकायदा टूरिस्ट गाइड बन गया तो मैं अक्सर यह कहकर यात्रियों में उदासी पैदा कर देता था, "यह दृश्य तो पूरे परिवार के देखने के काबिल है" यात्री कसमें खाता कि अगले साल वह अपने पूरे परिवार को लेकर वहाँ आएगा।

सरयू नदी के उद्गम को देखकर लौटने वाला यात्री रात-भर उस स्थान की तारीफें करता रहा। उसने बताया कि वहाँ पहाड़ की चोटी पर एक छोटा-सा मन्दिर है। "पौराणिक कथाओं में पार्वती के यज्ञकुण्ड में कूदने की घटना लिखी है। ज़रूर यह वही जगह होगी। मन्दिर के एक खम्भे पर पार्वती के कुण्ड में कूदने का और उस स्थान से पानी की धारा फूटने का दृश्य अंकित है।" वगैरह-वगैरह। कभी-कभी कोई विद्वान किस्म का आदमी आकर इन तथ्यों में कोई नई बात जोड़ देता और कहता कि मन्दिर की छत ईसा से तीन शताब्दी पहले बनी होगी, या पोशाक की शैली से मालूम होता है कि मूर्ति तीसरी शताब्दी की है' लेकिन मेरी दृष्टि में ये तथ्य एक समान थे। जैसा यात्री होता और उस समय मेरा जैसा मूड होता उसी के अनुसार मैं ऐतिहासिक तिथियाँ बताया करता था। अगर

यात्री विद्वान किस्म का व्यक्ति होता तो मैं तथ्यों और आँकड़ों को सतर्कता से दबाकर केवल साधारण बातें बताता और उसे जी भरकर बातें करने का मौका देता। यकीन कीजिए, इस बात से उसे बहुत खुशी होती। और अगर कोई सीधा-सादा आदमी होता तो मैं जी खोलकर उससे बातें करता और बताता कि अमुक चीज़ दुनिया में सबसे विशाल और ऊँची है। मैं उसे मनगढ़न्त आँकड़े सुनाने लगता। अपने मूड के अनुसार किसी भी ऐतिहासिक अवशेष को ईसा से तेरह शताब्दी पहले या बाद का बता देता। जब मुझे थकान या ऊब महसूस होती तो मैं एक ही प्रहार में यात्री का सारा आकर्षण समाप्त कर देता। कहता "यह स्थान सिर्फ बीस साल पुराना है। इसे जानबूझकर खण्डहर में बदल दिया गया है। यहाँ ऐसे बीसियों स्थान हैं।" लेकिन इस लापरवाही और आत्मविश्वास की अवस्था तक पहुँचने में मुझे कई वर्ष लगे। खालासी का लड़का दिन-भर दुकान में बैठा रहता था। हर रोज़ रात को मैं नकदी और सामान का हिसाब किया करता। खलासी के लड़के की तनख्वाह मुकर्रर नहीं थी। मैं कभी-कभी उसे कुछ पैसे दे दिया करता था। लेकिन मेरी माँ ऐतराज़ करती थी। "राजू, तुम इस लड़के से क्यों काम लेते हो? या तो उसे कोई निश्चित काम सौंपो, नहीं तो देहात में भटकना छोड़कर खुद दुकान पर काम करो। आखिर तुम्हें भटकते फिरने में क्या हासिल होता है?" मैं रात को देर से खाना खाते हुए जवाब देता, "तुम नहीं जानती माँ, यह काम दुकानदारी से कहीं बेहतर है। मैं बहुत-सी जगह घूम आता हूँ और मुझे आमदनी भी होती है। मैं यात्रियों के साथ उनकी कार में या बस में जाता हूँ, उनसे बातें करता हूँ। कभी-कभी वे मुझे खाना भी खिलाते हैं। जानती हो मैं कितना मशहूर हो गया हूँ? लोग बम्बई, मद्रास और सैकड़ों मील दूर और जगहों से आकर मेरा नाम पूछते हैं। वे मुझे 'रेलवे राजू' कहते हैं। मैंने सुना है कि लखनऊ में भी लोग मेरे नाम से वाकिफ हैं। दुकान पर बैठकर ग्राहकों को तम्बाकू, माचिस बेचने की बजाय मशहूर होना कितनी अच्छी बात है?"

' "तो क्या तुम्हारे पिता दुकानदारी से सन्तुष्ट नहीं थे?" "मैं दुकानदारी के खिलाफ कुछ नहीं कह रहा। मैं दुकान की देख-भाल भी करूँगा।" मेरी माँ इस बात से बहुत खुश होतीं। रात को बत्ती बुझाने से पहले वह अक्सर अपनी भतीजी का ज़िक्र किया करतीं जो गाँव में रहती थी। उन्हें उम्मीद थी कि मैं किसी दिन उस लड़की से शादी करने के लिए राज़ी हो जाऊँगा। स्पष्ट शब्दों में कहने की बजाय वे कहा करती थीं, "जानते हो ललिता को स्कूल में इनाम मिला है। आज भाई का खत आया है।" गाड़ी के सिगनल तक पहुँचते ही मैं ग्राहक को भाँप लेता, ठीक उसी तरह जैसे कोई सयाना जमीन देखकर बता देता है कि वहाँ कुआँ खोदने पर पानी निकलेगा या नहीं। अगर मुझे यह अन्दाज़ हो जाता है कि कोई अच्छा ग्राहक आनेवाला है तो मैं फौरन ट्रेन की दिशा में चला जाता और ऐन उसी जगह खड़ा होता जहाँ आकर यात्री मेरे बारे में पूछताछ करते थे। कन्धे से लटके कैमरे या दूरबीन से ही मैं ग्राहक का अन्दाज नहीं लगाता था, उसके बगैर ही मैं ग्राहक को भांप लेता था। इंजन के प्लेटफार्म पर आने से पहले ही अगर मैं फाटक की तरह भागता तो इसका मतलब साफ यह होता कि मुझे कोई ग्राहक नज़र नहीं आ रहा। कुछ ही महीनों में मैं अनुभवी गाइड बन गया। पहले मैं दुकानदारी को अपना पेशा और गाइड के काम को अपना शौक समझता था, लेकिन धीरे-धीरे मैं अपने को पार्ट टाइम दुकानदार और फूल टाइम टूरिस्ट

गाइड समझने लगा। जिस दिन कोई भी टूरिस्ट न होता, उस दिन भी मैं दुकान पर बैठने की बजाय फव्वारे की तरफ चल देता और गफ्फूर से टूटी-फूटी पुरानी मोटरों की बातें सुनता रहता।

'मैंने सब टूरिस्टों को वर्गों में बाँट रखा था। मैं पाठकों को बता सकता हूँ कि टूरिस्टों में कई किस्म के लोग होते थे। कुछ को फोटोग्राफी का मर्ज था। वे कैमरे के व्यू-फाइण्डर के अलावा किसी चीज़ को नहीं देखना चाहते थे। ट्रेन से उतरते ही, सामान उठवाने से पहले, वे पूछते, ''क्या यहाँ फोटोग्राफर की दुकान है जहाँ कैमरे की फिल्में धुल सकती हैं?''

''ज़रूर, मलगुड़ी फोटो ब्यूरो, जो सबसे बड़ी दुकानों में से है...''

''और अगर कैमरे के लिए फिल्मों की ज़रूरत पड़ी, खैर, मैं अपने साथ काफी फिल्में लाया हूँ। लेकिन अगर वे खत्म हो गई तो...क्या यहाँ सुपर पैन्क्रो–थ्री कलर या ऐसी कोई फिल्म मिल सकेगी?''

' ''ज़रूर मिल सकेगी। ऐसी चीज़ें तो उस दुकान में खासतौर पर रहती हैं।''

' ''क्या वह मेरे सामने ही फिल्म धो देगा?''

' ''हाँ, आपके बीस तक गिनती गिनने से पहले ही, वह उस्ताद है।''

' ''यह तो अच्छी बात है, तो सबसे पहले तुम मुझे कहाँ ले चलोगे?'' इस श्रेणी के टूरिस्ट यही सवाल पूछते थे। मेरे पास इन सवालों के सन्तोषजनक जवाब पहले से तैयार रहते थे। जवाब देने से पहले मैं बहुत-सी बातों की जानकारी हासिल करना ज़रूरी समझता था, मिसाल के लिए वह आदमी कितना वक्त और पैसा खर्च करना चाहता था। मलगुड़ी और उसके आसपास के स्थानों की सैर कराने में मैं माहिर था। मैं अगर चाहता तो टूरिस्टों को एक झलक दिखाकर वापस ले आता या पूरा दृश्य देखने का मौका देता। मैं अपनी मर्ज़ी से इस प्रोग्राम को बदल सकता था। कुछ ही घंटों में सारे स्थान दिखाने से लेकर पूरे हफ्ते तक किसी पहाड़, नदी के दृश्य या पुरातत्व सामग्री में टूरिस्ट को उलझाए रखना मेरी मर्ज़ी पर निर्भर करता था। यह जाने बगैर कि उस आदमी के पास कितनी नकदी है, चेक बुक है या नहीं और उसकी आर्थिक स्थिति क्या है, मैं कोई फैसला नहीं कर सकता था। एक और मामला भी बड़ा नाज़ुक था। कभी-कभी अगर कोई टूरिस्ट किसी के नाम चेक काटना चाहता था, तो हमारा गफ्फूर, फोटो की दुकान का मालिक या मेम्पी हिल्ज के जंगल के बंगले का चौकीदार किसी भी अजनबी पर भरोसा करके चेक लेने को तैयार नहीं होता था। ऐसे नाज़ुक मौकों पर मुझे बड़ी होशियारी से काम लेना पड़ता था और मैं यह कहकर टाल देता था, ''ओह आप नहीं जानते, हमारे शहर में बैंकों की हालत बहुत खराब है, कई बार तो वे चेक भुनाने में पूरे बीस दिन लगा देते हैं। लेकिन ये बेचारे गरीब भला कैसे रुक सकते हैं?'' यह बात सचमुच चौंका देनेवाली थी लेकिन मुझे इस बात की रत्ती-भर परवाह नहीं थी कि इससे हमारे शहर के बैंकों की बदनामी होती है।

'किसी टूरिस्ट के आते ही मैं यह देखता था कि वह सामान के लिए कुली बुलाता है या हर चीज़ को हाथों से उठाता है। आँख झपकते ही मुझे इन बातों पर गौर करना पड़ता था। स्टेशन से बाहर आकर वह होटल की तरफ पैदल जाता है, टैक्सी बुलाता है या एक घोड़ेवाले इक्के के साथ सौदेबाज़ी करता है, ये बातें भी मुझे देखनी पड़ती थीं। मैं उसकी

मर्जी के मुताबिक सारे इन्तज़ाम करवा देता था, लेकिन उदासीन भाव से, सिर्फ इसलिए चूँकि वह गाड़ी से उतरते ही रेलवे राजू को बुलाता था और मैं जान लेता था कि वह चाहे सुदूर उत्तर से आया हो, या पास ही दक्खिन से किसी न किसी ने ज़रूर उसकी सिफारिश की होगी। होटल में पहुँचकर उसे उसकी पसन्द के मुताबिक सबसे शानदार या सबसे घटिया कमरा दिलवाना भी मेरी ज़िम्मेदारी थी। सस्ते भाड़ेवाली बारक में जाने वाले कहते थे, "आखिर मुझे सिर्फ यहाँ सोना ही तो है। दिन-भर तो मैं बाहर रहूँगा। जब दिन-भर कमरे में ताला ही लगाना है तो बेकार में किराया देने से क्या फायदा? क्यों, ठीक है न?"

' "बिलकुल, बिलकुल" मैं सर हिलाकर हामी भरता और उसके इस सवाल का जवाब दिए बगैर कि "पहले तुम मुझे कौन-सी जगह दिखाओगे?" उसकी हर गतिविधि का सूक्ष्म निरीक्षण करता और कोई सुझाव न देता। ट्रेन से उतरकर जब तक आदमी का दिमाग साफ न हो, तब तक उससे बात करने का कोई फायदा नहीं। पहला वह नहा-धोकर कपड़े बदल ले, इडली और कॉफी से तरोताज़ा हो जाए तभी दक्षिण में कोई आदमी इहलोक और परलोक की बातों पर साफ दिमाग से सोच सकता है। अगर वह मुझे नाश्ता खाने के लिए आग्रह करता तो मैं समझ जाता कि वह अपेक्षाकृत सहृदय हैं। लेकिन जब तक हमारी दोस्ती और गहरी न हो जाती, तब तक मैं किसी भी टूरिस्ट से खाने की कोई चीज़ कबूल नहीं करता था। फिर उचित समय आने पर मैं सवाल करता, "आप यहाँ कितने दिन रहेंगे?"

'वह जवाब देता, "ज्यादा से ज्यादा तीन दिन। क्या इस अरसे में सारी जगहें देख सकेंगे?"

' "ज़रूर! यह तो इस बात पर निर्भर करता है कि आप खास तौर पर किन जगहों को देखना चाहेंगे।" फिर मैं एक अर्थ में उससे सब कुछ कबूल करवा लेता था, और उसकी रूचि को जानने की कोशिश करता था। मैं उसे बताता कि मलगुड़ी में ऐतिहासिक और प्राकृतिक सौन्दर्य और आधुनिक विकास की दृष्टि से बहुत-से स्थान दर्शनीय हैं वगैरह-वगैरह। अगर कोई तीर्थयात्री होता तो मैं उसे पचास मील के इलाके में एक दर्जन मन्दिर दिखा सकता था। मेम्पी शिखर से लेकर सरयू के किनारे बने अनेक पवित्र स्थानों पर उसे स्नान के लिए ले जा सकता था। टूरिस्ट गाइड बनकर मैंने एक बात यह भी सीखी कि भोजन की तरह भ्रमण के मामले में भी हर आदमी की अपनी अलग रूचि होती है। कुछ लोग जल-प्रपात देखना चाहते हैं, कुछ को खण्डहरों में दिलचस्पी होती है। (ओह! टूटे पलस्तर, भग्न मूर्तियों और भुरभुराती ईंटों को देखकर उन्हें कैसे आनन्द की अनुभूति होती है।) कुछ लोग किसी देवता को पूजना चाहते हैं, कुछ लोग हाइड्रोइलेक्ट्रिक प्लांट में दिलचस्पी रखते हैं। कुछ लोगों को मेम्पी शिखर पर बने शीशों से ढके बंगले जैसी जगह पसन्द आती है जहाँ से वे सौ मील दूर के क्षितिज को और शिखर के पास घूमते जंगली जानवरों को देख सकते हैं। इनमें भी दो किस्म के लोग होते हैं। कवि-स्वभाव के लोग तो प्राकृतिक सौन्दर्य देखकर सन्तुष्ट हो जाते हैं और वापस लौटना चाहते हैं। दूसरे लोग प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द लेने के साथ-साथ वहाँ बैठकर शराब भी पीना चाहते हैं–न जाने क्यों? मेम्पी शिखर पर बना बंगला कुछ लोगों में अप्रत्याशित प्रतिक्रियाएँ जगाता था। वह काव्यमय स्थल जो था। मैं कुछ ऐसे

लोगों को भी जानता हूँ जो अपने साथ औरतों को लाते थे। जंगलों से घिरा हुआ, वह खामोश सुरम्य स्थल, जहाँ से घाटी का दृश्य दिखाई देता था, मेरे विचार में तो चिन्तन और काव्य-रचना के लिए ज्यादा उपयुक्त था, लेकिन कुछ लोगों को वहाँ कामोत्तेजना का अनुभव होता था। खैर, इन बातों पर टीका-टिप्पणी करना मेरा काम नहीं था। मेरा काम तो सिर्फ इतना ही था कि मैं उन्हें वहाँ पहुँचा दूँ और गफ्फूर उन्हें ठीक वक्त पर घुमाने के लिए ले जाए।

'मुझे उन लोगों से बहुत डर लगता था जो मेरा इम्तहान लेना शुरू कर देते थे, जिनके पास सारे दर्शनीय स्थानों की सूची तैयार रहती थी और जिनका आग्रह था कि सैर के पूरे दाम वसूल करो। "इस शहर की आबादी कितनी है?" "क्षेत्रफल कितना है?" "झूठ मत बोलो, मैं जानता हूँ कि यह स्थान कब बनाया गया था...दूसरी शताब्दी में नहीं बल्कि बारहवीं शताब्दी में।" या वे मुझे रूट शब्द का सही उच्चारण बतलाते थे...ऐसे लोगों के सामने मैं विनीत भाव से अपने को दबा लेता था और कृतज्ञभाव से अपनी गलतियों के सुधार को कबूल कर लेता था और अन्त में मुझे यह भी सुनना पड़ता था, "अगर तुम्हें यह भी मालूम नहीं तो फिर अपने को टूरिस्ट गाइड क्यों कहते हो?..." इत्यादि।

'आप यह सवाल कर सकते हैं कि मुझे इस पेशे से क्या हासिल होता था? खैर, इस सवाल का कोई निश्चित उत्तर नहीं है। यह सब परिस्थितियों पर और यात्रियों की किस्म पर निर्भर करता था। आमतौर पर मैं यात्रियों के साथ जाने के लिए कम-से-कम दस रुपयों की माँग किया करता था, और अगर कहीं दूर जाना होता तो मैं ज़्यादा रकम माँगता था। इसके अलावा गफ्फूर, फोटो स्टोर का मालिक, होटल का मैनेजर और दूसरे लोग, जिनके पास मैं किसी टूरिस्ट को ले जाता था, निश्चित कायदे के मुताबिक अपनी आमदनी में से मुझे कमीशन देते। टूरिस्टों को घुमाते-घुमाते मैं भी बहुत-सी बातें सीखता था और सीखते-सीखते कमाई करता था। इन सब बातों में मुझे बड़ा मज़ा आता था।

'कई बार खास मौके भी आते थे, मिसाल के लिए जब हाथियों के झुण्ड को पकड़ना होता था। जाड़े के महीनों में जंगल विभाग के कर्मचारी हाथियों को पकड़ने के लिए लम्बी-चौड़ी तैयारियाँ करते थे। वे हाथियों के पूरे के पूरे झुण्ड को देखकर घेर लेते थे और गड्ढों की तरफ खदेड़ देते थे। ऐसे दृश्यों को देखने के लिए लोग बहुत भारी संख्या में एकत्रित होते थे। हाथी पकड़ने के दिन आसपास के सभी देहातों के लोग आकर मुझसे मिन्नत करते कि उन्हें मेम्पी के विशाल बांस के जंगलों में गड्ढों के आसपास बैठने के लिए जगह दी जाए। हाथी पकड़ने वाले लोगों के साथ मेरा खास रसूख था। उस रसूख को बनाए रखने के लिए मुझे जंगल के पड़ाव के कई बार चक्कर लगाने पड़ते थे और अफसरों को शहर से जिन छोटी-मोटी चीज़ों की ज़रूरत होती थी वे उनको लाकर देनी पड़ती थी, और जब हाथी पकड़ने का वक्त आता था तो सिर्फ उन्हीं लोगों को अहातों के फाटकों में से गुज़रने दिया जाता था, जो मेरे साथ आते थे। मैं लोगों को छोटी-छोटी टोलियों में अपने साथ ले जाता और उन्हें यह समझाते-समझाते मेरा गला बैठ जाता–"जानते हो, जंगली हाथियों के झुण्ड पर महीनों पहले से निगरानी रखी जाती है...।" यह मत समझिए कि मुझे हाथियों में कोई व्यक्तिगत दिलचस्पी थी। टूरिस्टों को जो चीज़ पसन्द आती थी वह मुझे भी पसन्द आती थी। मेरी निजी पसन्दगी-नापसन्दगी गौण चीज़ थी। अगर कोई शेर देखना चाह ता था या

शिकार करना चाहता था तो मैं उसका इन्तजाम करना भी जानता था। मैं शेर को आकर्षित करने के लिए बकरी के बच्चे का इन्तजाम करता, ऊँचे मचान बनवाता, ताकि जब बेचारा शेर मेमने को खाने के लिए आए तो बहादुर शिकारी उसे गोली मारकर खत्म कर सकें, हालाँकि मुझे न मेमने की मौत का दर्शक बनना पसन्द था न शेर की मौत का। अगर कोई नागराज को फन फैलाए देखना चाहता था तो मैं उसका भी इन्तज़ाम कर देता था, क्योंकि संपेरा मेरा परिचित था। मद्रास से आने वाली एक लड़की ने मलगुड़ी में कदम रखते ही सवाल किया, "क्या तुम मुझे ऐसा नाग दिखा सकते हो जो बांसुरी के स्वरों पर अपना फन फैलाकर नाच सके?"

' "क्यों?" मैंने सवाल किया।

' "मैं देखना चाहती हूँ। बस," लड़की ने जवाब दिया। पर उसके पति ने कहा, "रोज़ी, अभी और बहुत-सी बातों पर सोचना है, साँप बाद में देखा जाएगा।"

' "मैं यह तो नहीं कह रही कि ये फौरन सांप को पेश कर दें। मैं माँग नहीं कर रही, सिर्फ इसका ज़िक्र ही तो कर रही हूँ।"

' "अगर तुम्हें साँप में दिलचस्पी है तो तुम अपना अलग इन्तज़ाम कर सकती हो। मुझसे यह उम्मीद मत रखना कि मैं तुम्हारे साथ जाऊँगा। मैं साँप की सूरत तक बर्दाश्त नहीं कर सकता। तुम्हें भयानक चीज़ें पसन्द आती हैं।" मुझे वह आदमी नापसन्द आया, वह सांप जैसे अलौकिक जीव का मजाक उड़ा रहा था। मुझे उस लड़की से हमदर्दी थी। वह कितनी प्यारी और शालीन थी! उसके आने के बाद से मैंने अपना खाकी बुशकोट और धोती उतारकर अपना हुलिया संवारा। रेशमी 'जिब्बा' और जालीदार धोती पहनकर मैंने अपने बाल संवारे, और जब मैं घर से जाने लगा तो मेरी माँ ने कहा, "आह! तुम बिल्कुल दूल्हा दिखाई देते हो!" और जब मैं उन लोगों से मिलने के लिए होटल गया तो गफ्फूर ने आँख मारकर मुझसे बहुत-सी आरोप लगाने वाली बातें कहीं।

'लड़की के आने से मुझे हैरानी हुई थी। उसका पति पहले आया था। मैंने उसे आनन्दभवन होटल में ठहराया था। एक दिन सैर करने के बाद अचानक दोपहर के वक्त उसने मुझसे कहा, "मुझे मद्रास से आने वाली गाड़ी पर जाना है। एक और व्यक्ति आ रहा है।" उसने मुझसे यह तक नहीं पूछा कि गाड़ी किस वक्त आएगी। उसे जैसे हर बात पहले से मालूम थी। वह बड़ा अजब आदमी था, जो अक्सर यह बताना ज़रूरी नहीं समझता था कि वह आगे क्या करने वाला है। उसने अगर मुझे पहले से आगाह कर दिया होता कि वह हमारे स्टेशन पर इतने शानदार व्यक्तित्व से मिलने जा रहा है तो मैं भी शायद अवसर के अनुकूल सज-धज के जाता। मैं रोज़ की तरह खाकी बुशशर्ट और धोती पहने था। इन दोनों का मेल हमेशा ही भयंकर रूप से अनाकर्षक और भौंडा लगता है, लेकिन मेरे जैसे काम के लिए सबसे सुविधाजनक और युक्तिसंगत होता है। वह जैसे ही ट्रेन से नीचे उतरी, मेरी इच्छा हुई कि काश मैं कहीं छिप जाता। उसके व्यक्तित्व में अत्यधिक चमक-दमक नहीं थी, लेकिन उसका शरीर इकहरा और सुता हुआ था, अपूर्व सौन्दर्य के सांचे में ढाला हुआ। उसकी आँखें तारों की तरह चमकती थीं। रंग सफेद नहीं, बल्कि किंचित् धुंधला-सा था, जिससे उसका केवल आधा रूप ही नज़र आता था मानो आप उसे डाब के पानी की कोमल फिल्म के पीछे से देख रहे हों। क्षमा करें, अगर आपको लगता हो कि मैं काव्य की भाषा में

बहक गया हूँ। मैंने साथ न जाने का बहाना करके उन दोनों को होटल की ओर रवाना कर दिया और खुद साफ-सुथरे कपड़े पहनने के लिए घर की ओर भागा।

'गफ्फूर की मदद से मैंने कुछ तथ्यों की खोज-बीन की। वह मुझे इल्लामन स्ट्रीट पर एक आदमी के पास ले गया, जिसके चचेरे भाई को, जो म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर में काम करता था, एक ऐसे जादूगर का पता था जिसके पास किंग कोबरा सांप था। मैं अपनी खोज में लगा रहा। इस बीच मैंने अतिथि को नार्थ एक्सटेंशन में स्थित ईश्वर मन्दिर की दीवार के पत्थरों पर खुदे रामायण के प्रसंगों को डिसाइफर करने के लिए अकेला छोड़ दिया। मन्दिर की दीवार पर असंख्य सूक्ष्म आकृतियाँ खुदी हुई थीं। उनमें अभिव्यक्त एक-एक प्रसंग को समझने के लिए उस व्यक्ति को अपना पूरा वक्त देना पड़ा। मैं उन मूर्ति-अंकित प्रसंगों से पूरी तरह परिचित था और मैं आँख बन्द करके उनका क्रम बता सकता था। लेकिन उस व्यक्ति ने मेरी सहायता नहीं ली। वह स्वयं उनके बारे में पूरा जानकार था।

'अपनी खोज पूरी करके जब मैं लौटा तो देखा कि वह लड़की अलग खड़ी हुई है। उसके चेहरे से लगता था जैसे वह बिल्कुल ऊब रही है। मैंने प्रस्ताव किया, "अगर आप एक घंटे के लिए मेरे साथ चल सको तो मैं आपको एक कोबरा सांप दिखा सकता हूँ।" वह जैसे प्रसन्नता से खिल गई। उसने उस व्यक्ति के कंधे को छूकर कहा, "तुम यहाँ और कितनी देर रहना चाहते हो?" वह व्यक्ति झुककर किसी मूर्ति का निरीक्षण कर रहा था।

' "कम से कम दो घंटे और," उसने बिना मुड़े ही उत्तर दिया।

' "मैं इस बीच बाहर घूमने जा रही हूँ।"

' "खुशी से।" फिर उसने मुझसे कहा, "सीधे होटल चले जाना। मैं रास्ता तलाश करके खुद पहुँच जाऊँगा।"

'म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर से हमने अपने गाइड को साथ लिया और हमारी कार रेतीली सड़क पर फिसलती हुई आगे बढ़ने लगी। नलप्पा कुंज के पास पुल पार करके हम नदी के दूसरे किनारे पहुँचे। सड़क में बैलगाड़ियों की लीकें खुदी हुई थीं। गफ्फूर ने अपने पास बैठे आदमी की ओर क्रोधपूर्वक देखा। "क्या तुम चाहते हो कि मैं इस कार को एक बैलगाड़ी बना दूँ जो हमें इस बीहड़ रास्ते पर खींच लाए हो? आखिर हमें जाना किधर है? उधर तो मुझे कब्रिस्तान के अलावा और कोई बस्ती नहीं दिखाई देती।" उसने नदी पार के एक वीरान अहाते के पीछे से उठते हुए धुएँ की ओर इशारा करते हुए कहा। मुझे यह अच्छा नहीं लगा कि पिछली सीट में बैठी परीज़ाद देवी के सामने कब्रिस्तान जैसे अपशकुन-भरे शब्द बोले जाएँ, इसलिए मैंने जोर से कुछ कहकर उस शब्द पर एक परदा डालने की कोशिश की।

'नदी पार आगे चलकर हम एक ऐसी जगह पहुँचे जहाँ कुछ झोंपड़ियाँ थीं। कार के रुकते ही इन झोंपड़ियों में से अनेक सिर निकलकर झाँकने लगे, और नंग-धड़ंग बच्चों का एक झुण्ड आकर कार के गिर्द खड़ा हो गया और आँखें फाड़कर उसमें बैठे मेहमानों को देखने लगा। हमारा गाइड कार से उतरकर दौड़ता हुआ गाँव के परले कोने की झोंपड़ी तक गया और कुछ क्षणों में ही एक आदमी को साथ लेकर लौट आया, जिसके सर पर एक लाल पगड़ी बँधी थी। इसके अलावा उसके बदन पर सिर्फ एक जांघिया था। "क्या इस आदमी के

पास किंग कोबरा साँप है?'' मैंने उसे ऊपर से नीचे तक देखते हुए पूछा, ''ज़रा देखें तो।'' इस पर बच्चों ने कहा, ''सचमुच इसके पास बहुत बड़ा साँप है–इसके घर में।'' और मैंने उस युवती से कहा, ''क्या हम लोग देखने के लिए चलेंगे?'' और हम चल पड़े। गफ्फूर बोला, ''मैं यहीं पर रहूँगा, नहीं तो ये बन्दर इस गाड़ी के पुर्जे-पुर्जे अलग कर देंगे।'' मैंने उन दोनों से पीछे रुककर गफ्फूर से कहा, ''आज तुम्हारा मिज़ाज क्यों बिगड़ा हुआ है, गफ्फूर? आखिर पहले तो तुम इससे भी खराब सड़कों पर गए हो, लेकिन तुमने कभी शिकायत नहीं की।''

' ''मुझे मोटर के लिए स्प्रिंग और शॉक एब्ज़ार्वर खरीदने पड़े हैं। उनकी कीमत जानते हो?''

' ''ओह, तुम जल्द ही उनके दाम वसूल कर लोगे। खुश रहो।''

' ''हमारे कुछ मुसाफिरों को मोटर की नहीं, बल्कि ट्रैक्टर की ज़रूरत पड़ती है। इस आदमी को ही देखो।'' उसके मन में धुंधला-सा असन्तोष था। मुझे मालूम था कि उसका गुस्सा हमारे खिलाफ नहीं, बल्कि उस गाइड के खिलाफ था, क्योंकि उसने कहा था, ''मैं सोचता हूँ, इस आदमी को शहर तक पैदल वापस लौटने देना चाहिए। भला कोई इतनी दूर सांप को देखने के लिए आता है?'' मैंने उससे कुछ नहीं कहा। उसे खुश करने की कोशिश बेकार थी। शायद घर से चलते वक्त उसकी बीवी ने उससे झगड़ा किया था।

'जब सपेरा छड़ी से कोंचकर सांप को टोकरी से बाहर निकालने की कोशिश कर रहा था, उस वक्त लड़की एक पेड़ की छांह में खड़ी थी। सांप काफी लम्बा था। फूत्कार करते हुए उसने अपना फन फैलाया। लड़के चीखते हुए भाग गए और थोड़ी देर में फिर लौट आए। सपेरा चिल्लाया, ''अगर तुम सांप को नाराज़ कर दोगे तो यह तुम्हारा पीछा करेगा।'' मैंने लड़कों को खामोश रहने के लिए कहा और संपेरे से पूछा, ''यह पक्की बात है न कि तुम सांप को अपने काबू में रखोगे?'' लड़की ने सुझाव दिया, ''तुम बांसुरी बजाकर सांप को नचवाओ।'' सपेरे ने तुम्बे की बीन उठाकर उसमें से बारीक आवाज़ निकाली। काले नाग ने फन उठाकर झूमना शुरू किया। मुझे इस दृश्य से ग्लानि हो रही थी, लेकिन लड़की मन्त्र-मुग्ध खड़ी इस दृश्य को देख रही थी। उसने बांह आगे बढ़ाकर सांप के झूमने की नकल की और बीन की लय पर खुद झूमने लगी–क्षण-भर के लिए, सिर्फ क्षण-भर के लिए। लेकिन इतने में ही मैं समझ गया कि वह इस शताब्दी की सबसे बड़ी नर्तकी है।

'जब हम शाम को होटल पहुँचे तो सात बज चुके थे। मोटर से उतरते ही उसने बिना किसी विशेष व्यक्ति को सम्बोधित करते हुए 'धन्यवाद' कहा और ज़ीने के ऊपर चली गई। उसका पति पोर्च में खड़ा था। उसने कहा, ''आज बस इतना ही काफी है। बाद में तुम सारा हिसाब दे देना। कल दस बजे मुझे मोटर चाहिए।'' वह अपने कमरे में वापस चला गया।

'मुझे उस वक्त बहुत गुस्सा आया। आखिर वह मुझे क्या समझता था? वह मुझे हुक्म दे रहा था कि उसे फलां वक्त मोटर चाहिए। क्या वह समझता है कि मैं दलाल हूँ? इस बात से मुझे बड़ा गुस्सा आया, लेकिन दरअसल मैं एक दलाल ही तो था। गफ्फूर, संपेरे और टूरिस्टों के गिर्द मण्डराना ही मेरा काम था। उस आदमी ने न मुझे अपने बारे में कुछ बताया न यह कि वह कल सुबह कहाँ जाना चाहता है। कितना अजब आदमी था वह!

‘मुझे उससे नफरत हो गई। इससे पहले मुझे किसी टूरिस्ट से इतनी नफरत नहीं हुई थी। लौटते वक्त मैंने गफ्फूर से कहा, ‘‘कल सुबह! उसने मोटर की फरमाइश इस अन्दाज़ में की है, जैसे यह गाड़ी उसके बाप की हो! तुम्हें कुछ अन्दाज़ है, वह कहाँ जाना चाहता है?’’ ‘‘मैं क्यों मगज़पच्ची करूँ। अगर वह पूरा किराया देता है तो जिस वक्त चाहे मोटर मंगवा सकता है। मुझे तो बस इतना सरोकार है। कौन भाड़े पर मोटर लेता है, इसमें कोई दिलचस्पी नहीं...।’’ वह अपने व्यक्तिगत जीवन-दर्शन का विवरण देने लगा। इसमें मुझे कोई रूचि नहीं थी।

‘मेरी माँ हमेशा की तरह मेरी प्रतीक्षा कर रही थी। खाना परोसते समय उसने पूछा, ‘‘आज तुम किधर गए थे? दिन-भर क्या किया?’’ मैंने उसे संपेरे के बारे में बताया। माँ ने कहा, ‘‘शायद ये लोग बर्मा के रहने वाले हैं और साँप की पूजा करते हैं। मेरा चचेरा भाई बर्मा में रहता था, उसने मुझे वहाँ की नागकन्याओं के बारे में बताया था।’’

‘ ‘‘फिज़ूल बातें मत करो माँ। वह लड़की बड़ी अच्छी है। वह नाग-पूजक नहीं बल्कि नर्तकी है।’’

‘ ‘‘ओह नर्तकी! हो सकता है, लेकिन इन नाचने वाली लड़कियों के साथ कभी सरोकार न रखना। यह सब बड़ी खराब होती हैं।’’ मैं चुपचाप खाना खाता रहा और मन ही मन उस लड़की के सुवासित व्यक्तित्व की स्मृतियाँ जगाता रहा।

‘अगले दिन दस बजे मैं होटल पहुँच गया। गफ्फूर की मोटर पहले से ही पोर्च में खड़ी थी। मुझे देखते ही उसने आँख मारकर कहा, ‘‘आहा! क्या ठाट हैं!’’

‘मैंने उसकी बात अनसुनी करके व्यावसायिक अन्दाज में पूछा, ‘‘क्या वे लोग अभी अन्दर हैं?’’

‘ ‘‘ख्याल तो ऐसा ही है। वे अभी तक बाहर नहीं निकले,’’ गफ्फूर ने उत्तर दिया। वह एक शब्द की जगह बीस शब्दों का प्रयोग कर रहा था। न जाने उसे क्या हो गया था। वह बड़ा बातूनी बन गया था, और अचानक मैंने अपने दिल में ईर्ष्या का डंक महसूस किया। मुझे एहसास हुआ कि उस लड़की से प्रभावित होकर वह उसके आगे अपनी शान बघारना चाहता है। इस ईर्ष्या से दु:खित होकर मैंने मन ही मन कहा, ‘अगर भविष्य में भी गफ्फूर इसी तरह पेश आएगा तो मैं उससे पीछा छुड़ाकर कोई दूसरा आदमी ढूँढ लूंगा। हर बात में दखल देने वाला टैक्सी ड्राइवर मेरे लिए बेकार है।

‘मैं सीढ़ियाँ चढ़कर दूसरी मंज़िल पर पहुँचा और मैंने अधिकारपूर्वक 28 नम्बर के कमरे का दरवाज़ा खटखटाया। ‘‘रुको,’’ भीतर से आवाज़ आई। यह आदमी की आवाज़ थी। मुझे उम्मीद थी कि लड़की की आवाज़ सुनाई देगी। मैं मन ही मन कुढ़ता हुआ कुछ मिनटों तक बाहर खड़ा रहा। मैंने घड़ी देखी, दस बज गए थे और उस आदमी ने कहा था, ‘‘रुको’’ क्या वह उस लड़की के साथ अभी तक बिस्तर में लेटा था? मुझे लगा कि मुझे दरवाज़ा खोलकर भीतर घुस जाना चाहिए। इतने में दरवाज़ा खुला और वह तैयार होकर बाहर निकल आया। उसने बाहर से दरवाज़ा फेर दिया। मैं स्तब्ध होकर उससे पूछने ही वाला था कि क्या वह साथ नहीं जाएगी, लेकिन मैं खामोश रहा और चुपचाप उसके पीछे-पीछे नीचे उतर आया।

‘उसने मेरी तरफ इस तरह देखा जैसे मैंने उसे खुश करने के लिए कपड़े पहने हों और वह मेरे कपड़ों की दाद दे रहा हो। मोटर में बैठने से पहले उसने कहा, ‘‘आज मैं फिर पत्थर पर नक्काशी का काम देखना चाहता हूँ।’’

‘ मैंने मन ही मन कहा, ‘ठीक है, ठीक है, नक्काशी का अध्ययन करो या चाहे जिस चीज़ का अध्ययन करो। लेकिन उसके लिए मेरी क्या ज़रूरत है?’ फिर जैसे मेरे विचारों के जवाब में उसने कहा, ‘‘उसके बाद...’’ उसने जेब में से कागज़ का एक पुर्ज़ा निकालकर पढ़ा।

‘यह आदमी ज़िन्दगी-भर दीवारों की नक्काशी देखता फिरेगा और वह बेचारी होटल के कमरे में सड़ती रहेगी। कितना अजब आदमी है! वह लड़की को अपने साथ क्यों नहीं लाया? शायद वह भुलक्कड़ था। मैंने पूछा, ‘‘क्या और कोई आपके साथ नहीं आ रहा?’’ उसने जैसे मेरे मन की बात भाँप ली और तपाक से जवाब दिया, ‘‘नहीं।’’ फिर अपने हाथ का कागज़ देखकर उसने पूछा, ‘‘क्या इस इलाके में गुफा-चित्र हैं?’’ मैंने इस सवाल को हँसकर टाल दिया, ‘‘हाँ, हर आदमी को ऐसे स्थानों में दिलचस्पी नहीं होती। सिर्फ थोड़े-से लोगों ने ही अब तक उन गुफाओं को देखने का आग्रह किया है। लेकिन...वहाँ सारा दिन लग जाएगा, हो सकता है हम आज रात लौट न सकें।’’ वह अपने कमरे में चला गया और कुछ मिनटों बाद मुँह लटकाकर लौटा। इस बीच मैंने गफ्फूर की मदद से खर्चे का तख्मीना लगा लिया था। हम जानते थे कि पीक हाउस के फॉरेस्ट बंगले में रात-भर रुकना होगा और फिर दो मील पैदल चलकर आगे जाना पड़ेगा। मुझे यह तो मालूम था कि गुफाएँ कहाँ हैं लेकिन मैं पहली बार उन्हें देखने के लिए जा रहा था। मालूम होता था कि मलगुड़ी में हर बार सैर के लिए कोई न कोई नई जगह निकल आती थी।

‘मोटर में बैठकर उस आदमी ने कहा, ‘‘शायद तुम नहीं जानते कि औरतों से किस तरह पेश आया जाता है, क्यों?’’ मुझे यह देखकर खुशी हुई कि उसका दृष्टिकोण अधिक मानवीय होता जा रहा था। मैंने जवाब दिया, ‘‘मैं नहीं जानता,’’ और हँस पड़ा ताकि उसे यह देखकर खुशी हो कि मैं उसके मजाक पर हँस रहा था। फिर मैंने हिम्मत बाँधकर पूछा, ‘‘आखिर किस बात की परेशानी है?’’ नई पोशाक और चालढाल से मुझमें एक नया साहस पैदा हो गया था। उसने मैत्रीपूर्ण मुस्कान के साथ मेरी तरफ देखा और आगे झुककर कहा, ‘‘अगर मर्द मानसिक शान्ति चाहता है तो उसके लिए सबसे अच्छी बात यही है कि वह स्त्री जाति को बिल्कुल भुला दे।’’ तीन दिन में पहली बार उसने खुलकर मुझसे बात की थी। पहले वह हमेशा खामोश रहता था या तीखी बात करता था। मैंने अनुमान लगाया कि जब उसकी ज़बान इस हद तक खुल गई है तो ज़रूर स्थिति खतरनाक होगी। गफ्फूर ठोड़ी पर हाथ रखे अपनी सीट पर बैठा था और कहीं दूर देख रहा था। उसका सारा रुख जैसे यह कह रहा था कि ‘तुम दोनों जने वक्त बर्बाद करने वाले हो, तुम्हारे साथ मेरी सुबह भी बर्बाद हो रही है।’ एक साहसपूर्ण विचार मेरे दिल में पैदा हो रहा था अगर वह सफल हो गया तो अन्त में मेरी जीत होगी और अगर मैं असफल रहा तो वह आदमी या तो मुझे ठोकर मारकर निकाल देगा या पुलिस बुलवा लेगा। मैंने कहा, ‘‘क्या मैं जाकर आपकी तरफ से कोशिश करूँ?’’

‘ ‘‘करोगे?’’ उसने खिलखिलाकर पूछा, ‘‘अगर हिम्मत है तो जाओ।’’ मैं उसकी बात

सुने बगैर ही मोटर से कूदकर उतर गया और एक साथ चार-चार सीढ़ियाँ पार करता हुआ 28 नम्बर के कमरे के सामने पहुँचकर दरवाज़ा खटखटाने लगा। भीतर से लड़की की आवाज़ सुनाई दी, "मुझे तंग मत करो। मैं तुम्हारे साथ नहीं जाना चाहतीं। परेशान न करो।" मैं हिचकिचाया, सोचने लगा कि क्या कहूँ। उस परीज़ादी से मुझे पहली बार स्वतन्त्र रूप से अकेले में बात करने का मौका मिला था। मैं या तो अपने को बेवकूफ बना लूँगा या स्वर्ग जीत लाऊँगा। मैं क्या कहकर अपना परिचय दूँगा? क्या वह मेरे प्रसिद्ध नाम को पहचान लेगी? मैंने कहा, "वे नहीं आए, मैं आया हूँ।"

' "क्या?" उसने मीठी आवाज़ में पूछा। आवाज़ में हैरानी और चिड़चिड़ापन था। मैंने फिर कहा, "वे नहीं आए, मैं हूँ। क्या तुम मेरी आवाज़ नहीं पहचानतीं? क्या कल मैं तुम्हारे साथ संपेरे के पास नहीं गया था। रात-भर मुझे नींद नहीं आई। फिर मैंने धीमी आवाज़ में दरवाज़े की दरार में से कुछ फुसफुसाकर कहा, "रात भर मुझे नींद नहीं आई। तुम्हारे नृत्य की मुद्रा की स्मृति मुझे परेशान करती रही।"

' मेरा वाक्य खत्म होने से पहले ही दरवाज़ा आधा खुला और उसने मेरी तरफ देखकर कहा, "अरे तुम!" उसकी आँखों में पहचान की चमक थी। "मेरा नाम राजू है।" मैंने कहा। उसने पूरी तरह से मेरा निरीक्षण किया और बोली, "हाँ, मैं तुम्हें जानती हूँ।" मैं सद्भाव से मुस्कुराया, वह मेरी सबसे शानदार मुस्कान थी, मानों किसी फोटोग्राफर ने मुझे मुस्कुराने के लिए कहा हो। उसने पूछा, "वह कहाँ है?"

' "मोटर में तुम्हारा इन्तज़ार कर रहा है। तुम तैयार होकर बाहर नहीं चलोगी?" उसका हुलिया बिगड़ा हुआ था। आँखें ताज़े आँसुओं से गीली थीं, और उसने एक घिसी हुई सूती साड़ी पहन रखी थी, चेहरे पर न मेकअप था न उसने सेंट ही लगाया था, लेकिन मैं उसे उसी हालत में साथ ले जाने के लिए तैयार था। मैंने कहा, "तुम इसी तरह चलो, किसी को बुरा नहीं लगेगा। भला इन्द्रधनुष को भी सजावट की ज़रूरत होती है?" उसने कहा, "तुम सोचते हो कि तुम इन बातों से मुझे खुश कर सकते हो और मैं अपना निश्चय बदल लूँगी?"

' "हाँ, क्यों नहीं?"

' "तुम क्यों चाहते हो कि मैं उसके साथ बाहर जाऊँ? मुझे चैन से रहने दो," उसने विस्फारित नेत्रों से कहा। अब मुझे उसके चेहरे के नज़दीक जाकर फुसफुसाने का मौका मिल गया। "क्योंकि तुम्हारे बगैर ज़िन्दगी सूनी-सूनी लगती है।"

' वह अगर चाहती तो चिल्लाकर मेरा मुँह दूसरी तरफ फेर सकती थी, 'तुम्हें ऐसी बातें करने की जुर्रत कैसे हुई?' वह अगर चाहती तो मुझे बाहर धकेलकर दरवाज़ा बन्द कर सकती थी। लेकिन उसने यह सब नहीं किया, सिर्फ इतना कहा, "मैं नहीं जानती थी कि तुम इतनी मुसीबत कर दोगे। अच्छा तो एक मिनट रुको।" वह अपने कमरे में चली गई। मैं अपनी समस्त चेतना के साथ चिल्लाना चाहता था, 'मुझे भीतर आने दो।' मैं जोर से दरवाज़ा पीटना चाहता था लेकिन मैंने अपने ऊपर संयम कर लिया। इसी वक्त किसी के कदमों की आहट सुनाई दी। उसका पति यह देखने के लिए ऊपर आ गया था कि मेरे प्रयत्नों का क्या फल निकला है।

‘ ‘‘वह आ रही है या नहीं? मैं सब कुछ बर्बाद करने के लिए तैयार नहीं...’’ उसने कहा।

‘ ‘‘छि:! वह अभी बाहर आ जाएगी। मेहरबानी करके जाकर मोटर में बैठो।’’

‘ ‘‘सच?’’ वह चकित स्वर में बड़बड़ाया। ‘‘तुम जादूगर हो?’’ फिर वह बिना दबे पाँव वापस जाकर मोटर में बैठ गया। उसी वक्त लड़की अलौकिक प्रतिभा की तरह अचानक भीतर से प्रकट हुई और कहने लगी, ‘‘आओ चलें, अगर तुम न होते तो मैं इस ढंग से पेश आती कि सब दंग रह जाते!’’

‘ ‘‘क्या?’’

‘ ‘‘मैं अगली गाड़ी से वापस लौट जाती।’’

‘ ‘‘हम लोग एक बहुत खूबसूरत जगह देखने जा रहे हैं। मेहरबानी करके हमेशा की तरह अपनी मधुरता बनाए रखना–कम से कम मेरी खातिर।’’

‘ उसने कहा, ‘‘अच्छा’’ और वह सीढ़ियों से उतरकर नीचे आ गई। मैं उसके पीछे-पीछे आया। उसने मोटर का दरवाज़ा खोला, और सीधे भीतर चली गई। उसके पति ने आगे सरककर उसके बैठने के लिए जगह बना दी। मैं दूसरे दरवाजे से आकर उसके पति के पास बैठ गया। इस अवस्था में मैं गफ्फूर के पास जाकर बैठने के लिए तैयार नहीं था। गफ्फूर ने यह पूछने के लिए सर घुमाया कि अब वह मोटर स्टार्ट करे या न करे, ‘‘अगर हम पीक हाउस जाएंगे तो आज रात लौटना मुमकिन नहीं होगा।’’

‘ ‘‘हमें लौटने की कोशिश करनी चाहिए,’’ लड़की के पति ने कहा।

‘ ‘‘हम कोशिश ज़रूर करेंगे लेकिन वहाँ रुकने के लिए तैयारी करने में कोई हर्ज नहीं है। अपने साथ कपड़े ले जाने चाहिए। उससे कोई नुकसान नहीं होगा। मैं गफ्फूर से कहूँगा कि थोड़ी देर के लिए मेरे घर मोटर ले चले।’’ मैंने कहा।

‘लड़की बोली, ‘‘मेहरबानी करके एक मिनट रुक जाइए।’’ वह भागती हुई ऊपर चली गई और एक छोटा-सा सूटकेस लेकर लौट आई। उसने अपने पति से कहा, ‘‘तुम्हारे कपड़े भी इसी में हैं।’’ ‘‘वेरी गुड,’’ पति ने मुस्कुराकर जवाब दिया। लड़की भी मुस्कुरा दी और उस हँसी में सुबह का सारा तनाव कुछ हद तक गायब हो गया। फिर भी वातावरण में कुछ तनाव बाकी था। मैंने गफ्फूर से कहा कि वह रेलवे स्टेशन के सामने थोड़ी देर के लिए मोटर रोके। मैं नहीं चाहता था कि वे लोग मेरा घर देखें। ‘‘मैं अभी आया’’ कहकर मैं घर की तरफ भागा। दुकान के लड़के ने मुझे देखते ही कुछ कहने के लिए मुँह खोला। मैं उसे नज़र-अन्दाज़ करके भागता चला गया, और घर से एक बैग उठा लाया। मेरी माँ रसोईघर में थीं। चलते वक्त मैंने कहा, ‘‘हो सकता है, आज रात मैं बाहर रहूँ।’’

‘ शाम को चार बजे के करीब हम लोग पीक हाउस पहुँचे। डाकबंगले की देखभाल करने वाला आदमी हमें देखकर बहुत खुश हुआ। टूरिस्टों के पैसे से मैं उसे अक्सर दिल खोलकर इनाम दिया करता था। मैं पहले से ही टूरिस्टों को कह देता था, ‘‘उस आदमी को अगर खुश रखोगे तो वह आपकी अच्छी तरह सेवा करेगा और आपके लिए दुर्लभ से दुर्लभ चीज़ें भी जुटा देगा।’’ वही फॉर्मूला मैंने इस बार भी दुहराया और लड़की के पति ने (जिसे अब मैं मार्को नाम से पुकारूंगा) कहा, ‘‘तुम जैसा चाहो करो। मुझे तुम्हारी मदद का ही

आसरा है। जानते हो, ज़िन्दगी में मेरा एक उसूल है। मैं छोटी-छोटी परेशानियों से बचना चाहता हूँ। मुझे खर्च की कोई चिन्ता नहीं।'' मैंने जोज़ेफ से कहा कि वह दो मील दूर अपने गाँव से जाकर खाने-पीने की चीज़ें ला दे। फिर मैंने मार्को से कहा, ''क्या आप मुझे कुछ रुपये दे देंगे? बाद में मैं आपको सारा हिसाब दे दूँगा ताकि बार-बार छोटी-छोटी रकमों की अदायगी के लिए आपको परेशान न करूँ।'' इस बात का मार्को पर क्या असर पड़ेगा, यह पहले से बताना मुश्किल था। वह अस्थिर प्रकृति का आदमी था–कभी वह ऊँची आवाज़ में कहता कि उसे रुपये-पैसे की कोई परवाह नहीं, अगले ही क्षण अचानक वह कंजूसी दिखाने लगता और बही-खाता जाँचने वाले ऑडीटर सरीखी मनोवृत्ति का प्रदर्शन करता–लेकिन मैंने देखा कि रसीद दिखाने पर वह पाई-पाई चुका देता था। बिना रसीद के वह एक आना तक देने को तैयार नहीं होता था। लेकिन अगर उसके हाथ में कागज़ थमा दिया जाता तो शायद वह अपनी सारी जायदाद आपके नाम कर देता। अब वह तिकड़म मेरी समझ में आ गई थी। चूंकि उसकी जुबान से साफ-साफ बात नहीं निकल रही थी, इसलिए मैंने कहा, ''आपको हर रकम की रसीद मिलेगी, इसकी ज़िम्मेदारी मैं लेता हूँ।'' इस बात से वह खुश हुआ और उसने अपना बटुआ खोला। मैं टैक्सी को वापस भेज रहा था। गफ्फूर से रसीद पर दस्तखत करवाने के बाद मैंने जोज़ेफ को पैसे दिए कि वह गाँव के होटल से जाकर खाना ले आए। चूँकि मैं इन्तज़ाम करने में लगा था इसलिए अपनी प्रियतमा के चेहरे की तरफ देखने की मुझे फुर्सत नहीं थी, हालाँकि मैं बार-बार उसकी तरफ देख रहा था। जोज़ेफ ने कहा, ''गुफाएँ यहाँ से दो मील दूर हैं। इस वक्त तो हम वहाँ नहीं जा सकते। कल सुबह जाना ठीक रहेगा। नाश्ते के बाद जाकर दोपहर के खाने तक लौट सकते हो।''

'पीक हाउस मेम्पी की पहाड़ियों के शिखर पर बना था–सड़क यहीं पर खत्म हो जाती थी; उत्तरी बरामदे में शीशे की दीवार बनी थी जहाँ से सौ मील दूर तक का क्षितिज दिखाई देता था। नीचे जंगल घाटी तक फैला था, और जिस दिन आसमान साफ रहता था, धूप में चमचमाती सरयू नदी की धारा दिखाई देती थी। प्राकृतिक वातावरण के प्रेमियों और जंगली पशुओं को देखने के शौकीन लोगों के लिए वह स्थान स्वर्ग के समान था। रात के वक्त बरामदे के शीशों में से जंगल में घूमते हुए जानवर साफ दिखाई देते थे। लड़की इस दृश्य को देखकर आनन्दविभोर हो उठी थी। बंगले के चारों तरफ घनी हरियाली थी। वह खुशी से चीखती हुई पेड़-पौधों को छू रही थी, लेकिन उसके पति ने किसी प्रकार की भावुकता का प्रदर्शन नहीं किया। लड़की जिन चीज़ों में भी दिलचस्पी लेती थी, लगता था उसके पति को उन चीज़ों से चिढ़ हो जाती थी। अचानक हजारों फुट नीचे धूप में नहाए मैदानों को देखकर वह ठिठक गई। मुझे डर लगा कि शायद रात के वक्त वह इस दृश्य से भयभीत हो जाएगी। गीदड़ बोल रहे थे, हर किस्म के जानवरों की गुर्राहटें और दहाड़ें सुनाई दे रही थीं। जोज़ेफ एक टोकरी में खाना ले आया और मेज़ पर रखकर चला गया। वह सुबह के नाश्ते के लिए दूध, कॉफी और चीनी भी ले आया था और उसने मुझे वह जगह दिखाई जहाँ कोयलों की अंगीठी रखी थी। लड़की खुशी से चिल्लाई, ''जब मैं आवाज़ दूं, तभी सब लोग उठना! मैं सबके लिए कॉफी बनाऊंगी।'' जोज़ेफ ने कहा, ''मेहरबानी करके भीतर से दरवाज़ा बन्द कर लीजिएगा। उस बरामदे में बैठकर आप शेरों और दूसरे जानवरों को घूमता हुआ देख सकती हैं। लेकिन किसी किस्म की आवाज़ मत कीजिएगा–

यही असली राज है।'' इसके बाद जोज़ेफ लालटेन उठाकर सीढ़ियों से नीचे उतर गया। पेड़-पौधों में से उसकी लालटेन की टिमटिमाहट कुछ देर तक दिखाई देती रही, फिर अदृश्य हो गई। लड़की ने कहा, ''बेचारा जोज़ेफ, वह कितना बहादुर है। अकेला ही जंगल में चला गया।'' उसके पति ने लापरवाही से जवाब दिया, ''इसमें कोई ताज्जुब नहीं। शायद उसकी पैदाइश और परवरिश यहीं हुई है।'' फिर उसने मेरे तरफ देखकर पूछा, ''क्या तुम उसे जानते हो?'' ''हाँ, वह उस गाँव में पैदा हुआ था, और बचपन से ही इस बंगले की देखभाल करता आ रहा है। उसकी उम्र कम से कम साठ साल होगी।''

' ''वह ईसाई कैसे बना?''

' ''यहाँ ईसाई मिशन था। मिशनरी लोग हर किस्म की जगहों पर जाकर बस जाते हैं यह तो आप जानते ही हैं।'' मैंने कहा।

' जोज़ेफ हमें पीतल के दो लैम्प तेल से भरकर दे गया था। एक मैंने रसोईघर की मेज़ पर रख दिया और दूसरा मैंने लड़की के पति को दे दिया–बंगले का बाकी हिस्सा अँधेरे में था। बरामदे के शीशों में से आसमान के तारे दिखाई दे रहे थे। हम तीनों मेज़ के गिर्द बैठ गए। मुझे मालूम था कि प्लेटें कहाँ रखी हैं, मैंने प्लेटें मेज़ पर लगा दीं। शाम के करीब साढ़े सात बजे थे। हमने बड़ा शानदार सूर्यास्त देखा था। उसके बाद उत्तरी आकाश पर छाई लालिमा की तारीफ भी की थी। सूरज के नज़रों से ओझल होने के बाद भी पेड़ों की फुनगियाँ भटकी हुई लाल किरणों से आलोकित हो उठी थीं। इस प्रशंसा की एक सांझी भाषा पैदा हो गई थी। लड़की का पति चुपचाप हम दोनों के पीछे-पीछे चल रहा था। मेरे मन का संगीत फूट पड़ा था। अचानक उस आदमी ने कहा, ''अरे, राजू, तुम भी कवि हो।'' मैंने विनीत भाव से इस प्रशंसा को ग्रहण किया। खाने के वक्त मैंने प्लेट उठाकर खाना परोसने की कोशिश की, लेकिन लड़की ने कहा, ''नहीं, नहीं, मैं तुम दोनों को खाना खिलाकर अच्छी गृहिणी की तरह खुद बाद में खाऊँगी।''

' ''अहा! यह तो बड़ा अच्छा विचार है।'' पति ने मज़ाक किया। लड़की ने प्लेट पकड़ने के लिए मेरी तरफ हाथ बढ़ाया, लेकिन मैंने खुद खाना परोसने का आग्रह किया। अचानक उसने आगे बढ़कर प्लेट जबरदस्ती मेरे हाथ से छीन ली। ओह! उस स्पर्श से क्षण-भर के लिए मेरा सर चकरा गया। मेरी दृष्टि धुंधली पड़ गई। हर चीज़ एक मीठी, अन्धेरी धुँध में खो गई, मानो वातावरण में क्लोरोफार्म छिड़क दिया गया हो। खाना खाते वक्त मैं उस स्पर्श के बारे में सोचता रहा। हम क्या खा रहे थे और वे लोग क्या बातें कर रहे थे, इसकी मुझे कतई होश नहीं थी, मैं सर झुकाए बैठा था, लड़की के चहरे की ओर जब मेरी नज़र जाती या जब उसकी नज़रों से मेंरी नज़रें टकरातीं तो मैं घबरा उठता। मुझे याद नहीं, हम लोगों ने किस वक्त खाना खत्म किया और वह प्लेटें उठाकर ले गई। मुझे सिर्फ उसकी कोमल अदाओं का हल्का-सा आभास हो रहा था और मैं उसके सुनहरी स्पर्श के बारे में सोच रहा था। मेरे मन का एक हिस्सा लगातार कह रहा था, 'नहीं, नहीं, यह बात ठीक नहीं है। याद रखो, मार्को उसका पति है। ऐसी बात तुम्हें सोचनी भी नहीं चाहिए।' लेकिन विचारों को पीछे धकेलना नामुमकिन था। मेरी थकी अन्तरात्मा ने कहा, 'कहीं मार्को तुम्हें गोली से न उड़ा दे।' 'क्या उसके पास पिस्तौल है!' मेरे मन के दूसरे हिस्से ने कहा।

'खाने के बाद लड़की ने कहा, ''चलो शीशेवाले बरामदे में चलें। मैं जंगली जानवरों

को ज़रूर देखूँगी। तुम्हारा क्या ख्याल है, क्या वे इस वक्त यहाँ आएंगे?''

‘ ''हाँ, अगर हम खुशकिस्मत हुए और हमने धीरज दिखाया। लेकिन क्या तुम्हें डर नहीं लगेगा? अँधेरे में बैठना पड़ता है।'' मेरे इस डर दिखाने पर वह खिल-खिलाकर हँस पड़ी और उसने मार्को को साथ आने का निमन्त्रण दिया। लेकिन मार्को ने कहा कि वह एकान्त चाहता है। उसने कुर्सी लैम्प के नजदीक खिसका ली, अपना बैग निकाला और फौरन कागज़ों को पढ़ने में तल्लीन हो गया। लड़की ने कहा, ''अपने लैम्प को ढाँपकर रखो, मैं नहीं चाहती कि मेरे जानवर डरकर भाग जाए।'' वह दबे कदमों से बरामदे में गई और एक कुर्सी खींचकर बैठ गई। फिर उसने मुझसे पूछा, ''क्या तुम भी कागज़ों में खो जाओगे?''

‘ ''नहीं, नहीं,'' मैंने जवाब दिया और हिचकिचाता हुआ अपने और उसके कमरे के बीच आकर खड़ा हो गया।

‘ ''तो फिर आओ भी। तुम मुझे जंगली जानवरों के रहम पर तो नहीं छोड़ देना चाहते?'' मैंने उसके पति की प्रतिक्रिया जानने के लिए उसकी तरफ देखा। लेकिन वह पढ़ने में तल्लीन था। मैंने पूछा, ''आपको किसी चीज़ की ज़रूरत तो नहीं?''

‘ ''नहीं।''

‘ ''मैं बरामदे में हूँ।''

‘ ''ज़रूर जाओ,'' उसने सर ऊपर उठाए बगैर कहा।

‘ लड़की शीशे की दीवार के साथ सटकर बैठी थी और गौर से बाहर देख रही थी। मैं धीरे से अपनी कुर्सी उसकी कुर्सी की बगल में रखकर बैठ गया। कुछ देर बाद उसने पूछा, ''यहाँ तो कोई भी नहीं। क्या सचमुच जानवर यहाँ आते हैं या यह भी कोई मनगढ़न्त किस्सा है?''

‘ ''नहीं, बहुत-से लोगों ने जानवरों को देखा है।''

‘ ''कौन-से जानवर?''

‘ ''शेर...''

‘ ''यहाँ शेर?'' वह हँसने लगी, ''मैंने तो किताबों में पढ़ा है कि शेर सिर्फ अफ्रीका में पाए जाते हैं। लेकिन सचमुच यह तो...''

‘ ''नहीं, माफ करना,'' मुझसे गलती हो गई थी, ''मेरा मतलब चीतों, तेंदुओं और भालुओं से था। कई बार हाथी भी घाटी पार करके तालाब में पानी पीने आते हैं।''

‘ ''मैं पूरी रात यहाँ गुज़ारने के लिए तैयार हूँ। उन्हें भी एकान्त पसन्द है। कम से कम यहाँ खामोशी और अँधेरा है, और अँधेरे में हम किसी चीज़ का इन्तज़ार तो कर सकते हैं।'' मुझे कोई जवाब न सूझा। उसकी सुवास मेरे रोम-रोम पर छा गई थी। शीशे के पार आसमान में तारे चमक रहे थे।

‘ उसने उबासी लेकर पूछा, ''क्या हाथी इस शीशे को तोड़कर भीतर नहीं आ सकता?''

‘ ''नहीं, दूसरी तरफ एक खाई है। जानवर यहाँ तक नहीं पहुँच सकते।'' इसी वक्त हरियाली में किसी जानवर की चमकदार आँखें दिखाई दीं। रोज़ी ने मेरी आस्तीन खींचकर

उत्तेजित स्वर में फुसफुसाकर कहा, ‘‘कोई चीज़ है–कौन-सा जानवर है?’’

‘ ‘‘शायद तेंदुआ है,’’ मैंने बातचीत जारी रखने के लिए कहा। ओह, वे फुसफुसाहटें, सितारें और अंधेरा कितना मादक था–उत्तेजना से मेरे श्वास की गति तेज़ हो गई। उसने पूछा, ‘‘क्या तुम्हें जुकाम हो गया है?’’ मैंने कहा, ‘‘नहीं तो।’’

‘ ‘‘फिर तुम्हारी साँस में इतनी आवाज़ क्यों है?’’ मेरे जी में आया कि अपना चेहरा उसके चेहरे के साथ सटा दूँ और फुसफुसाकर कहूँ, ‘तुम्हारा नृत्य बहुत शानदार था। तुम बड़ी प्रतिभाशाली हो। किसी दिन फिर नाचना। ईश्वर तुम पर कृपालु रहे। क्या तुम मेरी प्रेयसी बनोगी?’ लेकिन खुशकिस्मती से मैंने अपने मन पर काबू पा लिया। मैंने पीछे मुड़कर देखा, मार्को दबे पाँव आकर हमारे पीछे खड़ा हो गया था। ‘‘कुछ दिखाई दिया?’’ उसने फुसफुसाकर पूछा।

‘ ‘‘कोई जानवर आया तो था, लेकिन वह लौट गया है, आप बैठोगे नहीं?’’ मैंने उसे अपनी कुर्सी दे दी, वह बैठकर शीशे में से झाँकने लगा।

‘अगले दिन सुबह वातावरण फिर कलुषित और तनावपूर्ण हो गया। पिछली शाम की सारी जिन्दादिली गायब हो गई। जब उन लोगों का कमरा खुला तो सिर्फ मार्को ही पूरी तरह तैयार होकर बाहर निकला। कोयले की अंगीठी पर मैंने कॉफी बना ली थी। उसने आकर यन्त्रवत् मेरी ओर हाथ बढ़ाया जैसे मैं कॉफी के काउण्टर के पीछे खड़ा होनेवाला दुकानदार होऊँ। मैंने प्याले में कॉफी ढालते हुए कहा, ‘‘जोज़ेफ आपका टिफिन ले आया है। आप खाएंगे नहीं?’’

‘ ‘‘नहीं, हमें फौरन चल देना चाहिए। मैं गुफाओं तक जल्दी पहुँचना चाहता हूँ।’’

‘ ‘‘और श्रीमतीजी क्या करेंगी?’’ मैंने पूछा।

‘ ‘‘उन्हें अकेला रहने दो,’’ उसने मचलकर कहा। ‘‘मैं बेकार वक्त ज़ाया करके सिर्फ इधर-उधर घूमता नहीं रह सकता।’’ लगता है कि रोज़ सुबह उनके बीच ऐसी ही कटुभावना रहती थी। कल रात वह कितने स्नेह से उसके पास आकर बरामदे में बैठ गया था। आखिर रात को ऐसा क्या हुआ कि इस वक्त वे एक-दूसरे को नोंच खाना चाहते थे! क्या वे बिस्तर में बैठकर आपस में लड़ते-झगड़ते रहे थे या कि उसने अपने शिकवों से मार्को को थका दिया था? मैं चीखकर कहना चाहता था, ‘अरे राक्षस, तुम उस परीज़ादी से रात को कैसा दुर्व्यवहार करते हो कि वह सुबह उठकर भी दुखी बनी रहती है। तुम्हारे पास कितना बड़ा खज़ाना है, उसकी कीमत तुम्हें नहीं मालूम, जैसे बन्दर के हाथ में माला आ गई हो!’’ फिर एक रोमांचक विचार मेरे मन में कौंध गया–हो सकता है कि वह नाराज़गी का बहाना कर रही हो, ताकि मैं उसकी ओर से बीच-बचाव करूँ! मार्को ने कॉफी पीकर प्याला रख दिया और कहा, ‘‘अब हमें चल पड़ना चाहिए।’’ मुझे दोबारा उससे उसकी पत्नी के बारे में पूछते हुए डर लगा। वह बड़ी बेसब्री से एक बेंत घुमा रहा था। क्या यह सम्भव था कि रात में उसने अपनी बीवी के खिलाफ इस बेंत का इस्तेमाल किया हो? मैंने उससे दोबारा यह पूछने की गलती नहीं की कि ‘क्या मैं उसको बुला लाऊँ?’ क्योंकि इससे बहुत गम्भीर स्थिति पैदा हो जाती। मैंने सिर्फ इतना ही पूछा, ‘‘क्या उनको कॉफी के बारे में मालूम है?’’

‘ “हाँ, हाँ,” मार्को उत्तेजित स्वर में चिल्लाया। “कॉफी यहीं छोड़ दो; वह खुद पी लेगी। अपनी देखभाल करने लायक अक्ल तो उसमें है।” उसने स्विच का बटन बन्द कर दिया और हम लोग कमरे से बाहर निकल आए। मैंने एक बार ही पीछे मुड़कर देखा, इस आशा में कि शायद वह खिड़की से झाँकेगी और हमें वापस बुला लेगी। ‘क्या मैं इस राक्षस के संग घूमने के लिए इतनी दूर से चल कर आया था?’ पहाड़ी के ढलान से नीचे उतरते हुए मैंने अपने-आप से यह प्रश्न पूछा। कितना अच्छा हो अगर वह ठोकर खाकर लुढ़कता हुआ पहाड़ी से नीचे खड्ड में जा गिरे! बहुत बुरा विचार था, बहुत बुरा विचार था यह। वह मुझसे आगे-आगे चल रहा था। हम दोनों अफ्रीकन शिकारियों जैसे दीख रहे थे। दरअसल उसकी पोशाक–सिर पर लोहे का टोप और मोटी जाकेट, जैसा मैं पहले बता चुका हूँ–एक जंगली अफ्रीकन शिकारी जैसी ही थी। घास और झाड़ियों के बीच से होती हुई हमारी पगडंडी घाटी की ओर जाती थी। उसके आधे मार्ग पर वह गुफा थी। मुझे उसकी तेज रफ्तार पर गुस्सा आ रहा था। वह बेंत हिलाता हुआ और अपने पोर्टफोलियो को बगल में दबाए इस विश्वास-भरे अन्दाज़ में आगे बढ़ रहा था, जैसे उसे रास्ता मालूम हो। जिस प्यार से वह पोर्टफोलियो को बगल में दबाए था, काश उसकी आधी गरमाई ही वह कहीं और दिखा पाता! मैंने अचानक पूछ ही लिया, “क्या आपको रास्ता मालूम है?” “अरे नहीं” उसने कहा। “लेकिन आप तो मेरे आगे-आगे ही चल रहे हैं।” मैंने इस वाक्य में जैसे मन का सारा व्यंग्य भर दिया था। “ओह!” वह किंचित् परेशान होकर बोला, और रुककर मार्ग से एक कदम हटते हुए बोला, “लो तुम हमें रास्ता दिखाओ,” और फिर जैसे उसने आदतन एक असंगत शब्द जोड़ दिया, “हे कृपालु रोशनी।”

‘गुफा के द्वार तक पहुँचने के लिए लेण्टाना के कुँज को पार करना पड़ता था। जंक लगे कब्ज़ों पर टिका एक विशाल फाटक खुला हुआ था। साथ ही, उखड़ी हुई ईंटों और पलस्तर का मलबा भी वहीं पड़ा था। इस गुफा की सारी छत एक ही विशाल चट्टान से ढंकी थी। किसी आदमी ने ऐसे निर्जन स्थान में क्यों इस गुफा को बनाने की तकलीफ उठाई, यह बात मेरी समझ में नहीं आती थी। मार्को ने बाहर खड़े होकर गुफा के द्वार का निरीक्षण किया। “देखते हो, यह दरवाज़ा ज़रूर बाद की चीज़ है। गुफा तो मुझे मालूम है कि ईसा की पहली शताब्दी के लगभग की है। यह द्वार और फाटक बहुत बाद की चीज़ें हैं। जानते हो, इस तरह के लम्बे द्वारों और नक्काशी किए हुए फाटकों का सातवीं-आठवीं शताब्दी में ही प्रलचन हुआ था, जब दक्षिण भारत के नरेश ऐसी चीज़ों के...” वह बोलता जा रहा था। मुर्दा और जीर्ण चीज़ें ही उसकी ज़बान को खोलती थीं और उसकी कल्पना को जगाती थीं, न कि वे चीज़ें जो जिन्दा हैं, घूमती-फिरती हैं और जिनके अंगों में स्पन्दन है। एक गाइड के रूप में मेरा कोई काम ही नहीं रहा था। उसे इन चीज़ों के बारे में मुझसे कहीं ज़्यादा ज्ञान था। गुफा में घुसते ही वह बाहर की दुनिया और उसके निवासियों को एकदम भूल गया। गुफा की छत यद्यपि नीची थी लेकिन दीवारों में एक इंच जगह भी ऐसी नहीं थी जहाँ आकृतियों के चित्र न बने हों। उसने दीवारों पर टार्च की रोशनी डाली। फिर अपनी जेब से एक शीशा निकालकर वह उसे गुफा के बाहर रख आया ताकि वह सूरज की किरणें प्रतिबिम्बित करके अन्दर गुफा की दीवारों पर प्रकाश फेंक सकें। अन्दर चमगादड़ें चक्कर काट रही थीं, फर्श टूटा था और उसमें जगह-जगह गड्ढे पड़े हुए थे। लेकिन उसे इन चीज़ों की तनिक परवाह

नहीं थी। वह तो अपने काम में तुरन्त लीन हो गया, फीते से नापने, कापी में नोट करने और कैमरा से चित्र खींचने में, और इस बीच वह लगातार बोलता जा रहा था, इसकी चिन्ता किए बगैर कि मैं उसकी बातों को सुन भी रहा हूँ या नहीं। मैं उसकी ध्वंसावशेष-संग्रही कार्रवाइयों से ऊब गया था। भित्तिचित्रों में महाकाव्यों और पुराणों में वर्णित घटनाएँ अंकित थीं। यहाँ हर प्रकार के पैटर्न और भाव चित्रित थे, जिनमें पुरुष, स्त्रियाँ, नरेश और पशु विचित्र पृष्ठभूमियों और अपने विचित्र अनुपातों में अंकित थे और उतने ही प्राचीन थे जितनी प्राचीन वहाँ की चट्टानें थी। मैंने ऐसे सैकड़ों चित्र देखे थे और अब ज़्यादा देखने में कोई मतलब नज़र नहीं आता था। मुझे इन प्राचीन चित्रों में कोई दिलचस्पी नहीं थी, जिस तरह उसे अन्य किसी चीज़ में दिलचस्पी नहीं थी। "ज़रा होशियार रहें," मैंने कहा, "इसकी दरारों में साँप-बिच्छू हो सकते हैं।" "अरे नहीं," उसने लापरवाही से कहा, "साँप-बिच्छू ऐसी दिलचस्प जगहों में नहीं रहते। इसके अलावा मेरे पास यह है," उसने बेंत हिलाते हुए कहा, "मैं उनसे समझ लूँगा। मुझे उनका डर नहीं है।" मैंने एकाएक कहा, "मुझे पहाड़ी पर कार की आवाज़ सुनाई दे रही है। अगर गफ्फूर आया है तो मुझे बंगले पर रहना चाहिए। आपको एतराज़ तो नहीं अगर मैं चला जाऊँ? मैं फिर वापस आ जाऊँगा।" उसने उत्तर दिया, "उसे रोक रखना, जाने मत देना।"

' "लौटते वक्त आप उस रास्ते से ही आइएगा, जिससे हम यहाँ आए थे ताकि आप रास्ता भूल न जाएं।" लेकिन उसने कोई जवाब नहीं दिया, चित्रों के निरीक्षण में व्यस्त रहा।

' मैं भागता हुआ बंगले पर पहुँचा। पिछले आँगन में रूककर मैंने साँस ली, फिर हाथों से अपने बाल सँवारता हुआ और अपनी मुद्रा को संयत करके मैं अन्दर दाखिल हुआ। भीतर कदम रखते ही मुझे उसकी आवाज़ सुनाई दी, "क्या मुझे ढूँढ़ रहे हो?" वह एक पेड़ के नीचे पत्थर पर बैठी थी। उसने ज़रूर मुझे पहाड़ी पर चढ़ते हुए देखा होगा। "मैं तो तुम्हें आधे मील से देख रही थी, लेकिन तुम मुझे नहीं देख सकते थे," उसने ऐसे कहा जैसे उसने कोई गलती पकड़ी हो।

' "तुम ऊपर चोटी पर थीं और मैं नीचे घाटी में था," मैंने कहा। मैं उसके पास गया और मैंने बड़े शिष्ट अन्दाज़ में उससे कॉफी पीने के बारे में पूछा। वह इस वक्त बड़ी उदास और गम्भीर दीख रही थी। मैं भी उसके पास पड़े एक पत्थर पर बैठ गया। "तो तुम अकेले लौट आए हो और शायद वे दीवारों को ताक रहे हैं," उसने कहा।

' "हाँ," मैंने संक्षिप्त उत्तर दिया।

' "वे हर जगह यही करते हैं।"

' "शायद उन्हें इसमें बहुत गहरी दिलचस्पी है, इसीलिए।"

' "और मैं? मेरी दिलचस्पी किसी और चीज़ में है।"

' "तुम्हारी दिलचस्पी किस चीज़ में है?"

' "ठंडी और जीर्ण-पुरातन दीवारों के अलावा हर चीज़ में," उसने कहा। मैंने अपनी घड़ी की ओर देखा। मुझे मार्को के पास से आए करीब एक घंटा हो गया था। मैं अपना समय बरबाद कर रहा था। समय मेरी उंगलियों में से फिसलकर बहा जा रहा था। मुझे अगर

सफलता पानी है तो मुझे इस मौके का फायदा उठाना चाहिए। मैंने साहसपूर्वक पूछा, "हर रात को शायद तुम लोग बैठकर आपस में झगड़ते हो, है न?"

' "हम लोग जब अकेले में होते हैं, तब बातें करते-करते बहस करने लगते हैं और फिर हर बात पर झगड़ते हैं। अधिकतर बातों में हमारा मतभेद रहता है। फिर वह मुझे अकेला छोड़कर चला जाता है और जब लौटता है तब हमारे बीच कोई झगड़ा नहीं रहता। बस इतनी-सी बात है।"

' "हाँ, जब तक फिर रात नहीं आती," मैंने कहा।

' "हाँ, हाँ।"

' "यह बात कल्पना में भी नहीं आती कि कोई तुमसे बहस या झगड़ा भी कर सकता है–तुम्हारे पास होना-भर कितना बड़ा सुख है!"

' उसने तपाक से पूछा, "तुम्हारा मतलब?"

' मैंने स्पष्ट शब्दों में बात समझाई। मैं ज़रूरत पड़ने पर आज अपने को बर्बाद करने के लिए भी तैयार था, लेकिन मैं आज उसको सब कुछ बता दूँगा। अगर वह मुझे ठोकर मारकर निकाल देना चाहे तो ऐसा कर सकती थी, लेकिन मेरी बात सुनने के बाद ही। मैंने अपने मन की बात कही। मैंने उसके नृत्य की तारीफ की। मैंने अपने प्रेम का निवेदन किया लेकिन बीच-बीच में उसकी कला की प्रशंसा भी करता गया। एक सांस में मैं उसे कलाकार कहता, दूसरी साँस में अपने हृदय की रानी। मेरे बोलने की तर्ज यह थी, "तुम्हारा सर्प-नृत्य कितना शानदार था! ओह, मैं सारी रात तुम्हारे बारे में सोचता रहता हूँ। तुम दुनिया की सर्वश्रेष्ठ नर्तकी हो! क्या तुम नहीं देखतीं कि मैं हर क्षण तुम्हारा ही ध्यान करता रहता हूँ? तुम्हारी चाह ही मेरे मन में बसी रहती है।"

'इसका उस पर अनुकूल असर पड़ा। वह बोली, "तुम मेरे भाई की तरह हो," ('आह, नहीं,' मैं चीखना चाहता था) और मैं तुम्हें बता रही हूँ कि आखिर होता क्या..." फिर उसने अपने नित्य प्रति के झगड़ों का पूरा विवरण सुनाया।

' "तुमने शादी ही क्यों की?" मैंने दुस्साहस करके पूछा। वह कुछ देर खामोश रही, फिर बोली, "मुझे नहीं मालूम। बस हो गई..."

' "तुमने उसकी दौलत के लिए उससे शादी की है, और इसके लिए तुम्हारे चाचा और दूसरे सगे-सम्बन्धियों ने तुम्हें सलाह दी थी," मैंने कहा।

' उसने मेरी आस्तीन पकड़कर कहा, "अच्छा बताओ, क्या तुम अन्दाज़ लगा सकते हो कि मैं किस वर्ग में पैदा हुई थी?" मैंने उसे ऊपर से नीचे तक देखकर कहा, 'सबसे उत्तम वर्ग में, वह चाहे जो भी हो। वैसे मैं वर्ग या ज़ात-पात में विश्वास नहीं करता। तुम चाहे जिस ज़ात या वर्ग में पैदा हुई हो, तुम उसके लिए गौरव और गर्व की चीज़ हो।"

' "मैं देवदासियों के एक परिवार में पैदा हुई थी, जिसने परम्परा से मन्दिरों में नृत्य करने के लिए अपने को उत्सर्ग कर दिया था। मेरी माँ, मेरी दादी और उससे भी पहले उनकी माँ और दादी–सभी देवदासियाँ थीं। मैं जब बच्ची थी, उस वक्त से ही गाँव के मन्दिर में नाचने लगी थी। तुम तो जानते हो कि हमारी ज़ात को लोग किस नज़र से देखते हैं।"

' "मेरी नज़र में यह दुनिया की सबसे पवित्र और कुलीन ज़ात है," मैंने कहा।

‘ “लेकिन लोग हमें वेश्या समझते हैं,” उसने स्पष्ट शब्दों में कहा और मुझे यह शब्द सुनकर रोमांच हो आया। “लोग हमें शरीफ या सभ्य नहीं समझते।”

‘ “पुराने ज़माने में ही लोगों के ऐसे विचार थे, लेकिन अब लोग ऐसा नहीं सोचते। वक्त बदल गया है। आज कोई ज़ात या वर्ग का भेद नहीं रहा।”

‘ “मेरी माँ ने मेरे लिए इससे भिन्न ज़िन्दगी की व्यवस्था की थी। उन्होंने मुझे छोटी उमर में ही स्कूल में पढ़ने के लिए बिठा दिया। मैंने भी मन लगाकर पढ़ाई की। मैंने अर्थशास्त्र में एम.ए. पास किया। लेकिन कालेज से निकलने पर मेरे सामने प्रश्न उठा कि मैं नर्तकी का पेशा अख्तियार करूँ या कोई और काम करूँ। एक दिन मैंने अपने यहाँ के अखबार में एक विज्ञापन पढ़ा–वैसा ही जैसा तुमने अक्सर देखा होगा–उसमें लिखा था : ‘एक धनी, अध्ययनशील व्यक्ति से विवाह के लिए सुन्दर और पढ़ी-लिखी लड़की चाहिए। जात-पांत का कोई बन्धन नहीं है। सुन्दरता और यूनिवर्सिटी की डिग्री ही आवश्यक है।’ और मैंने अपने-आप से प्रश्न किया, ‘क्या मैं सुन्दर हूँ?”

‘ “ओह, इसमें भी किसी को सन्देह हो सकता था?”

‘ “मैंने यूनिवर्सिटी की डिग्री हाथ में पकड़कर तस्वीर खिंचवाई और विज्ञापन के जवाब में भेज दी। तो इस तरह हम मिले। मार्को ने मुझे अच्छी तरह देखभाल कर मेरी डिग्री की जाँच की और फिर रजिस्ट्रार के यहाँ जाकर हमने शादी कर ली।”

‘ “क्या पहली बार देखकर तुम्हें मार्को पसन्द आया था?”

‘ “अब यह सब मुझसे मत पूछो,” उसने मुझे डाँटा। “शादी का फैसला करने से पहले हमने कई बार आपस में बहस-मुबाहिसा किया था। मेरे यहाँ लोगों के सामने यह प्रश्न था कि क्या अपने वर्ग और अपनी हैसियत से इतने ऊपर उठकर मुझे शादी करनी चाहिए। लेकिन मेरे परिवार की सभी औरतें बहुत प्रभावित थीं और वे खुशी से फूली नहीं समाती थीं कि एक इतना धनी आदमी हमारे वर्ग में शादी करने आ रहा है, और यह तय हुआ कि अगर अपने परम्परागत हुनर को छोड़ना ज़रूरी हो तो यह त्याग इस सम्बन्ध के मुकाबले में बड़ा नहीं है। मार्को के पास एक बड़ी कोठी थी, कार थी, समाज में उसकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। उसकी कोठी मद्रास से बाहर थी और वह उसमें अकेला ही रहता था; वह अपनी पुस्तकों और अपने कागज़ों के साथ रहता था।”

‘ “तो तुम्हारी सास नहीं है?” मैंने पूछा।

‘ “अगर मेरा पति एक ज़िन्दा, यथार्थ आदमी होता तो मैं कैसी भी सास के साथ रह लेती,” उसने उत्तर दिया। मैंने उसकी बात का अर्थ भांपने के लिए उसके मुख की ओर देखा। मैंने उसके कन्धे पर अपना हाथ रख दिया और उंगलियों से सहलाने लगा। “तुम्हारे बारे में सोचकर मैं बहुत उदास हो जाता हूँ– दुनिया ने कितना बड़ा हीरा खो दिया। मैं अगर मार्को की जगह होता तो तुम्हें इस संसार की रानी बना देता।” उसने मेरा हाथ नहीं हटाया। मैंने हाथ सरकाकर उसके कान की लोर सहलाई और उसके बालों से मेरी उंगलियाँ खेलने लगीं।

‘ गफ्फूर की मोटर नहीं आई। रास्ते से गुज़रती एक लॉरी के ड्राइवर ने सन्देश दिया कि गफ्फूर की मोटर खराब हो गई है और वह कल आएगा। किसी ने इस बात पर बुरा नहीं

माना। जोज़ेफ ने बहुत अच्छी तरह हमारी देखभाल की। मार्को ने कहा कि उसे दीवारों की नक्काशी के अध्ययन का मौका मिल गया है। मैंने भी बुरा नहीं माना। मैं रात के वक्त शीशे में से जंगली जानवर देखता और लड़की का हाथ अपने हाथ में ले लेता। मार्को अपने कमरे में बैठकर नोट्स का अध्ययन करने मे तल्लीन रहता।

'जब गफ्फूर की मोटर आई तो मार्को ने कहा, "मैं यहाँ और रुकना चाहता हूँ, मुझे नहीं मालूम था कि यहाँ ज्यादा वक्त लग जाएगा। क्या तुम होटल के कमरे में से मेरा काला सन्दूक ला सकते हो? उसमें कुछ कागज़ रखे हैं। अगर तुम्हें ज़्यादा फर्क न पड़े तो मैं चाहूँगा कि तुम भी यहीं रहो।"

'मैं हिचकिचाया फिर मैंने क्षण-भर के लिए लड़की की तरफ देखा। उसकी आँखों में एक मूक निवेदन था। मैं राज़ी हो गया।

'मार्को ने कहा, "अगर तुम्हारे और कामों में हर्ज न होता हो तो तुम इसे भी अपने काम का हिस्सा समझ सकते हो।"

' मैंने हिचकिचाकर कहा, "ठीक है लेकिन मैं आपकी मदद करना चाहूँगा। एक बार जब मैं किसी टूरिस्ट की ज़िम्मेदारी ले लेता हूँ तो जब तक वह सही-सलामत विदा नहीं हो जाता तब तक मुझे ज़िम्मेदारी का एहसास बना रहता है।" जब मैं मोटर में जाकर बैठा तो लड़की ने अपने पति से कहा, "मैं भी शहर वापस जा रही हूँ। मुझे अपने सन्दूक से कुछ चीज़ें निकालनी हैं।" मैंने कहा, "हो सकता है। हम लोग आज रात न लौट सकें।"

' मार्को ने अपनी बीवी से पूछा, "तुम सब कुछ सम्भाल लोगी?"

' "हाँ।"

'जब मोटर पहाड़ी सड़क के नीचे उतर रही थी तो मैंने देखा कि गफ्फूर शीशे में से बार-बार हमारी तरफ देख रहा था, हम दूर सरककर बैठ गए जहाँ तक उसकी निगाह नहीं जा सकती थी। शाम के वक्त हम होटल पहुँचे। मैं उसके पीछे-पीछे उसके कमरे में गया। "क्या हम आज रात को ही वापस लौट चलें?" मैंने पूछा।

' "क्यों? मान लो रास्ते में गफ्फूर की मोटर खराब हो जाए तो? उस सड़क पर इस मोटर का कोई भरोसा नहीं। मैं आज रात यहीं रहूँगी।"

'मैं कपड़े बदलने घर चला गया। मुझे देखते ही माँ ने सवाल करने शुरू कर दिए। उसे बहुत-सी बातें मालूम थीं। मैंने उसकी बातें अनसुनी कर दीं, नहा-धोकर मैंने अपना एक खास जोड़ा निकाला और पुराने कपड़ों की गठरी बनाकर माँ को दे दी, "दुकानवाले लड़के के हाथ ये कपड़े धोबी के यहाँ भिजवा दो और कहलवा दो कि इन्हें अच्छी तरह से धोकर इस्तरी करे। कल मुझे इन कपड़ों की ज़रूरत पड़ सकती है।"

' "छैला बनते जा रहे हो?" माँ ने गौर से मुझे देखते हुए कहा। "आजकल इतनी भगदड़ क्यों मचाते हो?" मैं कोई बहाना बनाकर वहाँ से चला आया।

'उस दिन मैंने अपने घूमने के लिए गफ्फूर की मोटर किराये पर ली। मैं सच्चे अर्थों में गाइड बन गया था। इतने उत्साह से मैंने कभी किसी यात्री को शहर नहीं दिखाया था। मैंने रोज़ी को सारा शहर दिखाया, टाउन हॉल का टॉवर दिखाया, फिर सरयू के किनारे रेत पर बैठकर हम लोगों ने नमकीन मूंगफली खाई। वह बिलकुल बच्ची की तरह पेश आ रही थी।

हर चीज़ को देखकर वह खिल उठती थी, हर चीज़ उसे पसन्द आती थी। मैं उसे शहर के नजदीक की बस्ती के बाज़ार में ले गया और कहा कि वह अपने मनपसन्द की कोई भी चीज़ खरीद ले। शायद वह पहली बार दुनिया को देख रही थी। दुकान से बाहर निकलकर गफ्फूर ने एकान्त में ले जाकर मुझे चेतावनी दी, "याद रखो वह शादीशुदा औरत है।"

' "तो क्या हुआ? तुम मुझे यह बात क्यों बता रहे हो?"

' "जनाब, नाराज़ मत होओ। मैं सिर्फ यही कहना चाहता हूँ कि ज़रा धीमी रफ्तार से चलो।"

' "गफ्फूर, तुम्हारे दिल में गन्दे विचार हैं। मैं उसे अपनी बहन समझता हूँ," मैंने यह कहकर उसकी ज़बान बन्द कर दी। उसने सिर्फ इतना कहा, "तुम ठीक कहते हो। मुझे क्या? जिसने उससे शादी की है वह यहाँ मौजूद है, और मुझे अपनी बीवी की चिन्ता करनी चाहिए।" फिर मैं दुकान के भीतर चला गया। रोज़ी ने मोर के आकार का एक चांदी का ब्रूच पसन्द किया था। मैंने वह ब्रूच खरीदकर उसकी साड़ी पर लगा दिया। फिर हम लोगों ने ताज की छत पर बैठकर खाना खाया, जहाँ से सरयू नदी की सर्पिल धारा दिखाई देती थी। जब मैंने उस दृश्य की तरफ उसका ध्यान आकर्षित किया तो वह बोली, "यह सुहावना दृश्य है। लेकिन इस बार मैंने इतनी घाटियाँ, पेड़ और नाले देखे हैं जो ज़िन्दगीभर के लिए काफी होंगे।" हम दोनों हँस पड़े। आजकल हम हर वक्त खिलखिलाते रहते थे।

' उसे बाज़ार में घूमना, होटल की भीड़ में बैठकर खाना खाना, सिनेमा देखना, बहुत पसन्द था–मालूम होता था कि इन दिनों वह इन साधारण सुखों से वंचित रही थी। मैंने सिनेमा पहुँचकर मोटर वापस लौटा दी। मैं नहीं चाहता था कि गफ्फूर मेरी गतिविधियों का निरीक्षण करे। पिक्चर देखने के बाद हम लोग पैदल होटल की तरफ चल पड़े। पिक्चर में क्या था, उसकी तरफ हमारा ध्यान नहीं गया था। मैंने बॉक्स की टिकटें खरीदी थीं। हल्के पीले रंग की क्रेप की साड़ी में वह इतनी आकर्षक लग रही थी कि लोग लगातार उसी की तरफ देखते जा रहे थे। उसकी आँखों में ज़िन्दादिली और कृतज्ञता की चमक थी। मैं जानता था कि मैंने उस पर ऐहसान किया था।

' आधी रात होने वाली थी। होटल के डेस्क पर बैठे आदमी ने उदासीन भाव से हमें कमरे की तरफ जाते देखा। इन लोगों को जिज्ञासु न होने की तालीम दी जाती है। 28 नम्बर के कमरे के सामने जाकर मैं ठिठक गया। वह दरवाज़ा खोलकर हिचकिचाहट-भरे अन्दाज़ में भीतर चली गई, और दरवाज़े को आधा खुला छोड़ गई। क्षण-भर के लिए उसने मेरी तरफ देखा–उसी तरह जैसे उसने पहले दिन देखा था। मैंने फुसफुसाकर पूछा, "क्या मैं चला जाऊँ?" "हाँ चले जाओ, गुडनाइट।" उसने क्षीण स्वर में कहा।

' "तुम्हारी इजाज़त हो तो मैं भीतर न आ जाऊँ?" मैंने चेहरे पर ज़्यादा से ज़्यादा उदासी का भाव लाकर कहा।

' "नहीं, नहीं, वापस चले जाओ।" लेकिन किसी सहजभावना से प्रेरित होकर मैंने उसे हल्का-सा धक्का देकर रास्ते से हटा दिया, और भीतर जाकर जैसे दुनिया के दरवाज़े पर ताला लगा दिया।

6

राजू इन कामों में इतना व्यस्त था कि उसे वक्त बीतने का एहसास ही न रहा। वह हमेशा व्यस्त रहता था और उसके लिए एक दिन और दूसरे दिन में कोई फर्क नहीं था। इसी तरह कई महीने (या शायद कई साल) गुज़र गए। वह मौसमों का हिसाब खास-खास घटनाओं से लगाता था, जैसे जनवरी में फसल कटती थी जब उसके भक्त उसे गन्ना और गन्ने के रस में पकी चावल की खीर लाकर भेंट करते थे। और जब वे मिठाइयाँ और फल लाकर देते थे तो वह समझ जाता था कि तमिल का नया वर्ष शुरू हो गया है। दशहरे पर लोग अतिरिक्त दीये लाकर उसके यहाँ मन्दिर में जलाते थे और औरतें नौ दिन तक खम्भोंवाले हॉल को रंगीन झंडियों और चमकदार कागज़ों से सजाती थीं। दीपावली के दिन वे उसके लिए नए कपड़े और पटाखे लेकर आते थे। वह बच्चों को खास तौर पर बुलाकर पटाखे छुड़वाता था। इस तरह उसे गर्मी, वर्षा और कुहरे के मौसमों के साथ-साथ वक्त का अन्दाज़ होता था। इस तरह तीन मौसमों के चक्र के बाद उसने वक्त का हिसाब रखना छोड़ दिया। उसे एहसास हुआ कि वक्त का हिसाब रखने से कोई फायदा नहीं।

उसकी दाढ़ी छाती तक लम्बी हो गई थी, सर के बाल पीठ तक आ गए थे। गले में उसने रुद्राक्ष की माला पहन रखी थी। उसकी आँखों में करुणा, कोमलता और बुद्धिमत्ता की ज्योति थी। गाँव के लोग उसके लिए इतने उपहार लेकर आते थे कि उसे चीज़ें जमा करने में कोई दिलचस्पी नहीं रही थी। वह शाम को सत्संग के बाद सारी चीज़ें लोगों में बाँट देता। वे लोग उसके लिए सूर्यमुखी के फूलों के हार और टोकरियों में चमेली और गुलाब की पंखुड़ियाँ भरकर लाते, जिन्हें वह औरतों और बच्चों में बाँट देता। एक दिन उसने वेलान से कहा, "मैं गरीब आदमी हूँ। तुम भी गरीब हो। फिर क्यों मुझे इतनी चीज़ें देते हो? आगे से ऐसा मत करना।" लेकिन इन बातों को बन्द करना मुमकिन नहीं था। उसके लिए उपहार लाने में लोगों को आनन्द आता था। उसके भक्त उसे स्वामीजी कहते थे और उसके रहने की जगह मन्दिर बन गई थी। 'स्वामीजी ने यह कहा है,' या 'मैं मन्दिर जा रहा हूँ,' लोगों की रोज़मर्रा की बातचीत के शब्द बन गए थे। लोगों को इस स्थान से इतना प्रेम था कि वे दीवारों पर सफेदी करते और लाल रंग की लकीरें खींचते।

छह महीने तक रोज़ शाम को बादलों की गर्जन के साथ दो घंटे तक बारिश होती थी; बाकी महीनों में वर्षा की झड़ी लग जाती थी, लेकिन बारिश के बावजूद भी लोग वहाँ जमा होते थे, वे नारियल की चटाइयाँ, छाते लेकर वहाँ आते थे। बारिश में तो भीड़ और भी बढ़ जाती थी, क्योंकि बाहरवाले आँगन में पूरी भीड़ नहीं समा सकती थी। भीतर बैठकर लोगों को सुख और ठंडक महसूस होती थी और उन्हें सत्संग दिलचस्प मालूम होता था। पेड़ों में हवा की सरसराहट और उमड़ते हुए दरिया से शाम की सभा और आकर्षक बन जाती थी (लोग बच्चों को कंधों पर बैठाकर उथले पानी में चलकर आते थे) राजू को यह मौसम बहुत

पसन्द था क्योंकि चारों ओर हरियाली छाई रहती थी, आसमान में बादल तरह-तरह के खेल खेलते थे। राजू खम्भेवाले हॉल में बैठा-बैठा सारा दृश्य देखा करता था।

अचानक साल के अन्त में उसने देखा कि आसमान में बादल नहीं आते, गर्मी का मौसम लगातार चल रहा था। राजू ने पूछा, "बारिशें कहाँ गईं?"

वेलान ने लम्बूतरा मुँह बनाकर जवाब दिया, "स्वामीजी, मौसम के शुरू की बारिश तो हुई ही नहीं। अब तक हम लोग बाजरे की फसल काट भी चुके होते, लेकिन फसल झुलस गई है। हम लोग बहुत परेशान हैं।"

एक दूसरे आदमी ने कहा, "केले के हज़ारों पौधे तबाह हो गए हैं। अगर यही हालत रही तो न जाने क्या होगा?" सब लोग परेशान दिखाई देते थे। राजू ने हमेशा की तरह सान्त्वनापूर्ण स्वर में भविष्यवाणी की, "ऐसी बातें तो होती ही रहती हैं। उनके बारे में ज्यादा चिन्ता नहीं करनी चाहिए। हमें कल्याण की आशा करनी चाहिए।" लेकिन लोग बहसें करते, "जानते हैं, स्वामी जी, हमारे मवेशियों को घास तक नसीब नहीं होती, वे मिट्टी-कीचड़ सूँघकर लौट आते हैं।" राजू के पास हर शिकायत का सान्त्वानापूर्ण उत्तर मौजूद रहता था। लोग सन्तुष्ट होकर लौट जाते थे, "महाराज, आपसे ज्यादा कौन जानता है।" कहकर वे चले जाते। राजू को याद आया कि आजकल नहाने के लिए उसे तीन सीढ़ियाँ उतरकर नीचे जाना होता है। वह नीचे उतरकर नदी के प्रवाह को देखने लगा। उसने अपनी बाईं ओर देखा जिधर नदी की धारा पर्वत-श्रेणियों को लपेटती हुई मेम्पी में अपने उद्गम-स्थान तक चली गई थी, जहाँ वह अक्सर अपने सैलानियों को ले जाता था। इतनी छोटी तलहटी, करीब सौ वर्ग फुट, जिसमें छोटा-सा मन्दिर था–आखिर यह नदी इस जगह इतनी सिकुड़ क्यों गई थी? उसने देखा कि उसके किनारे चौड़े थे, पहले से ज्यादा चट्टानें नज़र आने लगी थीं और दूसरे किनारे का कगार कुछ ज्यादा ही ऊँचा दीख रहा था। और भी लक्षण वहाँ मौजूद थे। फसल के उत्सव के समय पहले जैसा उल्लास कहीं नहीं था। "गन्ने एकदम सूख गए हैं। बड़ी मुश्किल से ढूँढ़कर हम बस इतने ही ला सके हैं। कृपा करके स्वीकार कीजिए।"

"इन्हें बच्चों में बाँट दो," राजू ने कहा। आजकल उपहार आने कम हो गए थे। किसी ने कहा, "ज्योतिषी ने कहा है कि अगले साल बारिशें बहुत जल्दी शुरू हो जाएँगी।" लोग हर वक्त बारिश के बारे में ही बातें करते थे, और उदासीन मन से व्याख्यान और दर्शन की बातें सुनते थे। राजू के गिर्द बैठकर वे अपने भय और आशाओं को व्यक्त करते थे। "स्वामीजी, क्या यह सच है कि हवाई जहाज़ों से बादलों पर ज़ोर पड़ता है और बारिश होती है? आजकल आसपास में बहुत-से हवाई जहाज़ हैं।" स्वामीजी, क्या यह सच है कि एटम बमों की वजह से बादल सूख गए हैं।" विज्ञान, पुराण, मौसमों की रिपोर्ट, पाप-पुण्य और सब तरह की सम्भावनाओं का बारिश के साथ सम्बन्ध स्थापित किया जाता था। राजू भरसक हर शंका का समाधान करने की कोशिश करता, लेकिन उसने देखा कि उसकी बातों का लोगों के मन पर कोई असर नहीं पड़ता था। उसने फतवा दिया, "तुम लोगों को इस बारे में ज्यादा नहीं सोचना चाहिए। जो लोग इन्द्र देवता के बारे में ज्यादा सोचते हैं कई बार इन्द्र देवता उन्हें तंग करता है। अगर कोई लगातार चौबीसों घंटे तुम्हारा नाम लेता रहे, तो तुम्हें कैसा लगेगा?" लोगों को इस मिसाल के मज़ाक में मज़ा आया और वे अपने-अपने घर चले

गए। लेकिन अब ऐसी स्थिति पैदा हो रही थी, जिसमें सान्त्वना के शब्द और विचारों का अनुशासन भी व्यर्थ सिद्ध हो रहा था। एक नए स्तर पर ऐसी बात घटित हो रही थी जिसपर किसी का कोई बस नहीं था, न ही लोगों के सामने कोई दूसरा रास्ता था। दार्शनिक दृष्टिकोण अपनाने से भी कोई फर्क नहीं पड़ सकता था। गायें दूध देने में असमर्थ थीं, बैलों में इतनी शक्ति नहीं थी कि हल खींच सकें। भेड़ों के बाल गिरने लगे थे, सूखे रोग से उनके पेट की हड्डियाँ उभर आई थीं।

गाँवों में कुओं का पानी सूख रहा था। औरतें दल बनाकर नदी से घड़ों में पानी भरने के लिए आती थीं। नदी का पानी भी दिन-प्रतिदिन सूखता जा रहा था। सुबह से रात तक नदी के किनारे औरतों का तांता बँधा रहता था। जब वे सामने के टीले पर से गुज़रतीं तो राजू उनकी कतारें देखता रहता। वह दृश्य चित्र सरीखा था, लेकिन उसमें चित्र की-सी शान्ति नहीं थी। वे नदी के पास आकर पानी के लिए झगड़तीं, उनकी आवाज़ों में भय, क्षोभ और अवसाद था।

धरती तेज़ी से सूखती जा रही थी। एक पगडंडी पर एक भैंस मरी हुई पाई गई। एक दिन तड़के ही वेलान ने आकर स्वामी को यह खबर दी। राजू अभी सो रहा था। वेलान ने कहा, "स्वामीजी, आप हमारे साथ चलेंगे?"

"क्यों?"

"मवेशी मरने लगे हैं," वेलान के स्वर में विधि के प्रति शान्त समर्पण भाव था।

राजू उठकर बैठ गया। उसके जी में आया कि पूछे, 'मैं इस मामले में क्या कर सकता हूँ?' लेकिन वह ऐसी बात ज़बान पर नहीं ला सकता था। उसने सान्त्वना-भरे स्वर में कहा, "अरे नहीं, ऐसा नहीं हो सकता।"

"हमारे गाँव के बाहर जंगल की पगडंडी पर एक भैंस मरी हुई पाई गई है।"

"क्या तुमने अपनी आँखों से देखा है?"

"हाँ, स्वामीजी, मैं वहीं से आ रहा हूँ।"

"इतनी बुरी हालत नहीं हो सकती, वेलान! भैंस किसी दूसरी बीमारी से मरी होगी।"

"आप आकर देखिए तो सही, अगर आप उसकी मौत का कारण समझा देंगे तो हमारे दिल का बोझ कम हो जाएगा। आप जैसे विद्वान व्यक्ति को ही वहां सारा हाल आँखों से देखना चाहिए और लोगों को समझाना चाहिए।"

ज़ाहिर था कि लोग अपना सन्तुलन खोने लगे थे, वे जैसे भयंकर दु:स्वप्न की अवस्था में से गुज़र रहे थे। स्वामीजी को ज़िन्दा या मरे जानवरों के बारे में कोई ज्ञान नहीं था, इसलिए उनका भैंस के पास जाने से कोई लाभ नहीं था। लेकिन चूँकि लोगों की यही इच्छा थी, इसलिए राजू ने वेलान से कुछ क्षणों तक रुकने के लिए कहा और फिर वेलान के साथ चल पड़ा। गाँव की गली उजाड़ दिखाई दे रही थी। बच्चे धूल में खेल रहे थे, क्योंकि स्कूल मास्टर मालगुज़ारी के अधिकारियों के नाम अर्ज़ी लेकर शहर गया था, इसलिए स्कूल बन्द था। औरतें पानी के घड़े सर पर उठाए आ-जा रही थीं, और चलते-चलते कह रही थीं, "मुश्किल से आज आधा घड़ा पानी मिला है।" कोई कहती, "न जाने दुनिया का क्या

बनेगा। स्वामीजी, आप हमें रास्ता दिखाइए।'' राजू ने हाथ उठाकर मानो कहना चाहा, 'शान्त रहो। सब ठीक हो जाएगा। मैं देवताओं से कहकर सब ठीक करवा दूँगा।' लोगों की भीड़ यही बातें दुहराती हुई राजू और वेलान के पीछे-पीछे जंगल की पगडंडी तक गई। किसी ने बताया कि साथ वाले गाँव में तो इससे भी ज्यादा बुरी घटनाएँ हो रही हैं। हैजा फैलने से हज़ारों लोग मर रहे हैं वगैरह-वगैरह। बाकी लोगों ने उस आदमी को इस तरह की अफवाहें फैलाकर लोगों में दहशत पैदा करने के लिए डाँटा। राजू ने उस बातूनी आदमी की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया।

गाँव के बाहर जंगल में जाने वाली पगडंडी पर एक भैंस मरी पड़ी थी, जिसकी हड्डियाँ बाहर निकली थीं। उसके ऊपर कौओं और गिद्धों का दल मंडरा रहा था, इन्सानों को देखकर वे दूर उड़ गए। वहाँ बड़ी बदबू आ रही थी, जिससे राजू का जी मिचलाने लगा। इस घटना के बाद से राजू उस मौसम का सम्बन्ध उस बदबू से जोड़ने लगा। हालत इतनी बिगड़ गई थी कि अब भविष्यवाणी से काम नहीं चल सकता था। राजू ने नाक को कपड़े से ढांपकर भैंस को थोड़ी देर तक देखा। फिर पूछा, ''यह किसकी भैंस थी?''

''हमारी तो नहीं है। यह साथवाले गाँव की है।'' किसी ने कहा। इस बात से लोगों को कुछ तसल्ली हुई, अगर वह दूसरे गाँव की है तो मुसीबत उनसे कुछ दूर है। अब किसी भी बहाने से, किसी भी दलील से लोगों को समझाया जा सकता था। किसी दूसरे आदमी ने कहा, ''यह तो जंगली भैंस मालूम होती है। लगता है यह पालतू नहीं है।'' यह तो और भी अच्छी बात थी। इस समस्या को सुलझाने को दूसरी सम्भावनाएँ निकल आई थीं, यह देखकर राजू कुछ आश्वस्त हुआ। भैंस की तरफ देखकर उसने कहा, ''ज़रूर किसी ज़हरीले कीड़े ने इसे काटा होगा।'' इस बात से लोगों को तसल्ली हुई। पेड़ों की सूखी टहनियों और सूखे कीचड़ को, जहाँ हरियाली का नामोनिशान तक नहीं था, देखे बगैर ही राजू वहाँ से चला गया।

राजू की इस व्याख्या से लोग बहुत खुश हुए और उन्हें बेहद तसल्ली मिली। वातावरण का तनाव अचानक शान्त हो गया। रात के वक्त मवेशियों को बाड़े में बन्द करते वक्त लोगों के दिलों में कोई चिन्ता नहीं थी। वे कह रहे थे, ''मवेशियों के लिए काफी चारा है। स्वामीजी ने कहा है कि भैंस की मौत किसी ज़हरीले कीड़े के काटने से हुई है। स्वामीजी सब कुछ जानते हैं।'' इस व्याख्या की पुष्टि के लिए रहस्यपूर्ण कारणों से मरने वाले मवेशियों की अनेक कहानियाँ सुनाई गईं। ''साँप उनके खुरों में घुस जाते हैं।'' ''कुछ ऐसी चींटियाँ भी होती हैं, जिनके काटने से मवेशी मर जाते हैं।''

इधर-उधर और मवेशी भी मरे हुए पाए गए। धरती को खुरचने पर भीतर से सिर्फ महीन मिट्टी के बादल निकलते थे। अधिकांश घरों में अनाज की कोठरियाँ खाली होने लगी थीं और गाँव के दुकानदार ने कीमतें बढ़ा दी थीं। एक तसला चावल के लिए वह चौदह आने माँगता था। एक ग्राहक ने गुस्से में आकर दुकानदार के मूँह पर तमाचा मारा। दुकानदार दरांती ले आया और ग्राहक पर टूट पड़ा। ग्राहक के हमदर्दों ने मिलकर दुकान पर धावा बोल दिया। रात के वक्त दुकानदार के रिश्तेदार और दोस्त सलाखें और छुरे लेकर आए और उन्होंने लोगों को जख्मी कर दिया।

वेलान अपने साथियों समेत कुल्हाड़ियाँ और चाकू लेकर लड़ने के लिए निकल पड़ा।

आसमान लोगों की चीख-दहाड़ों और गालियों से गूँज उठा। गाँव के बचे-खुचे भूसे को आग लगा दी और अँधेरी रात में आग की लपटें धू-धूकर उठने लगीं। रात की सुनसान हवा में राजू ने चीखों की आवाज़ सुनी और टीले के पीछे से उसने आग की लपटों को भी देखा। कुछ घंटों पहले हर चीज़ खामोश दिखाई दे रही थी। उसने सर हिलाकर जैसे अपने-आप से कहा, 'गाँव के लोग शान्त नहीं रह सकते। वे दिन-प्रतिदिन उत्तेजित होते जा रहे हैं। अगर यही हालत रही तो मुझे रहने के लिए कोई दूसरी जगह तलाश करनी पड़ेगी।' वह जाकर फिर सो गया, गाँव वालों की बातों में अब वह और ज्यादा दिलचस्पी लेने में असमर्थ था।

लेकिन अगले दिन सुबह ही उसको सारी खबरें मिल गईं। अभी उसकी नींद पूरी तरह खुली भी नहीं थी कि वेलान के भाई ने आकर बताया कि वेलान की खोपड़ी पर ज़ख्म लगे हैं और उसका शरीर झुलस गया है। उसने उन औरतों और बच्चों की सूची भी बताई जो झगड़े में ज़ख्मी हुई थे। वे लोग अपनी बची-खुची ताकत से दूसरे दल पर रात को हमला करने की योजना बना रहे थे। ये बातें सुनकर राजू दंग रह गया। अब उसे क्या करना चाहिए, यह उसे नहीं मालूम था। वह इस असमंजस में था कि उनके अभियान को रोके या अपना आशीर्वाद दे। व्यक्तिगत तौर पर वह यह महसूस करता था कि अगर वे लोग एक-दूसरे की खोपड़ियाँ तोड़ दें तो अच्छा हो, तब सूखे की सारी चिन्ता ही मिट जाएगी। उसे वेलान की हालत सुनकर तरस आया। उसने पूछा, "क्या उसे ज्यादा चोट आई है?" "अरे नहीं, थोड़ी-सी जगहों पर चोटें लगी हैं।" उसके जवाब से ऐसा लगा जैसे उसे किसी विद्यार्थी के कम नम्बरों को देखकर असन्तोष हुआ हो। राजू सोचता रहा कि उसे वेलान को देखने जाना चाहिए या नहीं। लेकिन वह अपनी जगह से हिलना-डुलना नहीं चाहता था। उसने सोचा अगर वेलान को चोटें लगी हैं तो बस, वह अच्छा हो जाएगा और वेलान के भाई ने उसकी चोटों के बारे में जो सच्चा या झूठा विवरण दिया था वह राजू के लिए सुविधाजनक था। वेलान के पास जाने की अब कोई ज़रूरत नहीं थी, उसे डर लगा कि अगर गाँववाले उसे रोज़ बुलाने लगे तो किसी न किसी बात पर उसे रोज़ बुलावा आने लगेगा और उसकी सुख-शान्ति समाप्त हो जाएगी, उसने वेलान के भाई से पूछा, "तुम कैसे बच गए?"

"ओह! मैं भी वहीं था। लेकिन उन लोगों ने मुझे नहीं मारा। अगर मारते तो मैं दस जनों को वहीं धराशायी कर देता। लेकिन मेरे भाई ने लापरवाही दिखाई थी।"

राजू ने सोचा, 'यह झाड़ू की तरह पतला-दुबला आदमी है लेकिन बढ़-बढ़कर इस तरह बातें करता है, जैसे कोई भीमकाय आदमी हो।' उसने सलाह दी–"अपने भाई से कह दो कि वह अपने ज़ख्मों पर हल्दी पोत ले।" वेलान का भाई जिस लापरवाह अन्दाज़ में बातें कर रहा था, उससे राजू के मन में शक हुआ कि कहीं उसने खुद ही तो पीछे से अपने भाई पर वार नहीं किया। इस गाँव में जो न हो थोड़ा है। सब परिवारों के भाई आपस में मुकद्दमेबाज़ी कर रहे थे, हाल ही में होने वाली सनसनीखेज़ घटनाओं को देखते हुए कोई भी आदमी कुछ कर सकता है। वेलान का भाई जाने के लिए खड़ा हो गया। राजू ने कहा, "उससे कहना कि बिस्तर में आराम करे।"

"नहीं महाराज, वह आराम कैसे कर सकता है? वह तो आज रात अपने दुश्मनों पर हमला करने जा रहा है और जब तक दुश्मनों के घर जलकर खाक नहीं हो जाते, उसे चैन

नहीं आ सकती।''

''यह अच्छी बात नहीं है,'' राजू ने कहा। वह इस लड़ाई-झगड़े के प्रसंग से चिढ़ गया था।

वेलान का भाई गाँव के मन्दबुद्धि लोगों में से था। इक्कीस बरस का होने पर भी वह निरा अहमक था और वेलान पर बोझ बनकर उसकी मुसीबतों को बढ़ा रहा था। वह दिन-भर गाँव के मवेशियों को पहाड़ियों पर चराता रहता था। तड़के ही वह मवेशियों को हाँककर ले जाता और शाम को उन्हें वापस ले आता। दिन-भर वह पेड़ की छांह तले सुस्ताता और दोपहर के वक्त उबले हुए बाजरे की एक मुट्ठी खाकर सूरज के ढकने की इन्तजार करता रहता। दिन-भर मवेशियों के सिवा वह किसी से बातें नहीं कर सकता था। वह जानवरों को बराबर समझकर उनसे बातें करता और दिल खोलकर उन्हें और उनकी पिछली पीढ़ियों को गालियाँ देता। जंगल की निस्तब्धता में दोपहर के वक्त किसी दिन भी उसकी आवाज़ की गूँज सुनाई दे सकती थी। वह लाठी लेकर गालियाँ बकता हुआ मवेशियों के पीछे जाता। उसे सिर्फ इसी काम के लायक समझा गया था और हर घर से उसे महीने में चवन्नी मिलती थी। इससे ज्यादा ज़िम्मेदारी का काम उसे नहीं सौंपा जाता था। वह गाँव के उन इने-गिने लोगों में से था जो शाम के वक्त स्वामीजी के पास जाने की बजाय घर में सोना पसन्द करते थे। आज शायद वह पहली बार यहाँ आया था। दूसरे लोग रात की लड़ाई की तैयारियों में लगे थे और वेलान का यह भाई उन लोगों में से था जो सूखा पड़ने के बाद से बेकार हो गए थे। जानवरों को सूखी रेत सूंघने के लिए भेजना और उस अहमक को महीने में चवन्नी देना गाँव के लोगों को बेतुका मालूम होता था।

आज सुबह उसे किसी ने स्वामीजी के नाम सन्देशा देकर नहीं भेजा था, बल्कि घबराहट के मारे वह खुद-ब-खुद मन्दिर में स्वामीजी का आशीर्वाद लेने के लिए आया था। गाँव वाले लड़ाई-झगड़े की बातों की तरफ स्वामीजी का ध्यान कतई नहीं दिलाना चाहते थे, हालांकि लड़ाई के बाद वे अपने कारनामों को घटाकर स्वामीजी को बताते। लेकिन यह लड़का खुद-ब-खुद यह खबर पहुँचाने आया था और गाँववालों की करतूतों का पक्ष ले रहा था। उसने क्रुद्ध स्वर में पूछा, ''स्वामीजी, उन लोगों ने मेरे भाई के चेहरे पर क्यों चोटें पहुँचाईं? क्या उन्हें ऐसे कामों के लिए छूट दे दी जाए?'' राजू ने धीरज से उसे दलील दी, ''लेकिन तुम्हीं लोगों ने पहले दुकानदार को पीटा था न?'' लड़के ने इस बात का शाब्दिक अर्थ लगाया और कहा, ''मैंने तो दुकानदार को नहीं पीटा था। जिसने उसे पीटा था उसका नाम...'' उसने गाँव के अनेक लोगों के नाम बताए। राजू इतना उकता गया था कि लड़के की गलती सुधारने या उसकी समझ बढ़ाने में उसे कोई दिलचस्पी नहीं थी। उसने सिर्फ इतना ही कहा, ''झगड़े-फसाद से कोई फायदा नहीं। किसी को झगड़ना नहीं चाहिए।'' उस लड़के के सामने शान्ति की नैतिकता पर भाषण देना नामुमकिन था, इसलिए उसने केवल यही कहा, ''किसी को भी झगड़ा-फसाद नहीं करना चाहिए।'' ''लेकिन वे लोग जो झगड़ते हैं! वे आकर हमें पीटते हैं!'' लड़के ने बहस शुरू की और फिर सोच-विचार के बाद बोला, ''वे जल्द ही हम लोगों को मार डालेंगे।'' राजू ने परेशानी महसूस की। उसे इतना उत्पात पसन्द नहीं था। इससे गाँव की शान्ति में विघ्न पड़ सकता था और पुलिस भी वहाँ पहुँच सकती थी। वह नहीं चाहता था कि बाहर का कोई भी आदमी गाँव में आए। अचानक वह

रचनात्मक ढंग से इस समस्या के बारे में सोचने लगा। उसने लड़के की कोहनी पकड़कर कहा, "जाओ, जाकर वेलान और बाकी लोगों से कह दो कि मुझे उनका यह लड़ाई-झगड़ा पसन्द नहीं है।...उन्हें क्या करना चाहिए यह मैं बाद में बता दूँगा।" लड़का अपनी आदत के अनुसार कोई दलील देने ही वाला था कि राजू ने अधीर स्वर में कहा, "बोलो मत, मैं जो कहता हूँ उसे सुनो।"

इस आकस्मिक तेज़ी को देखकर लड़के ने डरकर कहा, "हाँ महाराज।"

"तुम्हारा भाई जहाँ भी हो, उसे जाकर कह दो कि अगर वे लोग नेक न बने तो मैं कभी खाना नहीं खाऊँगा।"

"क्या चीज़ नहीं खाएंगे?" लड़के ने विस्मित भाव से पूछा।

"उन्हें कह दो कि मैं भूखा रहूँगा। सवाल मत पूछो। जब तक वे नेक नहीं बनेंगे, मैं भूखा रहूँगा।"

"नेक? कहाँ?"

दरअसल ये बातें लड़के की समझ से बाहर थीं। वह फिर पूछना चाहता था, कौन-सी खाने की चीज़?" लेकिन वह डर के मारे चुप रहा। विस्मय से उसकी आँखें फटी रह गईं। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर गाँववालों के झगड़े और इस आदमी के भूखे रहने में क्या सम्बन्ध है। वह सिर्फ यही चाहता था कि स्वामीजी उसकी बांह छोड़ दें। उसने महसूस किया कि यहाँ अकेले आकर उसने भारी गलती की है। स्वामी का दाढ़ीवाला चेहरा उसके चेहरे के नज़दीक सटा था–उसे देखकर लड़का भयभीत हो उठा था। उसने सोचा शायद स्वामी उसे कच्चा ही न चबा जाए। वह वहाँ से निकलने के लिए बेचैन हो रहा था, इसलिए उसने कहा, "अच्छा महाराज, मैं यह काम कर दूँगा।" ज्योंही राजू ने उसकी बांह छोड़ी, त्योंही वह क्षण-भर में रेतीले किनारे को पार करके अदृश्य हो गया।

जब वह गाँव के बुज़ुर्गों की पंचायत में पहुँचा तो वह हाँफ रहा था। गाँव के बीचों-बीच एक चबूतरे पर बैठकर लोग वर्षा के बारे में बहस कर रहे थे। एक पुराने पीपल के पेड़ के गिर्द ईंटों का चबूतरा बना था, जिसके नीचे पत्थर की मूर्तियाँ रखी थीं। लोग अक्सर इन मूर्तियों को तेल लगाकर उनकी पूजा करते थे। यह चबूतरा एक प्रकार से टाउन हॉल का काम देता था। यह जगह खूब खुली और ठण्डी थी, एक तरफ बैठकर मर्द स्थानीय समस्याओं पर सोच-विचार करते थे, दूसरी तरफ सर पर टोकरियाँ ढोने वाली औरतें आराम करती थीं, बच्चे एक-दूसरे के पीछे भागते थे और गाँव के कुत्ते सुस्ताया करते थे। यहीं गाँव के लोग बैठकर बारिश, आज रात होने वाले झगड़े और उसके दांव-पेंच के बारे में बहस कर रहे थे। इस अभियान को लेकर उनके मन में कई तरह के सन्देह उठ रहे थे। इस मामले में स्वामीजी का दृष्टिकोण क्या होगा, यह बाद में देखा जाएगा। हो सकता है कि वे झगड़ों को पसन्द न करें। जब तक उनके दिमाग में सारा कार्यक्रम स्पष्ट नहीं हो जाता तब तक स्वामीजी के पास इन्हें नहीं जाना चाहिए। रही दूसरे दल की बात सो उन लोगों को सज़ा ज़रूर मिलनी चाहिए। बहस करने वाले बहुत-से लोगों के शरीरों पर चोटों के निशान थे। लेकिन उन्हें पुलिस का डर था। उन्हें याद आया कि पिछली बार जब दो दलों में लड़ाई हुई थी, तो सरकार ने वहाँ एक स्थायी पुलिस चौकी बैठा दी थी, गाँव के लोगों को

सिपाहियों के लिए पैसा और खाना जुटाना पड़ता था। रणनीति पर विचार करने वाली इस गोष्ठी में वेलान का भाई जा घुसा। वातावरण का तनाव बढ़ गया। वेलान ने पूछा, "क्या है भाई?" बोलने से पहले लड़का साँस लेने के लिए रूका। लोगों ने उसे कंधे से झकझोरना शुरू किया। अब वह घबराकर बड़बड़ाने लगा। अन्त में उसने कहा, "स्वामीजी कहते हैं कि उन्हें खाना नहीं चाहिए। वहाँ खाना लेकर मत जाना।"

"क्यों? क्यों?"

"क्योंकि, क्योंकि...बारिश नहीं हो रही।" अचानक उसे झगड़े का ख्याल आया और उसने कहा, "स्वामीजी ने यह भी कहा है कि किसी किस्म का झगड़ा नहीं होना चाहिए।"

"तुम्हें किसने वहाँ जाने के लिए कहा था?" वेलान ने रौबीले अन्दाज में पूछा।

मैं...मैंने नहीं कहा, लेकिन जब मैं वहाँ पहुँचा...तो उन्होंने पूछा और मैंने उनसे कहा..."

"तुमने उनसे क्या कहा?" लड़का यकायक घबरा गया। वह जानता था कि अगर उसने बता दिया कि उसने झगड़े का ज़िक्र किया था तो उस पर कड़ी मार पड़ेगी। वह नहीं चाहता था कि कोई उसके कंधे पकड़कर झकझोरे–दरअसल उसे यह कतई पसन्द नहीं था कि कोई उसके किसी अंग को पकड़कर झकझोरे। उसे इस बात का दु:ख था कि वह इस मामले में व्यर्थ ही फँस गया था। इन लोगों से कोई सम्बन्ध न रखना ही बेहतर था। इन लोगों को अगर मालूम हो गया कि उसने स्वामीजी को झगड़े की खबर दी है तो ये लोग उसका कन्धा तोड़ देंगे। इसलिए उसने सारे मामले पर परदा डालने का निश्चय किया। उसने आँखें मिचकाईं। उन्होंने उससे फिर पूछा, "तुमने उनसे क्या कहा?"

"यही कि बारिश नहीं हो रही," लड़के ने सोचकर तत्काल उत्तर दिया। उन्होंने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा, "बड़े भारी ज्योतिषी हो जो यह खबर सुनाने के लिए वहाँ दौड़े गए! उन्हें शायद तुम्हारे बताने से पहले इस बात का पता नहीं था!" इसके बाद उन्होंने हँसकर सारी घटना को भूलने की कोशिश की।

फिर उसको उस सन्देश की याद आई जो उसे पहुँचाने के लिए कहा गया था। उसने सोचा कि उसके बारे में अभी बता देना ठीक होगा, नहीं तो अगर उस महान व्यक्ति को उसकी गफलत का पता चल गया तो वह उसे शाप दे देगा। इसलिए उसने फिर शुरू से बात शुरू करते हुए कहा, "स्वामीजी उस समय तक किसी तरह का भोजन नहीं स्वीकार करेंगे, जब तक सब ठीक नहीं हो जाता।" उसने यह सूचना इतने गम्भीर स्वर में दी कि लागों ने हठात् उससे पूछा, "उन्होंने क्या कहा था? हमे ठीक-ठीक बताओ।" लड़के ने एक क्षण सोचकर कहा, "अपने भाई से कह देना कि अब मेरे लिए भोजन न लाए। मैं भोजन त्यागकर उपवास करूँगा। मैं अगर उपवास करूँगा तो सब ठीक हो जाएगा। सभी कुछ ठीक हो जाएगा।" उन्होंने भौंचक होकर लड़के की ओर देखा। लड़का मुस्कराया। वह खुश था कि उसे इतना महत्त्व दिया जा रहा था। लोग थोड़ी देर तक चिन्ता में डूबे जहाँ के तहाँ खड़े रहे।

और फिर उनमें से एक ने कहा, "इस मंगल प्रदेश का सौभाग्य है कि हमारे बीच स्वामीजी जैसा महान व्यक्ति मौजूद है। वह महात्मा जैसा आदमी है। महात्मा गाँधी ने जब

उपवास किया था तब इस देश में कितनी बड़ी बातें घटित हुई थीं! हमारे स्वामीजी भी वैसे ही पहुँचे हुए आदमी हैं। वे अगर उपवास करेंगे तो बारिश ज़रूर होगी। हम लोगों पर अपने अगाध प्रेम के कारण ही उन्होंने इतनी यन्त्रणा झेलने का फैसला किया है। इससे बारिश ज़रूर होगी और हमें बड़ी मदद मिलेगी। एक बार एक आदमी ने इक्कीस दिन का उपवास किया तो इतनी बारिश हुई कि पूरा जल-प्लावन हो गया। सिर्फ उन महान आत्माओं की बदौलत ही, जो ऐसे कार्य...'' सारे वातावरण में जैसे बिजली दौड़ गई थी। वे उस झगड़े को तथा अपनी आपस की अन्य छोटी-मोटी परेशानियों और बहसों को भूल गए थे।

सारे गाँव में एक उत्साह की लहर उमड़ पड़ी। और सब बातें इस समय छोटी और बेमानी लगने लगीं। किसी ने आकर खबर दी कि नदी के उद्गम की दिशा में रेती पर एक घड़ियाल मरा पाया गया है। पानी के बिना वह सूखी बालू पर सूरज की तपती किरणों से झुलस गया था। किसी और ने आकर खबर दी कि पड़ौस के गाँव की झील का पानी तेजी से सूख रहा था और अब झील के बीचों-बीच एक मन्दिर का स्तूप नज़र आने लगा था, जो एक शताब्दी पहले जब झील पैदा हुई थी, तब उसमें डूब गया था। उस मन्दिर के भीतरी कक्ष में भगवान की मूर्ति अब भी ज्यों की त्यों सुरक्षित थी–इतने दिनों पानी में डूबी रहने के बाद भी उसको कोई क्षति नहीं पहुँची थी और मन्दिर के चारों कोनों पर नारियल के जो चार वृक्ष थे वे भी वैसे ही खड़े हैं।...हर घंटे इस करिश्मे के बारे में और ताजे ब्यौरे प्राप्त होते जा रहे थे। आसपास के गाँवों के सैकड़ों आदमी झील की सूखी तलहटी पर चलकर मन्दिर का दर्शन करने पहुँच गए थे और कुछ लापरवाह लोगों को अपने प्राणों से भी हाथ धोने पड़े थे क्योंकि पनियारी मिट्टी ने उन्हें निगल लिया था। इन सब खबरों ने सब लोगों में जबर्दस्त दिलचस्पी पैदा कर दी थी। अब वे उस दुकानदार के प्रति भी उदारता दिखाने को तैयार थे जिसने अपने ग्राहक पर हाथ छोड़ा था। ''जो भी हो, उसको भी तो दुकानदार को छिनाल का बेटा नहीं कहना चाहिए था, यह उचित शब्द नहीं है।''

''यह भी ठीक है कि लोग अपने रिश्तेदारों की मदद करते हैं, वरना रिश्तेदारों का फायदा ही क्या?'' वेलान अपने माथे की चोट के बारे में सोचने लगा। दूसरे लोगों को भी अपनी किस्म-किस्म की चोटों का ध्यान आया। वे यह फैसला न कर सके कि किस हद तक वे इन गलतियों को माफ कर सकते हैं। यह सोचकर उन्हें तसल्ली हुई कि दूसरे पक्ष के लोग भी अपनी चोटों को सहला रहे होंगे, यह विचार बहुत सन्तोषजनक था। अचानक उन्होंने तय किया कि अगर कोई मध्यस्थ आकर बीच-बचाव करे तो इस झगड़े को रफा-दफा किया जा सकता है–बशर्ते, दूसरे पक्ष के लोग भी जलाए गए भूसे के ढेरों को हर्जाना दें और इस पक्ष के नेताओं को एक दावत भी दें...वे शान्ति की शर्तों पर बहस करने लगे फिर एक साथ खड़े होकर उन्होंने घोषणा की, ''चलो सब जनें स्वामीजी के पास चलें। वे हमारा उद्धार करेंगे।''

राजू हमेशा की तरह खाने और उपहारों का इन्तजार कर रहा था। उसकी टोकरी में फल और खाने-पीने की दूसरी चीज़ें रखी थीं, लेकिन उसे उम्मीद थी कि लोग दूसरी किस्म की चीज़ें लाएंगे। उसने सुझाव दिया था कि वे उसके लिए गेहूँ और चावल के आटे के साथ कुछ मसाले भी लाकर दें। मुँह का स्वाद बदलने के लिए वह कुछ नई चीज़ें पकाना चाहता था। अपनी ज़रूरत को एक विशेष ढंग से व्यक्त करता था। आम तौर पर वह वेलान को

एकान्त में ले जाकर कहता, "देखो अगर थोड़ा-सा चावल का आटा और लाल मिर्च आ जाए तो बुधवार के दिन मैं कोई नया काम..." फिर वह जीवन का कोई सिद्धान्त प्रतिपादित करता कि खास तौर पर बुधवार को वह चावल के आटे के साथ अमुक मसाला पसन्द करता है। श्रोतागण सोचते कि यह भी कोई आध्यात्मिक आवश्यकता है जो स्वामीजी के आत्मिक अनुशासन के लिए ज़रूरी है, ताकि अलौकिक शक्तियों के साथ उनका सम्बन्ध सन्तुलित रह सके। राजू को 'बोंडा' बहुत पसन्द था। रेलवे स्टेशन पर जब भी बोंडा बेचने वाला यात्रियों के पास जाता तो राजू ज़रूर उसे खरीदता। बोंडा आटा, आलू, प्याज के टुकड़े, धनिया और हरी मिर्च डालकर बनाया जाता है। आह, वह कितनी स्वादिष्ट वस्तु थी, हालाँकि दुकानदार तलने के लिए मिट्टी के तेल का भी इस्तेमाल करने से न हिचकिचाता अगर उससे फायदा रहता। फिर भी उसका बनाया हुआ बोंडा बहुत स्वादिष्ट होता था। जब राजू उससे बोंडा बनाने का तरीका पूछता तो दुकानदार कहता, "बस अदरक का छोटा-सा टुकड़ा ले लो," फिर वह उसमें पड़ने वाले मसालों का बखान करने लगता। अभी कुछ दिन पहले अपने भक्तों के सामने भगवद्गीता का उपदेश करते-करते राजू के दिल में तीव्र इच्छा हुई कि वह अपने हाथों से बोंडा तैयार करे। अब उसके पास कोयले की अंगीठी और कड़ाही भी थी। भला अच्छी तरह से गुंधे हुए आटे को खौलते हुए तेल में डालने से अधिक मधुर और संगीतमय कौन-सी आवाज़ हो सकती है? उसने वेलान के आगे अपनी इच्छाएँ बड़े सूक्ष्म ढंग से व्यक्त की थीं।

उसे जब टीले के पार से आती हुई आवाज़ें सुनाई दीं तो वह आश्वस्त हो गया। वह अपने मुख की मुद्राओं को सुस्थिर करके अपने पेशे का अभिनय करने के लिए तैयार हो गया। उसने अपनी दाढ़ी और केशों पर हाथ फेरा और अपने आसन पर एक पुस्तक लेकर बैठ गया। आवाज़ें जब नज़दीक पहुँची तो उसे मालूम हुआ कि और दिनों से आज ज्यादा बड़ी भीड़ बालू को पार करके आ रही है। पहले तो उसे आश्चर्य हुआ, फिर उसने सोचा कि वे लोग शायद इस बात से खुश हो रहे हैं कि उसने मारपीट को आगे बढ़ने से रोक दिया था। उसे भी खुशी थी कि आखिरकार उसने कुछ तो कर दिखाया था और गाँव की रक्षा कर ली थी। वेलान का मूर्ख भाई शायद इतना बुरा लड़का नहीं था। उसने आशा की कि वे लोग बोरी में आटा ज़रूर लाएंगे। उनके आते ही आटे की माँग करना उचित नहीं होगा। वे ज़रूर जाने से पहले उसे रसोई घर में रख जाएंगे।

स्तम्भों वाले मन्दिर के हाल के पास पहुँचकर उन लोगों ने अपनी चाल और आवाज़ें धीमी कर लीं। औरतें तुरन्त फर्श झाड़ने और मिट्टी के दीयों में तेल भरने में लग गईं। दस मिनट तक राजू ने न तो उनकी ओर देखा न उनसे कुछ कहा, बल्कि अपनी पुस्तक के पन्ने पलटता रहा। वह यह जानने के लिए उत्सुक था कि बेलान के शरीर में अभी भी कुछ साबित बचा है या नहीं। उसने आँख बचाकर वेलान के माथे पर चोट के निशानों को देखा और फिर चारों ओर उड़ती हुई नज़र डाली। उसे लगा कि इस मारपीट में उतना नुकसान नहीं हुआ जितने की उसने कल्पना की थी। उसने फिर पुस्तक पढ़ना शुरू कर दिया और पूरे दस मिनट बाद ही उसने निगाह उठाकर उपस्थित भीड़ का सर्वेक्षण किया। उसने अपने भक्तों की ओर देखा, फिर वेलान पर अपनी दृष्टि गड़ाकर राजू ने कहा, "भगवान कृष्ण ने यहाँ पर कहा है", उसने रोशनी के आगे पुस्तक का पृष्ठ करके संस्कृत का एक श्लोक पढ़ा।

"जानते हो इसका क्या मतलब है?" इसके बाद राजू एक लम्बे-चौड़े दार्शनिक विवेचन में लग गया, जिसमें उसने स्वादिष्ट भोजन करने से लेकर ईश्वर की नेकी में पूर्ण विश्वास रखने तक की जटिल समस्याओं की व्याख्या कर डाली। वे लोग बिना बोले खामोश उसका व्याख्यान सुनते रहे और जब एक घंटे के बाद वह साँस लेने के लिए रुका, तो वेलान ने कहा, "आपकी प्रार्थना को भगवान ज़रूर सुनेंगे और हमारे गाँव की रक्षा करेंगे। गाँव का हर प्राणी दिन-रात यही दुआ माँगता रहता है कि आप इस तपस्या से सफल होकर निकलें।" राजू यह बात सुनकर उलझन में पड़ गया। लेकिन उसने सोचा कि इतने ऊँचे और अलंकारपूर्ण शब्दों में तारीफ करने की तो इन लोगों की आदत ही है, दरअसल वे उसके प्रति अपनी कृतज्ञता जता रहे थे कि उसके उपदेश से उन्हें यह समझ आ गई थी कि मारपीट और झगड़ा जारी रखने में किसी का लाभ नहीं था। लोग और भी मुखर होकर उसकी तारीफ के पुल बाँधने लगे। एक स्त्री ने आकर उसके चरण छू लिए। इसके बाद दूसरी ने उस स्त्री का अनुकरण किया। राजू चिल्लाया, "क्या मैंने पहले नहीं बताया कि मैं यह चरण-वरण छूना कतई पसन्द नहीं करता? किसी इन्सान को दूसरे इन्सान के आगे कभी नहीं झुकना चाहिए।" इस पर दो-तीन आदमी उठकर आगे आए, उनमें से एक ने कहा, "आप कोई 'दूसरे इन्सान' नहीं हैं। आप तो एक महात्मा हैं। आपके चरणों की धूल पाकर हम अपने को धन्य समझते हैं।"

"अरे नहीं, नहीं, ऐसा मत कहो," राजू ने अपने पैर पीछे खींचने की कोशिश की। लेकिन उन्होंने उसको घेर लिया था। उसने अपने पैरों को चादर से ढंकने की चेष्टा की। उसे पैरों को छिपाने-हटाने की यह सारी क्रिया बड़ी हास्यास्पद लगी। लेकिन उनको लोगों के हाथों से बचाकर रखने की कोई जगह नहीं थी। वे चारों ओर से उसको खींच रहे थे और बगलों में गुदगुदाने से वह खड़ा हो सके तो वे इसके लिए भी तैयार थे। उसने महसूस किया कि अब उसे इस प्रदर्शन से मुक्ति नहीं मिलेगी, इसलिए इन लोगों की इच्छा पूरी कर देने में ही अपनी भलाई है। भीड़ में से हरेक बारी-बारी से उसके पैर छूकर पीछे हट गया था, लेकिन ज़्यादा दूर नहीं। वे उसे घेर कर खड़े थे और वहाँ से हटने का नाम नहीं लेते थे। सभी उसके पैरों की ओर एक नए अन्दाज़ से ताक रहे थे। वातावरण में एक ऐसी गम्भीरता छा गई थी, जैसी उसने पहले कभी नहीं देखी थी। वेलान ने कहा, "आपकी तपस्या भी महात्मा गाँधी के समान है। वे हमारी रक्षा के लिए आपके रूप में अपना प्रतिनिधि छोड़ गए हैं।" अपने अनघड़ और अटपटे शब्दों में वे भरसक उसका धन्यवाद कर रहे थे। कभी-कभी वे सब एक साथ बोल पड़ते और शोरगुल-सा मच जाता। कभी वे एक वाक्य शुरू करते लेकिन उसको पूरा न कर पाते। उसे महसूस हुआ कि वे लोग अपनी सच्ची भावना के आवेश में बोल रहे थे। वे कृतज्ञतापूर्वक अपने भाव व्यक्त कर रहे थे, यद्यपि उनकी भाषा अति-रंजनापूर्ण थी। उनकी बातों का सिर-पैर समझ में नहीं आता था, लेकिन राजू के प्रति उनकी भक्ति पर सन्देह नहीं किया जा सकता था। उसके प्रति उनके व्यवहार में इतनी ऊष्मा थी कि राजू को महसूस हुआ कि ऐसी मन:स्थिति में उसके पैर छूकर वे ठीक ही कर रहे थे। दरअसल, उसने यह भी महसूस किया कि शायद वह खुद भी नीचे झुककर अपने पैरों की धूलि अपनी आँखों से लगा सकता था। उसे लगा कि उसके व्यक्तित्व में एक गरिमायुक्त प्रकाशपुंज है...लोग रोज के वक्त लौटने की बजाय वहीं रूके रहे।

पिछले महीनों में आज पहली बार लोग उसके लिए खाना नहीं लाए थे, चूँकि वेलान का खयाल था कि आज स्वामीजी ने व्रत रखा है। चलो ठीक ही हुआ। जब वे लोग उसके व्रत को इतना महत्त्व देते हैं तो राजू उनसे यह तो नहीं पूछ सकता था, 'मेरे लिए बोंडे का मसाला कहाँ है?' यह सवाल अशोभनीय होता। बाद में इस बारे में बात करने में कोई हर्ज नहीं होगा। लोगों ने सोचा था कि उनका फसाद बन्द करने के लिए राजू ने व्रत रखा था, वह उन्हें यह नहीं बताएगा कि वह दिन में दो बार खाना खा चुका है, वह इस बारे में कुछ नहीं कहेगा और अगर लोगों को महसूस हो कि थकान से उसकी आँखें मुंदी जा रही हैं, तो यह उचित ही होगा। जब सारी कार्रवाई खत्म हो गई है तो ये लोग घर क्यों नहीं जाते? उसने वेलान को इशारे से अपने पास बुलाकर कहा, "बच्चों और औरतों को वापस क्यों नहीं भेज देते? क्या देर नहीं हो रही?" लोग आधी रात के करीब वहाँ से चले गए, लेकिन वेलान खम्भे का सहारा लेकर बैठा रहा, जहाँ वह शाम से बैठा था। राजू ने पूछा, "तुम्हें नींद नहीं आ रही?"

"नहीं महाराज! आप हम लोगों के लिए जो कुछ कर रहे हैं उसे देखते हुए तो जागते रहना कोई बड़ी कुर्बानी नहीं है।"

"इस बात को ज़्यादा महत्त्व मत दो। मैं सिर्फ अपना फर्ज़ निभा रहा हूँ। उससे ज़्यादा कुछ नहीं कर रहा। अगर तुम चाहो तो घर लौट सकते हो।"

"नहीं महाराज, कल सुबह जब मुखिया ड्यूटी देने के लिए आएगा, तब मैं जाऊँगा। वह पाँच बजे आएगा और दोपहर तक रहेगा। मैं घर जाकर काम-काज देखूँगा और घर लौट आऊँगा।

"ओह, यह ज़रूरी नहीं है कि कोई हर वक्त यहाँ रहे। मैं अपनी देखभाल अच्छी तरह कर सकता हूँ।"

"महाराज, कृपा करके यह काम हमारे जिम्मे रहने दें। हम सिर्फ अपना फर्ज निभा रहे हैं। महाराज, आप बहुत बड़ी कुर्बानी कर रहे हैं। हम कम से कम इतना तो कर सकते हैं कि आपके नजदीक रहें। आपके दर्शनों से हमें लाभ होता है, महाराज।"

इस दृष्टिकोण से राजू का हृदय द्रवित हो उठा। लेकिन उसने सोचा कि अब मामले की गहराई में जाने का अवसर आ गया है। इसलिए उसने कहा, "तुम ठीक कहते हो। त्याग करने वाले की सेवा करने वाला व्यक्ति भी प्रशंसा का पात्र है। शास्त्र यही कहते हैं। तुम्हारी बात ठीक है। मैं ईश्वर को धन्यवाद देता हूँ कि मेरी कोशिश सफल हो गई है और तुम लोगों में सुलह हो गई है। मेरे लिए यही चिन्ता का विषय था। अच्छा हुआ, सारे मामले सुलझ गए। अब तुम घर जा सकते हो। कल मैं पूर्ववत् भोजन करूँगा और मेरी तबियत ठीक हो जाएगी। याद रखना, मेरे लिए चावल का आटा, हरी मिर्च और... " भक्ति-भाव के कारण वेलान अपने आश्चर्य को शब्दों में व्यक्त न कर सका। लेकिन वह अपनी जबान पर भी काबू न रख सका। उसने पूछा, "महाराज, आपका क्या ख्याल है, कल बारिश होगी?" 'खैर...' राजू ने क्षण-भर के लिए सोचा। 'कार्य-सूची में यह नया विषय कहाँ से आ टपका?' उसने जवाब दिया, "क्या पता? सब ईश्वर की मर्ज़ी से होता है। हो सकता है, कल बारिश हो।" अब वेलान ने नज़दीक आकर बताया कि उसके भाई ने जाकर गाँव के लोगों पर क्या असर डाला था और लोगों को राजू से क्या-क्या उम्मीदें हैं, इस बात का सांगोपांग वर्णन वेलान

ने किया। राजू घुटनों तक गहरे पानी में खड़ा होकर आसमान की तरफ ताकेगा, दो हफ्तों तक मन्त्रों का जाप करेगा और इस बीच व्रत रखेगा–लोगों का यही खयाल है कि फिर ज़रूर बारिश होगी, बशर्ते तप करने वाले की आत्मा पवित्र हो और वह महात्मा हो। आसपास के सभी गाँवों के लोग आनन्दविभोर हो रहे थे, क्योंकि एक महात्मा तप करने जा रहा था।

वेलान के स्वर में इतनी गम्भीरता थी कि राजू की आँखों में आँसू आ गए। उसे याद आया कि कुछ दिन पहले ही उसने श्रोताओं के सामने इस प्रकार की तपस्या का ज़िक्र किया था और यह भी बताया था कि वह तपस्या किस तरह सम्पन्न हो सकती है। उसने अपनी माँ से इस बारे में जो सुना था, उसमें कुछ मनगढ़न्त बातें भी जोड़ दी थीं। इस व्याख्यान से श्रोताओं की शाम कट गई थी और वेलान उनका ध्यान सूखे से हटाने में सफल हुआ था। उसने लोगों से कहा था, "सही मौका आने पर सब ठीक हो जाएगा। अचानक कोई ऐसा व्यक्ति प्रकट होगा जो आपके लिए बारिश लाएगा।" लोगों ने इन शब्दों की अपने ढंग से व्याख्या की थी और वे उसके शब्दों को वर्तमान स्थिति पर लागू कर रहे थे। राजू को लगा कि अब उसने अपने लिए ऐसी परिस्थितियाँ पैदा कर ली है जिनसे उसे मुक्ति नहीं मिल सकती। वह वेलान के सामने अपना विस्मय व्यक्त नहीं कर सकता था। उसे लगा कि आखिरकार उसे गम्भीर बनाना पड़ेगा और अपने ही शब्दों की कीमत समझनी पड़ेगी। इस सारे मामले पर सोच-विचार करने के लिए उसे समय और एकान्त की ज़रूरत थी। सबसे पहला कदम उसने यह उठाया कि वह अपने उच्चासन से नीचे उतर कर सोचने लगा। इस आसन ने उसे महिमा-मण्डित कर दिया था। उसे लगा कि उस ऊँचाई पर बैठने से लोग उसे साधारण व्यक्ति नहीं समझते। उसे अपनी बनाई सृष्टि की विशालता का आभास पहली बार हुआ। पत्थर की उस चौकी पर उसने अपना रौबदार सिंहासन बना लिया था और अपने क्षुद्र व्यक्तित्व में से एक भीमकाय व्यक्तित्व का निर्माण किया था। वह अचानक उस चौकी को छोड़कर खड़ा हो गया मानो किसी बर्र ने उसे डंक मार दिया हो। वह वेलान के पास गया। उसके स्वर में सच्ची विनय और भय था। उसकी गम्भीर मुद्रा को देखकर वेलान चुपचाप बैठा रहा, मानों किसी सन्तरी को काठ मार गया हो।

"सुनो वेलान, आज रात और कल के दिन मुझे एकान्त चाहिए। तुम कल रात आकर मुझसे मिलना तभी मैं तुमसे बात करूँगा। उससे पहले मैं न तो तुमसे, न किसी और से मिलना चाहता हूँ।" यह बात वेलान को इतनी रहस्यपूर्ण और बड़ी मालूम हुई कि वह चुपचाप उठकर खड़ा हो गया। उसने पूछा, "महाराज, तो मैं आपको कल अकेला मिलूं?"

"हाँ, हाँ, बिल्कुल अकेले।"

"बहुत अच्छा, स्वामी। कारण तो आप ही जानें। 'क्या' और 'क्यों' पूछना हम लोगों का काम नहीं। यहाँ लोगों का जमघट शुरू होगा, मैं उन्हें पीछे हटाने के लिए नदी के किनारे अपने आदमी खड़े कर दूँगा। यह काम कठिन तो ज़रूर होगा, लेकिन अगर आपकी ऐसी आज्ञा है तो इसका पालन किया जाएगा।" फिर वह स्वामीजी को प्रणाम करके चला गया। कुछ देर तक राजू खड़ा उसे देखता रहा, फिर वह एक भीतरवाले कमरे में गया, जिसे वह शयन-कक्ष की तरह इस्तेमाल में ला रहा था, और लेट गया। दिन-भर बैठे-बैठे उसका शरीर थक गया था और दर्शन के लिए आने वाले लोगों से बातें करके वह और भी

शिथिलता महसूस कर रहा था। उस अँधेरे कमरे में जहाँ चमगादड़ें चक्कर काट रही थीं, गाँव की दूरागत आवाज़ें बन्द हो गईं और एक गहरी खामोशी छा गई। उसके मन को कई समस्याएँ कचोट रही थीं। उसने सोने की कोशिश की। किसी तरह उसने दु:स्वप्नों से भरे, चिन्ताकुल तीन घंटे गुजारे।

क्या लोग उससे उम्मीद करते थे कि वह पन्द्रह दिन तक उपवास करे, और आठ-आठ घण्टे रोज़ घुटनों तक पानी में खड़ा रहे? यकायक वह उठकर बैठ गया। उसे अफसोस हुआ कि उसने ऐसा विचार लोगों के मन में डाला ही क्यों? उस वक्त तो यह विचार अत्यन्त रोमांचकारी मालूम हुआ था, लेकिन अगर उसे मालूम होता कि यह काम उसी के मत्थे मढ़ा जाएगा तो वह कोई दूसरा फार्मूला बता देता, मिसाल के लिए यह कि गाँव के सारे लोग मिलकर लगातार पन्द्रह दिन तक उसे 'बोंडा' खिलाएं, और इस बात का ज़िम्मा लें कि उसे बोंडे की कमी न रहे। इसके बाद वह महात्मा रोज नदी में दो मिनट तक खड़ा हो जाएगा। इसका नतीजा यह होगा कि देर-सबेर बारिश ज़रूर हो जाएगी। उसकी माँ एक तमिल कविता में से सुनाया करती थीं, "अगर कहीं एक भी नेक आदमी होगा तो उसकी खातिर इन्द्र देवता ज़रूर बरसेंगे, इससे सारे दुनिया को लाभ होगा।" उसके मन में यह विचार उठा कि इस यन्त्रणा से बचने का सबसे अच्छा रास्ता यही होगा कि वह वहाँ से भाग जाए। वह कहीं से भी बस में बैठ सकता है और शहर पहुँच सकता है, जहाँ उसकी तरफ कोई ध्यान नहीं देगा, लोग यही समझेंगे कि एक और दाढ़ी वाला साधू सड़क पर घूम रहा है। वेलान और उसके साथी उसे ढूँढ़ेगे और यह सन्तोष करके बैठ जाएंगे कि वह हिमालय में जाकर अदृश्य हो गया है लेकिन यह कैसे होगा?

आखिरकार छिपकर वह कितनी दूर जा सकता है? आधे घण्टे के भीतर ही कोई न कोई उसे पहचान लेगा। यह व्यावहारिक समाधान नहीं है। हो सकता है, वे लोग उसे पकड़कर फिर यहीं ले आएं और सज़ा दें, क्योंकि उसने उन्हें मूर्ख बनाया था। लेकिन उसे सिर्फ इसी बात का डर नहीं था। वह शायद यह दु:साहस कर भी लेता अगर वहाँ से सफलतापूर्वक भागने की थोड़ी-सी भी सम्भावना होती। लेकिन इतने बच्चों और औरतों के समूह ने उसके पैर छुए थे, इस स्मृति से ही उसका हृदय पसीज उठा। उसकी कृतज्ञता की कल्पना-मात्र से ही वह प्रभावित हो गया। उसने उठकर आग जलाई और खाना पकाया। फिर नदी में जाकर स्नान किया (ऐसी जगह जहाँ रेत में गड्ढा खोदकर उसे पाँच मिनट तक अपना बर्तन भरने के लिए रुकना पड़ता था), इसके बाद उसने झटपट खाना निगल लिया, ताकि अचानक ही गाँव का कोई आदमी आकर उसे खाना खाते न देख ले। थोड़ा-सा खाना उसने भीतर के कमरे में छिपाकर रख दिया, ताकि रात में उठकर दोबारा खा सके। उसने यकायक सोचा कि अगर वे लोग रात के वक्त उसे अकेला छोड़ दिया करें तो वह अपनी क्षुधापूर्ति का प्रबन्ध करके इस यातना को झेल सकेगा। तब तो घुटने-भर पानी में खड़े होने-मात्र की ही यातना रह जाएगी (अगर घुटने-भर पानी कहीं नसीब हो सके) और आठ घण्टे तक मन्त्रोच्चार करना पड़ेगा (इस काम को भी खैर, वह आसान बना लेगा)। पानी में खड़े रहने से उसके जोड़ों में तो ज़रूर दर्द होगा, लेकिन कुछ दिन के लिए तो यह सब बर्दाश्त करना ही पड़ेगा। और उसे यह भी विश्वास था कि किसी न किसी दिन बारिश आ ही जाएगी। उपवास के मामले में अगर उसके लिए सम्भव होता तो वह उन्हें कभी धोखा न

देता।

वेलान जब रात को वहाँ आया तो राजू ने उसे अपना राज बताया और कहा, "वेलान, तुम मेरे दोस्त रहे हो। अब तुम्हें मेरी एक बात सुननी पड़ेगी। तुम यह क्यों सोचते हो कि मैं बारिश ला सकता हूँ?"

"उस लड़के ने आकर हम लोगों से यही कहा था। क्या आपने उसके हाथ यह बात नहीं कहला भेजी थी?"

राजू को सीधा जवाब देने में हिचकिचाहट महसूस हुई। शायद इस समय भी वह साफ बात करके इस मामले को सुलझा सकता था। वह क्षण-भर तक सोचता रहा। इस समय भी, अपनी आदत के अनुसार, वह सीधी, साफ, सच्ची बात से बचना चाहता था। उसने गोलमोल जवाब दिया, "मैंने यह बात नहीं पूछी। मैं तो पूछता हूँ कि मेरे बारे में तुम ऐसा क्यों सोचते हो?"

वेलान असहाय भाव से आँखें झपकाने लगा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह महान व्यक्ति उससे क्या सवाल कर रहा था। उसने सोचा कि इस बात की तह में कोई उदात्त अर्थ होगा, लेकिन वह उसका उत्तर देने में असमर्थ था। उसने कहा, "इसके अलावा आखिर हम सोच भी क्या सकते हैं?"

"यहाँ, मेरे नज़दीक आकर बैठो और मेरी बात सुनो। तुम यहाँ सो सकते हो। तुम लोगों की खातिर मैं उपवास करने को तैयार हूँ और कुछ भी कर सकता हूँ अगर उससे देश का लाभ हो, लेकिन यह किसी सच्चे सन्त को ही करना चाहिए। मैं सन्त नहीं हूँ।" वेलान के कंठ से प्रतिवाद की अनेक आवाज़ें निकलीं। उसके विश्वास को तोड़ने में राजू को हार्दिक दु:ख हो रहा था। लेकिन उपवास की यन्त्रणा से बचने का और कोई मार्ग नहीं था। रात ठंडी थी। राजू वेलान को लेकर नदी के घाट की सीढ़ियों पर गया। वह एक सीढ़ी पर बैठ गया और वेलान उससे नीचे-वाली सीढ़ी पर बैठ गया। राजू भी उतरकर उसकी बगल में जा बैठा। "तुम्हें मेरी बात समझनी पड़ेगी, इसलिए इतने दूर जाकर मत बैठो। वेलान, मुझे तुम्हारे कान में कुछ कहना है। मैं जो कुछ कहना चाहता हूँ उसे ध्यान देकर सुनो...देखो, मैं कोई सन्त-महात्मा नहीं हूँ, वेलान, मैं भी औरों की तरह एक साधारण-सा इन्सान हूँ। तुम मेरी कहानी सुनो। तुम खुद इस बात को समझ जाओगे।" नदी में पानी की बहुत छोटी-छोटी धारें बह रही थीं, इसलिए कोई आवाज़ नहीं आ रही थी। पीपल के पेड़ के सूखे पत्ते फरफरा रहे थे। कहीं कोई गीदड़ चिल्ला उठा। राजू की आवाज़ रात में जैसे छा गई थी। वेलान बिना किसी हैरानी के विनीत भाव से सारी बातें सुनता रहा। फर्क सिर्फ इतना था कि सदा की अपेक्षा वह आज अधिक गम्भीर दिखाई दे रहा था और उसके चेहरे पर चिन्ता की रेखाएँ थीं।

7

'मार्को मुझे अपने परिवार का सदस्य समझने लगा था। एक टूरिस्ट गाइड की जगह अब मैं जैसे एक ही परिवार का गाइड बन गया था। मार्को बिल्कुल अव्यावहारिक व्यक्ति था, नितान्त असहाय आदमी। उसको सिर्फ एक ही काम आता था, प्राचीन वस्तुओं की नकल करना और उनके बारे में लिखना। उसका दिमाग इस काम में ही रमा रहता था। जीवन की व्यावहारिक बातें उसके अनुभव और कार्य-क्षेत्र से बाहर की चीज़ें थीं। उनका उसे कोई ज्ञान न था। खाने की चीज़ें, रहने की जगह तलाश करना या रेल की टिकट खरीदना जैसे साधारण काम भी उसे दु:साध्य लगते थे। शायद उसने शादी भी इसीलिए की थी कि कोई उसकी देखभाल करे, लेकिन उसने चुनाव गलत किया था–वह लड़की तो खुद ही हमेशा सपनों में खोई रहती थी। उसका पति अगर उसकी देखभाल कर सकता तो वह ज़िन्दगी में बहुत तरक्की कर सकती थी। इसीलिए तो मेरे जैसा आदमी उन्हें इतना उपयोगी लगा। मैं भी अपने पेशे के और सब काम छोड़कर केवल उनकी मदद में ही लग गया।

'मार्को करीब एक महीने तक पीक हाउस में रहा। इस बीच उसका सारा प्रबन्ध मेरे ही हाथों में था। खर्च की वह परवाह नहीं करता था, अगर साथ में रसीद पेश की जाती। होटल का कमरा उन्होंने अभी भी अपने पास रखा था। उसने गफ्फूर की कार स्थायी रूप से किराये पर ले ली थी, मानो वह उसका मालिक हो। पीक हाउस और शहर के बीच कार कम से कम एक बार रोज़ चक्कर लगाती थी। जोज़ेफ मार्को की देखभाल इतने अच्छे ढंग से करता था कि किसी और को उसके बारे में चिन्ता करने की ज़रूरत नहीं थी। मेरे बारे में यह समझ लिया गया था कि मैं अपने और कामों का हर्ज किए बगैर मार्को और उसकी पत्नी की देख रेख करूँगा। वह मेरी रोज़ाना की उजरत देता था और मुझे अपने पेशे से सम्बन्धित दूसरे 'नित्य' कार्य करने की सुविधा भी देता था। अब मेरा नित्य का काम कहने को चाहे जितना बड़ा लगे, लेकिन दरअसल इससे अधिक नहीं था कि मुझे रोज़ी के संग रहना पड़ता था और उसका मनोरंजन करना होता था। वह हर तीसरे दिन अपने पति से मिलने के लिए जाती थी। आजकल वह अपने पति के प्रति विशेष रूप से स्नेहशील हो गई थी। वह उसके लिए ज़रूरत से ज़्यादा परवाह करने लगी थी। लेकिन मार्को को इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता था। उसकी मेज़ पर उसके लिखे नोट्स और तारीखें बिखरी रहती थीं और वह कहता, "रोज़ी, इनके नज़दीक न जाना। मैं नहीं चाहता कि तुम इन्हें गड्डमड्ड कर दो। मैंने बड़ी मुश्किल से इनको कुछ तरतीब दी है।" मैं कभी यह जानने की कोशिश न करता कि वह क्या कर रहा है। यह मेरा काम नहीं था। और न शायद उसकी पत्नी ही उसके काम के बारे में जानने को उत्सुक थी। वह सिर्फ पूछती, "तुम्हें खाना पसन्द आया?" हमारे बीच अन्तरंग सम्बन्ध स्थापित हो जाने के बाद से अब उसने अपने पति के साथ छल की एक नई

टेकनीक अपना ली थी। वह उसका कमरा सम्भालती। जोज़ेफ को उसके खाने के बारे में विशेष हिदायतें देती। कभी-कभी मार्को से कहती, "मैं आज तुम्हारे पास ही रहूँगी, तुम्हें अकेला लगता होगा।" और मार्को बिल्कुल निर्लिप्त भाव से इस बात का समर्थन करता और खोए-खोए अन्दाज़ में कहता, "अच्छी बात है, अगर यहाँ रूकना चाहती हो तो रुक जाओ। और हाँ, राजू तुम? तुम भी रूक रहे हो या वापस जा रहे हो?" मैं रोज़ी के साथ ही वहाँ रूक जाने की भावना पर काबू पाकर, क्योंकि मैं जानता था कि होटल में तो मैं उसके संग का पूर्ण आनन्द ले ही रहा हूँ, इन्कार कर देता। यह उचित ही था कि रोज़ी को अपने पति के पास अकेला छोड़ दिया जाए। इसलिए मैं मार्को की तरफ देखे बगैर ही जवाब देता, "मुझे वापस लौट जाना चाहिए। आज कुछ और टूरिस्ट आ रहे हैं। उम्मीद है कि आप बुरा नहीं मानोगे।" वह कहता, "बिल्कुल नहीं तुम कामकाजी आदमी हो, हर वक्त तुम्हें घेरे रहना मुनासिब नहीं है।"

' "कल आपको गाड़ी कितने बजे चाहिए?" वह अपनी बीवी की तरफ देखता, वह कहती, "कल जितनी जल्दी गाड़ी ला सको, ले आना।" वह आम तौर पर कहता "मेरे लिए थोड़ा कार्बन पेपर ला सकते हो?"

'जब गाड़ी ढलान की तरफ जाती तो गफ्फूर शीशे में से मेरी तरफ कनखियों से देखने लगता। आजकल मैं उससे दूर-दूर रहने की कोशिश करता था और नहीं चाहता था कि वह किसी भी विषय पर ज्यादा बात करे। मुझे बातों से डर लगने लगा था। मेरा मन अभी भी सम्वेदनशील था और गफ्फूर के साथ अकेले रहने में मुझे डर महसूस होता था और जब तक उसकी बातचीत मोटरों तक ही सीमित रहती, मैं आश्वस्त रहता, लेकिन इसी विषय तक सीमित रहना उसके स्वभाव के प्रतिकूल था। वह मोटरों की बात शुरू करता लेकिन जल्द ही उसका दिमाग गड्डमड्ड हो जाता और वह कहता, "कल मुझे ब्रेकें ठीक करने के लिए एक घंटा चाहिए। चाहे जो भी हो, ब्रेक तो आखिर मशीन ही है। मेरी अभी भी यह राय है कि नए ढंग की ब्रेकों से ये पुरानी बेहतर हैं, जिस तरह बूढ़ी अनपढ़ बीवी नये फैशन की लड़की से बेहतर है। ओह! आजकल की लड़कियाँ कितनी हिम्मतवाली हैं। अगर मुझे किसी पहाड़ी की चोटी पर रहकर ड्यूटी देनी पड़े तो मैं हरगिज़ अपनी बीवी को होटल में अकेला नहीं रहने दूँगा।" इन बातों से मुझे घबराहट महसूस होने लगती और मैं तुरन्त ही प्रसंग बदल देता, "तुम्हारे ख्याल में मोटरों का डिज़ाइन बनाने वाले तुमसे कम अनुभवी होते हैं?"

' "तो तुम समझते हो कि इन इंजीनियरों को ज़्यादा ज्ञान है? मुझ जैसे आदमी को, जिसे ठोंक-पीटकर गाड़ी चालू रखनी पड़ती है, निश्चय ही ज़्यादा अनुभव है..." अब मैं अपने को सुरक्षित महसूस करने लगता, क्योंकि उसका ध्यान रोज़ी से हट जाता था। मेरे दिल में धुकर-पुकर मचने लगती और मैं चुपचाप बैठा रहता। मेरा दिमाग इन दिनों सुस्थिर नहीं था। गफ्फूर से यह बात भी छिपी न रह सकी। पहाड़ी से नीचे की ओर मोटर ड्राइव करते हुए वह अक्सर बड़बड़ाता, "तुम अब बहुत उद्विग्न रहने लगे हो राजू। तुम अब पहले जैसे दोस्त नहीं रहे।" यह बात सच थी। मेरे मन का सन्तुलन खोता जा रहा था। मेरे दिमाग पर हर समय रोज़ी छाई रहती थी। मैं उसके साथ गुजारे हुए घंटों की याद करके अगली मुलाकातों के सपने देखता रहता था। मुझे कई समस्याओं का सामना करना था। उनमें से उसका पति तो सबसे कम परेशान करने वाली समस्या था। वह भला आदमी

अपने काम में ही डूबा रहता था और उसमें दूसरों पर विश्वास करने की असाधारण क्षमता थी। लेकिन मैं कई बातों के कारण बेहद सम्वेदनशील और चिन्ताकुल हो गया था। मान लो–मान लो–मान लो? क्या? मैं अपनी सारी चिन्ताओं को तरतीब देकर सोच भी नहीं सकता था। मेरे दिमाग में परेशानियाँ गड्डमड्ड हो रही थीं। कभी अचानक भय आ घेरते, कभी मन में यह सोच उठता कि मैं अपनी प्रियतमा के लायक सुन्दर नहीं दिखाई देता। कभी मैं डर जाता कि मैंने शायद अच्छी तरह शेव नहीं किया है और रोज़ी मेरे होंठों और ठुड्डी पर उंगलियाँ फेरकर देखेगी और मुझे निकाल बाहर करेगी। कभी मुझे लगता कि मैं जैसे चिथड़े पहने हुए हूँ। रेशमी जिब्बा या किनारीदार धोती या तो बहुत भड़कीले हैं या पुराने फैशन के हैं। मुझे लगता कि वह मुझे बाहर निकालकर दरवाजा बन्द कर रही है क्योंकि मैं उसके लिए पर्याप्त रूप से आधुनिक व्यक्ति नहीं हूँ। मन में इस भावना के उठते ही मुझे भागकर दर्जी के यहाँ जाना पड़ा और कुछ शानदार बुशशर्ट और कार्डुराय की पतलूनों का आर्डर देना पड़ा। साथ ही मैंने अपने बालों और चेहरे की क्रीम-लोशन और खुशबूदार इत्र-सेंटों पर भी काफी पैसे खर्च किए। मेरा खर्च दिन दूना रात चौगुना बढ़ता जा रहा था। दुकान ही मेरी आमदनी का मुख्य जरिया थी। इसके अलावा कुछ पैसे दैनिक वेतन के रूप में मुझे मार्को से मिलते थे। मैं जानता था कि मुझे दुकान का हिसाब-किताब ज़्यादा ध्यान से देखना चाहिए। मैंने ज़रूरत से ज़्यादा उस लड़के के भरोसे पर छोड़ दिया था। माँ जब मुझे पकड़ पातीं तो अक्सर कहतीं, "तुम्हें उस लड़के पर भी एक नज़र रखनी चाहिए। मैं देखती हूँ कि उसके गिर्द बहुत-से ठलुए जमा रहते हैं। क्या तुम्हें मालूम है कि बिक्री से कितने पैसे उसके पास आते हैं और उनका वह क्या करता है?" मैं उनको उत्तर देता, "मुझे इन चीज़ों का पूरा पता है। यह मत सोचो कि मैं बिल्कुल लापरवाह हूँ।" और माँ चुप हो जातीं। मैं दुकान पर जाता और कठोर स्वर अपनाकर हिसाब-किताब की जाँच करता। लड़का हिसाब दिखाता, कुछ नकदी सामने लाकर रखता, दुकान में मौजूद सामान का विवरण देता, आगे क्या-क्या खरीदकर लाना है, इसकी फेहरिस्त पेश करता और कुछ अपनी निजी समस्याओं का ज़िक्र करता। उसकी समस्याओं को सुनने का धैर्य मेरे अन्दर न होता। मैं खुद अपनी समस्याओं में उलझा रहता था। इसलिए मैं उसे डाँटता कि हर छोटी-मोटी बात का ज़िक्र करके मेरा समय न बर्बाद करे और उस पर ऐसा रौब डालता (जो सिर्फ रौब ही होता और कुछ नहीं) जैसे हिसाब-किताब मेरे बायें हाथ का खेल है–कोई गलती मेरी नज़र से छिपी नहीं रह सकती। वह हमेशा कहता, 'जनाब, आपको पूछते हुए दो यात्री आए थे।" ओह, इन मनहूस यात्रियों की किसे ज़रूरत थी? "वे क्या चाहते थे?" मैं बिना उत्सुकता दिखाए पूछता। "वे लोग तीन दिनों तक यहाँ के दर्शनीय स्थानों का पर्यटन करना चाहते थे, जनाब। वे यहाँ से बहुत निराश होकर लौट गए।" पर्यटक हमेशा ही आते रहते थे। इस कार्य में मेरी दिलचस्पी कम हो जाने के बावजूद गाइड के रूप में मेरी ख्याति खत्म नहीं हुई थी। 'रेलवे राजू' एक प्रतिष्ठित नाम था और यात्री और पर्यटक अभी भी उसकी मदद लेने उसके पास पहुँचते थे। लड़का अपनी बात ज़ारी रखता, "वे लोग पूछ रहे थे कि आप कहाँ मिलेंगे।" इससे मैं सोच में पड़ गया। मैं नहीं चाहता था कि यह मूर्ख लड़का यात्रियों को होटल के 28 नं. के कमरे में मेरे पास भेज दिया करे। सौभाग्य से उसको इस कमरे का पता नहीं था, नहीं तो शायद वह उनको भेज ही देता। "राजू जनाब, उन लोगों से

क्या कह दूँ?'' वह मुझे 'राजू जनाब' कहकर पुकारता था। इस तरह वह इज्ज़त करने के साथ अपनी बेतकल्लुफी भी जतला देता था। मैंने उसे संक्षिप्त-सा उत्तर दिया, ''उनसे कह देना, मैं आजकल बहुत व्यस्त हूँ। बस। मेरे पास वक्त नहीं है। बहुत व्यस्त हूँ।''

' ''तो क्या जनाब, मैं खुद उनका गाइड बन जाऊँ'' उसने उत्सुकतापूर्वक पूछा। यह छोकरा मेरे कामों में एक-एक करके मेरा वारिस बनता जा रहा था। अगली बार शायद वह रोज़ी का मनबहलाव करने के लिए उसके साथ रहने की माँग करेगा! मैं उसके सवाल से चिढ़ गया और तीखे स्वर में पूछा, ''और दुकान कौन चलाएगा?''

' ''मेरा एक चचेरा भाई है। वह मेरे पीछे दुकान पर बैठ सकेगा।'' मुझे इसका कोई उत्तर न सूझा। मैं कोई निर्णय नहीं कर सका। इस सारे मामले में बहुत ज़्यादा झंझट था। मेरी पुरानी ज़िन्दगी, जिसमें अब मुझे कतई कोई दिलचस्पी नहीं थी, मेरे कदमों को रोक रही थी। मेरी माँ मेरे लिए बहुत-सी समस्याएँ खड़ी कर रही थीं। फिर म्यूनिसिपैलिटी का टैक्स अदा करना था, रसोईघर की ईंटों की मरम्मत होनी थी, उधर दुकान, हिसाब-किताब, और अपनी सेहत का भी ध्यान रखना था; मेरे लिए वह स्वप्नों के संसार की एक गुड़िया थी, जिसके मुँह से अस्फुट स्वर निकलते थे, और यह लड़का अपने ढंग से मुझे घेरकर हमला करता था। उधर गफ्फूर मक्कारी-भरी नज़रों से मेरी तरफ देखता था और हर वक्त कोई न कोई बात बनाने के लिए तैयार रहता था–ओह! मैं इन बातों से थक गया था। मेरा मन किसी चीज़ में नहीं लगता था। हर वक्त दूसरी परेशानियाँ मुझे घेरे रहती थीं। रुपये-पैसों का भी मेरी नज़रों में अब कोई महत्त्व नहीं रहा था, हालाँकि बचत की कॉपी को देखकर ही मुझे अन्दाज हो सकता था कि मेरा कोष खाली हो रहा था। जब तक दुकानवाला छोकरा मेरी ज़रूरत के लिए नकदी देता जाता था, तब तक मैं हिसाब की जाँच-पड़ताल नहीं करना चाहता था। मेरे पिता की कंजूसी की वजह से बैंक में मेरे नाम पर बचत का खाता खुल सका था। मेरे जीवन और चेतना में रोज़ी ही एक यथार्थ रह गई थी। मेरे मन की सारी शक्तियाँ उसे अपने निकट रखने में लगी थीं, ताकि वह सारा वक्त मुस्कुराती रहे। इनमें से एक काम भी आसान नहीं था। मुझे सारा वक्त जोंक की तरह उससे चिपके रहने में बड़ी खुशी होती, लेकिन उस होटल में यह बात आसान नहीं थी। मुझे हर वक्त यह चिन्ता सताती रहती थी कि डेस्क पर बैठा रिसेप्शनिस्ट और होटल के बेयरे मुझपर निगरानी रख रहे थे और मेरी पीठ के पीछे मेरी निन्दा कर रहे थे।

'मैं नहीं चाहता था कि लोग मुझे 28 नम्बर के कमरे में जाते हुए देखें। मुझे इस बात का बहुत ज़्यादा एहसास होता था और मैं चाहता था कि किसी तरह से होटल का डिज़ाइन बदल जाता ताकि रिसेप्शनिस्ट की नज़रें बचाकर मैं 28 नम्बर के कमरे में जा सकता। मुझे यकीन था कि जब-जब मैं रोज़ी के साथ होटल में आता था और बाहर निकलता था उसी वक्त वह हर बात को नोट करता था और उसका रुग्ण, जिज्ञासु मन इस बात की कलपनाओं में डूबा होगा कि 28 नम्बर के कमरे के बन्द दरवाजों के पीछे क्या कुछ हो रहा है। हर बार मुझे देखकर वह अजब नज़रों से घूरता था, जो मुझे सख्त नापसन्द थीं। मुझे उसके होंठों की सिकुड़न भी पसन्द नहीं थी–मुझे मालूम था वह मन ही मन मेरा मज़ाक उड़ा रहा है। मैं उसे नज़र अन्दाज़ करना चाहता था, लेकिन वह मेरा बहुत पुराना साथी था, इसलिए उससे एकाध बात तो करनी ही पड़ती थी। उसके नज़दीक से गुज़रते हुए मैं लापरवाही

दिखाने की कोशिश करता और रुककर कहता, "देखा, नेहरूजी लन्दन जा रहे हैं।" या "नये टैक्सों से लोगों की सारी हिम्मत खत्म हो जाएगी ।" वह सहमत होकर कोई बात समझाता, बस इतना ही काफी था। हम भारत सरकार की टूरिस्टों के प्रति नीति या होटल के प्रबन्धों की बात करने लगते। ऐसे वक्त मुझे उसकी बातें सुननी पड़ती थीं। उस बेचाने के मन में रत्ती-भर शक नहीं था कि अब मुझे टैक्सों में, टूरिस्टों में या किसी और चीज़ में कतई दिलचस्पी नहीं थी। मैं कई बार सोचता कि रोज़ी को किसी दूसरे होटल में टिका दूं। लेकिन यह काम आसान नहीं था। रोज़ी और उसके पति दोनों को यह होटल बहुत पसन्द था। उसका पति न जाने क्यों होटल बदलने के खिलाफ था, हालाँकि वह कभी पहाड़ी से उतरकर नीचे नहीं आता था। लड़की इस कमरे की आदी हो गई थी, जिसकी खिड़की में से नारियल के वृक्षों का झुरमुट दिखाई देता था। लोग कुएँ में से पानी लाकर सिंचाई करते थे। रोज़ी में एक ऐसा आकर्षण था जो न आसानी से मेरी समझ में आता था न ही मैं उसे समझा सकता था। कई और भी ऐसी बातें थीं जो मेरी समझ से बाहर थीं। मैंने देखा कि वह धीरे-धीरे अपने पहले दिनों की स्वच्छन्दता खो रही थी। उसने मुझे प्यार करने की इजाज़त दे रखी थी, लेकिन वह अब अपने पति के बारे में भी ज़रूरत से ज़्यादा चिन्ता प्रकट करने लगी थी। उसका पति अभी भी पहाड़ी के रेस्ट हाउस में रह रहा था। वह अचानक मेरे आलिंगनपाश में से अपने को छुड़ाकर कहती, "जाकर गफ्फूर से कहो कि गाड़ी ले आए। मैं वहाँ जाकर उन्हें देखना चाहती हूँ।" मेरे लिए अभी उसे डाँटने-डपटने की या गुस्सा दिखाने की नौबत नहीं आई थी। इसलिए मैंने शान्त स्वर में जवाब दिया, "गफ्फूर कल इस वक्त से पहले नहीं आएगा। तुम कल ही तो पहाड़ी पर गई थीं। अब फिर वहाँ क्यों जाना चाहती हो? वह तो कल तुम्हारा इन्तज़ार करेगा।"

'वह 'हाँ' कहकर सोच में पड़ जाती। जब वह सलवटों-भरे कपड़े पहने बाल बिखेरकर, पलंग पर बैठ जाती थी तो मुझे बहुत बुरा लगता था। वह अपने घुटनो को हाथों से जकड़ लेती थी। मुझे पूछना पड़ता, "तुम्हें क्या परेशानी है? मुझे नहीं बताओगी? मैं हमेशा तुम्हारी सहायता करूँगा।" वह सर झटककर कहती "जो भी हो, आखिकार वह मेरा पति है। मुझे उसकी इज्ज़त करनी पड़ेगी। मैं उसे वहाँ अकेला नहीं छोड़ सकती।" मैं औरतों के बारे में अनुभवहीन था और मेरा सारा अनुभव उसी तक सीमित था, इसलिए मैं यह तय न कर सका कि उसकी बातों के प्रति क्या रुख अपनाऊँ। मैं यह न समझ सका कि वह झूठी बहानेबाज़ी कर रही है या उसने अपने पति की जिन कमियों का ज़िक्र किया था वे सरासर झूठ थीं–सिर्फ मुझे जाल में फँसाने के लिए उसने ये बातें कही थीं, सारा मामला बड़ा पेचीदा और रहस्यपूर्ण था। मुझे कहना पड़ा, "रोज़ी, तुम अच्छी तरह जानती हो कि अगर गफ्फूर आ भी जाए तो भी वह इस वक्त गाड़ी को पहाड़ी पर नहीं ले जा सकता।"

' "हाँ, हाँ, मैं समझती हूँ," वह जवाब देती और फिर रहस्यपूर्ण चुप्पी में खो जाती।

' "तुम्हें क्या परेशानी है ?"

'उसने रोना शुरू कर दिया, "जो भी हो...जो भी हो...मैं जो कर रही हूँ, क्या यह उचित है? जो भी हो, उसने मेरे साथ अच्छाई की है, मुझे हर किस्म का आराम और आज़ादी दी है। दुनिया में कौन-सा पति है जो अपनी बीवी को सौ मील दूर होटल के कमरे में अकेला रहने देगा ?"

‘मैंने उसकी गलती सुधारी, “सौ मील नहीं, बल्कि सिर्फ अट्ठावन मील। क्या मैं तुम्हारे लिए कॉफी या खाने की कोई चीज़ मंगवाऊँ ?”

‘ “नहीं,” वह तुरन्त जवाब देती और सोच में डूबी रहती। “वह शरीफ है, हो सकता है वह बुरा न माने, लेकिन क्या बीवी का फर्ज़ नहीं है कि वह अपने पति की रखवाली और मदद करे, चाहे उसका पति उससे कैसा ही सलूक करता हो ?” आखिरी बात उसने इसलिए कही थी ताकि मैं उसे मार्को के उदासीन व्यवहार की याद न दिला सकूँ। बड़ी पेचीदा स्थिति थी। मैं उसकी बात में कोई कमी-बेशी नहीं कर सकता था। यह स्वाभाविक था कि मैं इस मामले में कोई दिलचस्पी नहीं ले सकता था — दूरी ने उसके मन में आकर्षण पैदा कर दिया था, लेकिन मैं जानता था कि मार्को के साथ कुछ घंटे बिताने के बाद ही वह क्रुद्ध-क्षुब्ध स्वर में प्रलाप करती हुई पहाड़ी से नीचे आ जाएगी और मार्को के बारे में हर किस्म की बुरी बातें कहेगी। कई बार यह मेरी हार्दिक इच्छा होती थी कि मार्को पहाड़ी की ऊँचाइयों से नीचे उतर आए और अपनी बीवी को साथ लेकर वहाँ से दफा हो जाए। कम से कम इस तरह वह अनिश्चितता तो हमेशा के लिए खत्म हो जाएगी और मैं रेलवे प्लेटफॉर्म पर जाकर अपना काम-काज फिर से शुरू कर सकूँगा। मैं अब भी काम पर लौटने की कोशिश कर सकता था। इस लड़की को मैं अकेला क्यों नहीं छोड़ सकता था? मार्को को काम खत्म करने में जितनी देरी लग रही थी, यह यन्त्रणा भी उतनी ही लम्बी होती जा रही थी। लेकिन मार्को एकान्त में खूब पनप रहा था। शायद ज़िन्दगी-भर उसे इसी चीज़ की तलाश थी। लेकिन वह अपनी बीवी के लिए कोई इन्तज़ाम क्यों नहीं कर सकता था? वह निरा अन्धा था। कई बार उसके बारे में सोचकर ही मुझे गुस्सा आने लगता था। उसने मुझे बुरी आफत में फँसा दिया था। मैंने मजबूर होकर रोज़ी से पूछा, “तो फिर तुम उसके साथ ही क्यों नहीं ठहरतीं ?” उसने सिर्फ इतना जवाब दिया, “वह रात-भर बैठकर लिखता रहता है और...”

‘ “अगर वह रात-भर बैठकर लिखता रहता है तो तुम्हें दिन के वक्त उससे बातें करनी चाहिए,” मैं मासूम चेहरा बनाकर कहता।

‘ “लेकिन दिन-भर वह गुफा में रहता है।”

‘ “तो तुम भी जाकर गुफा को देख सकती हो, उसमें क्या हर्ज है? तुम्हें भी उसमें दिलचस्पी लेनी चाहिए।”

‘ “जब वह कॉपी करता है तो उस वक्त कोई उससे बात नहीं कर सकता।”

‘ “उससे बातें मत करो, लेकिन खुद मूर्तियों का अध्ययन करो। एक अच्छी पत्नी को अपने पति के हर काम में दिलचस्पी लेनी चाहिए।”

‘ “यह सच है,” उसने कहा और सिर्फ एक ठंडी साँस लेकर चुप रह गई। इस गलत दृष्टिकोण से मैंने अपनी अनुभवहीनता का परिचय दिया था, जिसका कोई नतीज़ा नहीं निकल सकता था। बल्कि वह पहले से भी ज़्यादा उदास और गुमसुम हो जाती थी।

‘जब मैंने नाच का ज़िक्र किया तो उसकी आँखें एक नई आशा से चमकने लगीं। आखिरकार सबसे पहले मुझे उसकी कला ने ही तो आकर्षित किया था। अब कुछ अरसे से जब हम प्रेमी-प्रेमिका की तरह रहने की कोशिशें कर रहे थे, यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पहलू

पृष्ठभूमि में चला गया था। दुकानों, सिनेमा और आलिंगनों में वह अपने कलाप्रेम को भूल गई थी, जिसके पीछे वह दरअसल पागल थी। लेकिन बहुत दिनों तक वह इस शौक को नहीं भूल पाई। एक दिन शाम को उसने सीधे ही मुझसे पूछ लिया, "क्या तुम भी उसी जैसे हो ?"

' "किस दृष्टि से ?"

' "मेरा नाच देखकर तुम्हें भी चिढ़ होती है ?"

' "बिल्कुल नहीं, तुम ऐसा क्यों सोचती हो ?"

' "एक ज़माने में तुम कला-प्रेमियों जैसी बातें किया करते थे। आजकल तुम इस बारे में बिल्कुल नहीं सोचते।"

'यह सच था। मैंने अपनी सफाई देने के लिए कुछ कहा। उसके हाथों को अपने हाथों में लेकर गम्भीर स्वर में कसम खाई, "तुम्हारी खातिर मैं कुछ भी करने को तैयार हूँ। तुम्हारा नाच देखने के लिए मैं अपनी ज़िन्दगी भी कुर्बान कर सकता हूँ। तुम जो भी हुक्म दोगी, मैं करूँगा।"

'वह खिल उठी। नाच के ज़िक्र से उसकी आँखों में एक नये उल्लास की चमक आ गई! मैं भी उसके साथ बैठकर उसके दिवास्वप्नों में सहायता देने लगा। मैंने यह सुराग लगा लिया कि उसका प्यार किस तरह हासिल किया जा सकता है और मैंने इस तरकीब का पूरा इस्तेमाल किया। वह एक साथ अपनी कला और अपने पति के बारे में नहीं सोच सकती थी। एक का विचार मन में आते ही, दूसरे का विचार मन से निकल जाता था।

'उसके मन में बहुत-सी योजनाएँ थीं। तड़के पाँच बजे उठकर वह तीन घंटों तक एक बड़े से कमरे में नृत्य का अभ्यास करती। उसकी माँग थी कि फर्श पर एक मोटा-सा कालीन होना चाहिए, जो न बहुत नर्म हो, न बहुत खुरदरा। एक कोने में वह नटराज की मूर्ति रखती, जिनके आदि नृत्य से सारी सृष्टि स्पन्दित और मुखरित हो उठी थी! एक लम्बे-से आतिशदान में दिन-भर अगरबत्तियाँ जलती रहती थीं। नृत्य के अभ्यास के बाद वह ड्राइवर को बुलवाती। "तुम्हें कार की ज़रूरत है ?" मैं पूछता। "ज़ाहिर है, वरना मैं कैसे बाहर जा सकती हूँ। इतने काम हैं कि गाड़ी के बिना नहीं चलेगा। ठीक है न ?"

' "ज़रूर, मैं समझ गया।"

' फिर दोपहर से पहले वह नृत्यशास्त्र के प्राचीन ग्रन्थों का अध्ययन करती। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र को पढ़ती, क्योंकि प्राचीन नाट्यकला के अध्ययन के बिना शास्त्रीय नृत्यों के मूल रूप को बनाए रखना असम्भव था। उसकी सारी पुस्तकें उसके चाचा के यहाँ पड़ी थीं और वह पत्र लिखकर उन्हें धीरे-धीरे मंगवाती जा रही थी। ये ग्रन्थ प्राचीन सूत्रात्मक शैली में लिखे हुए थे, इसलिए वह उन्हें समझने के लिए एक पण्डित की सहायता चाहती थी। "क्या तुम संस्कृत के किसी पण्डित को बुलवा सकते हो ?" उसने पूछा।

' "ज़रूर बुलवा सकता हूँ। यहाँ दर्जनों पण्डित हैं।"

' "मैं यह भी चाहती हूँ कि पण्डित मुझे रामायण और महाभारत की कथाएँ पढ़कर सुनाए, क्योंकि ये ग्रन्थ अमूल्य रत्नों के भण्डार हैं और उनमें से नये नृत्यों के लिए बहुत-से मौलिक विचार मिल सकते हैं।" दोपहर के खाने के बाद कुछ देर आराम करती। तीन बजे

वह खरीददारी और मोटर की सैर के लिए निकलती और शाम को आकर कहीं नाच का प्रोग्राम न होता तो वह घर लौट आती या सिनेमा देखने चली जाती। जिस दिन नाच का प्रोग्राम होता, उस दिन तीन बजे तक आराम करती और शो से सिर्फ आधा घंटा पहले हॉल में पहुँचती। ‘‘इतना वक्त काफी है क्योंकि मैं यहाँ से ही नृत्य की पोशाक पहनकर और मेक-अप करके चलूँगी।’’

‘वह बारीकी से हर पहलू पर सोचती और दिन-रात इन्हीं विचारों में डूबी रहती। नृत्य के अभ्यास के लिए उसे साज़िन्दों की ज़रूरत होती और जब वह स्टेज पर लोगों के सामने आने के लिए तैयार हो जाती तो मुझे सूचित कर देती ताकि मैं उसके नृत्य का प्रोग्राम तय करवा सकूँ। उसका उत्साह देखकर मैं सकपका जाता और सोचता कि काश, मैं कला-चर्चा में उसका साथ दे सकूँ ! मैंने महसूस किया कि मुझे फौरन नृत्य-सम्बन्धी शब्दावली सीख लेनी चाहिए। उसे नाचते और कला की चर्चा करते देखकर मेरी ज़बान बन्द हो जाती थी और मैं अपने को मूर्ख समझने लगता था। मेरे सामने अब दो ही रास्ते बचे थे–या तो मैं डींग हाँकता और भाग्य के भरोसे बैठा रहता या स्पष्टवादिता से काम लेता। दो दिनों तक उसकी बातें सुनने के बाद अन्त में मैंने उसके सामने कबूल किया, ‘‘मैं साधारण आदमी हूँ। मुझे नृत्यकला की पेचीदगियाँ नहीं मालूम। मैं इस बारे में तुमसे सीखना चाहता हूँ।’’ मैं नहीं चाहता था कि वह मुझे अपनी कला के प्रति उदासीन समझे। सम्भव था कि वह फिर अपने पिता के पास वापस चली जाती, इसलिए मैंने अपने कला-प्रेम के आडम्बर को बनाए रखा। इनमें हम दोनों की घनिष्ठता में एक नई ताज़गी आ गई और हम एक-दूसरे के ज़्यादा करीब आ गए। हम जहाँ कहीं होते, नृत्य कला की बारीकियों और पेचीदगियों के बारे में वह मुझे समझाती, जैसे किसी बच्चे को नृत्य की भाषा समझाई जाती है। दिन-ब-दिन अपने आसपास की चीज़ों में उसकी दिलचस्पी कम होती जा रही थी। गफ्फूर की मोटर में बैठते ही वह कहती, ‘‘जानते हो पल्लवी क्या होती है? उसमें सबसे अधिक महत्त्व ताल का होता है। इसमें हमेशा, एक-दो, एक-दो, नहीं बल्कि तरह-तरह के ताल होते हैं।’’ फिर वह तोड़े सुनाने लगती,‘‘ ता-का-ता-की-ता-ता-का...’’ मुझे बड़ा कौतूहल होता। ‘‘जानते हो इसे पाँच और सात की मात्रा में बाँधने के लिए कितने अभ्यास की ज़रूरत होती है और जब ताल बदल जाता है तो...’’ ऐसी बातों को गफ्फूर अगर चोरी से सुन भी लेता तो कोई हर्ज नहीं था। पहाड़ी की तरफ जाते हुए, किसी दुकान से बाहर निकलते हुए या सिनेमा देखते वक्त वह इसी किस्म की बातें किया करती। पिक्चर देखते-देखते वह अचानक कह उठती, ‘‘मेरे चाचा के पास भोजपत्र पर लिखा एक बहुत प्राचीन गीत है। उसे किसी ने नहीं देखा। सारे देश में अकेली मेरी माँ को ही वह गीत आता था और वही उस पर नाच सकती थी – मैं चाचा से उस गीत को भी मंगवा लूँगी।मैं तुम्हें नाचकर दिखलाऊँगी। हम लोग अपने कमरे में क्यों न चलें? मैं यह पिक्चर और नहीं देखना चाहती। बिल्कुल बकवास है।’’

‘हम फौरन 28 नं. के कमरे की ओर चल पड़े। वहाँ पहुँचकर वह मुझे बैठने की ताकीद कर बगल के कमरे में चली जाती और थोड़ी देर में ही नाच की पोशाक पहनकर निकलती। वह कहती, ‘‘मैं नाचकर तुम्हें दिखाऊँगी। साज़िन्दों के बिना बात नहीं बनती, कम से कम पखावज बजानेवाला तो एक होना ही चाहिए...खैर, उस कुर्सी को कोने में सरकाकर तुम

बिस्तर पर बैठ जाओ। मुझे नाच के लिए यह जगह चाहिए।'' वह कमरे के किनारे पर खड़ी होकर धीमे, मधुर स्वर में गीत गाती–वह संस्कृत का एक प्राचीन गीत था जिसमें एक युवक और युवती जमना के किनारे मिलते हैं। यह नृत्य-रचना कितने हुमक के साथ शुरू होती! और जब वह अपना पांव कोमलता से उठाकर घुंघरुओं को झंकृत होने देती तो मैं रोमांचित हो जाता। हालांकि मैं नृत्य की बारीकियों से अपरिचित था, और गीत के शब्दों का ठीक अर्थ भी नहीं समझता था, फिर भी गीत के साथ उसके अभिनय, नृत्य की लय-ताल से मैं झूम उठता। वह बीच में रुक-रुककर समझाती: नारी का अर्थ लड़की है और मणि एक प्रकार के हीरे को कहते हैं...पूरी पंक्ति का अर्थ है–'तुमने जो प्रेम का यह उपहार दिया है, इसका भार उठाना मेरे लिए संभव नहीं है।' वह अर्थ समझते हुए हांफती जाती। उसके माथे और होंठों पर पसीने की बूंदें चमक उठतीं। वह फिर एक-दो तोड़े नाचकर समझाती, ''प्रेमी का अर्थ हमेशा ईश्वर होता है।'' और फिर वह नृत्य की लय और मुद्राओं की बारीकियां समझाने लगती। उसके थिरकते हुए कदमों की चाप से कमरे का फर्श गूंज उठता। मुझे डर लगता कि शायद नीचे की मंजिलवाले नाच बंद करने के लिए कहेंगे, लेकिन उसे इसकी चिंता नहीं थी, वह किसी बात से नहीं डरती थी। उसके नृत्य से मैं इस रचना की भव्यता, इसकी प्रतीकात्मकता कि एक तरुण देवता किस तरह किशोरावस्था पार कर के विवाह में अपनी कामनाओं की पूर्ति पाता है और फिर समय बीतने के साथ वह यौवन से वृद्धावस्था में प्रवेश करता है, फिर भी जल में खिले हुए कमल की तरह उसके हृदय में प्रेम की वह ताजगी बनी रहती है–यह सब कुछ नृत्य की मुद्राओं से देख सका था। वह करीब एक घंटे तक यह नृत्य करती रही। उसे देखकर मुझे लगा कि पृथ्वी पर शायद इससे सुंदर और सुखकर चीज़ और नहीं हो सकती। मैं ईमानदारी से कह सकता हूं कि इस नृत्य के दौरान मेरा मन जैसे आनंद की मुक्तावस्था को प्राप्त कर गया था, जहां कोई कलुषित विचार या कामुक भावना प्रवेश नहीं पा सकती। मैं उसे कला और सौंदर्य एक शुद्ध और अमूर्त वस्तु के रूप में देख रहा था। यकायक नृत्य बंद करके वह मेरे पास आई और अपने शरीर का सारा भार मेरे ऊपर फेंकती हुई उल्लास-भरे स्वर में बोली, ''कितने प्यारे हो तुम! तुम मुझे एक नई ज़िंदगी दे रहे हो।''

' अगली बार जब हम पहाड़ी पर गए तो हमारी योजना तैयार थी। उसे वहां छोड़कर मैं वापस शहर आनेवाला था। वह वहां दो दिन रहकर एकाकीपन और चिढ़न को बर्दाश्त करेगी और अपने पति से बात करेगी। आगे बढ़ने से पहले यह निहायत ज़रूरी था कि उसके पति के साथ इस बारे में खुलकर बात कर ली जाए। वह दो दिन तक बातें करेगी फिर मैं जाकर उन दोनों से मिलूंगा और हम मिलकर उसके भविष्य की रूप-रेखा तय करेंगे। अचानक अपने पति के बारे में वह बड़ी आशावान हो गई थी और अक्सर मेरी तरफ झुककर दबे स्वर में कहती थी, ताकि गफ्फूर न सुन सके, ''मेरा खयाल है कि वह इस सुझाव पर राज़ी हो जाएगा ।'' या फिर वह अपनी इच्छाओं को व्यक्त करती, ''वह बुरा आदमी नहीं है। जानते हो, वह सिर्फ उदासीनता का दिखावा कर रहा है। तुम उससे बिल्कुल बात न करना। मैं सारी बात करूंगी। मैं जानती हूं कि उससे कैसे पेश आना चाहिए। तुम सारा मामला मुझपर छोड़ दो,'' पहाड़ी पर पहुंचने तक वह इसी किस्म की बातें करती रही। ''ओह ! ज़रा उन पक्षियों को तो देखो! कितने सुंदर रंग हैं! जानते हो एक

युवती की बांह पर गुदे हुए तोते के बारे में भी एक नृत्य है, किसी वक्त मैं तुम्हें दिखाऊँगी ।''

'मार्को इतना खुश नज़र आ रहा था कि विश्वास नहीं होता था। वह अपनी बीवी से उत्साहपूर्वक मिला। ''जानती हो, वहां एक तीसरी गुफा भी है। वहां तक एक सुरंगनुमा रास्ता जाता है। मैंने चूने को उखेड़कर देखा, वहां प्रतीकात्मक भाषा में एक भित्ति-चित्र पर संगीत की स्वरलिपियां अंकित हैं, पांचवी शताब्दी की शैली में। मुझे ताज्जुब है कि इतनी सदियों का अंतर कैसे पड़ गया ?'' मार्को ने बरामदे में हमारा स्वागत करते हुए कहा। वह एक कुर्सी खींचकर घाटी की तरफ देख रहा था। उसकी गोद कागज़ों से भरी थी। उसने अपनी नवीनतम खोज दिखाई। उसकी पत्नी ने आनन्दोल्लास से चित्र की तरफ देखकर कहा, ''संगीत की स्वरलिपियां! कितनी आश्चर्यजनक चीज़ें हैं। तुम मुझे वह भित्ति-चित्र दिखाओगे न ?''

' ''हाँ, कल सुबह मेरे साथ चलना। मैं तुम्हें उस चित्र के बारे में समझाऊंगा।

' ''ओह ! यह तो शानदार बात है।'' रोज़ी के स्वर में कृत्रिमता थी, ''मैं उन स्वरों को गाने की कोशिश करूंगी ।''

' ''मुझे शक है कि तुम गा सकोगी। तुम नहीं जानती, वह स्वर-योजना कितनी कठिन है।''

' लगता था, रोज़ी को जैसे बुखार चढ़ा है। वह मार्को को प्रसन्न करने के लिए उत्सुक थी। यह अच्छा शगुन नहीं था। न जाने क्यों दोनों पक्षों की यह प्रफुल्लता मुझे पसंद नहीं आई थी। मार्को ने मेरी तरफ मुड़कर पूछा, ''और राजू तुम? तुम भी मेरी खोज को देखना चाहोगे ?''

' ''जरूर । लेकिन मुझे जल्द से जल्द शहर वापस लौटना है। मैं इन्हें यहां पहुंचाने आया था, क्योंकि ये बहुत परेशान थीं। मैं यह भी पूछने आया था कि आपका काम कैसा चल रहा है और आपको किसी चीज़ की ज़रूरत तो नहीं है।''

' ''ओह ! बिल्कुल ठीक चल रहा है! वह जोज़ेफ बड़ा शानदार आदमी है। मुझे न उसकी सूरत दिखाई देती है न उसकी आवाज़ सुनाई देती है, फिर भी वह ठीक वक्त पर सारा काम निपटा लेता है। मैं चाहता हूँ, सारे काम इसी ढंग से हों। मेरा ख्याल है, उसके तलवों में जैसे बाल-बेयरिंग लगे हों, जिनपर वह हर वक्त फिसलता चलता है ।''

'ऐसा ही मुझे रोज़ी को देखकर लगा था, जब उसने कमरे में मुझे अपना नृत्य दिखाया था। लगता था जैसे उसके पांवों की क्षिप्र गति हड्डी-मांस-मज्जा और फर्श और दीवारों के अचल स्वभाव का अतिक्रमण कर रही थी।

'मार्को ने जोज़ेफ की तारीफ जारी रखी, ''मेरे लिए ऐसी अच्छी जगह और जोज़ेफ जैसा वफादार और मुस्तैद आदमी तलाश करके तुमने मेरे ऊपर जो ऐहसान किया है, उसका शुक्रिया मैं कभी अदा नहीं कर सकता। वह सचमुच एक असाधारण आदमी है। कितने अफसोस की बात है कि वह इस छोटी-सी पहाड़ी पर अपनी क्षमताओं को बरबाद कर रहा है ।''

' ''आप बड़े कद्रदान व्यक्ति हैं,'' मैंने कहा। मेरा विश्वास है कि वह अपने बारे में

आपकी राय सुनकर खुशी से फूल जाएगा ।''

' ''ओह, मैंने बिना किसी संकोच के उसको अपनी राय बता दी है। मैंने उसको इस बात की भी दावत दी है कि जब भी उसका मन करे वह मद्रास में मेरे घर आकर रह सकता है।''

'मार्को आज असामान्य रूप से सहृदय और वाचाल हो रहा था। स्वभाव से वह अकेले में या गुफाओं में अंकित भित्ति-चित्रों के बीच ही खुश रहता था। मैंने सोचा कि जोज़ेफ अगर उसकी पत्नी होता तो मार्को कितना सुखी होता! उसकी बातें सुनते हुए मैं कुछ इस ढंग से सोचने में व्यस्त हो गया। रोज़ी एक स्नेहशील पत्नी की तरह बोली, ''मेरा ख्याल है, खाने की चीज़ें काफी हैं और सब कुछ ठीक है। अगर दूध हो तो क्या मैं तुम लोगों के लिए कॉफी बना दूँ ?'' वह भागकर अन्दर गई और शीघ्र ही लौटकर बोली, ''हाँ, दूध तो है। मैं तुम सबके लिए कॉफी बनाकर लाती हूँ। पाँच मिनट से ज़्यादा नहीं लगेंगे।''

' मैं आज काफी परेशान था। मेरे मन में कई उद्विग्न करने वाले विचार और अनिश्चितता की एक तीखी भावना घुमड़ रही थी । मुझे चिन्ता हो रही थी कि न जाने वह रोज़ी से क्या कहेगा और मैं चाहता था कि वह रोज़ी को कोई नुकसान न पहुँचाए। साथ ही मेरे मन में यह भय भी उठ रहा था कि अगर वह सचमुच रोज़ी के प्रति गहरा स्नेह दिखाएगा तो शायद वह मुझसे विमुख न हो जाए। मैं चाहता था कि वह रोज़ी के प्रति उदार हो, उसके प्रस्तावों और मंसूबों को सहानुभूतिपूर्वक सुने और फिर उसे देखभाल के लिए मेरे हाथों में छोड़ दे। कितनी आश्चर्यजनक और विपरीत सम्भावनाओं का योग मैं चाहता था! रोज़ी जब अन्दर कॉफी तैयार करने में लगी थी, वह मेरे लिए एक कुर्सी खींच लाया। ''मैं अपना काम हमेशा यहाँ बैठकर करता हूँ,'' उसने कहा। मुझे लगा जैसे वह अपनी सरपरस्ती से नीचे की घाटी को सम्मानित कर रहा था। उसने एक अल्बम में से कागज़ों का एक बण्डल और कुछ फोटोग्राफ निकाले। उसने गुफा के सभी भित्ति-चित्रों पर विपुल नोट्स तैयार किए थे। उसने उनका वर्णन करते हुए और उनके रेखा-चित्र बनाते हुए पन्ने के पन्ने रंग डाले थे। ये नोट्स काफी अस्पष्ट और दुरूह थे, लेकिन फिर भी मैं दिलचस्पी का अभिनय करते हुए उनको पढ़ता गया। मैं इन भित्ति-चित्रों के ऐतिहासिक मूल्य के बारे में उससे पूछना चाहता था, लेकिन मेरी ज़बान जैसे बन्द हो गई, क्योंकि मैं अनुसन्धान की शब्दावली से अपरिचित था। काश, मुझे भी ऐसी विशिष्ट शब्दावली सिखाने वाले किसी स्कूल में शिक्षा मिली होती! तब मैं कई प्रकार के लोगों से बराबरी के दर्ज़े पर बात कर सकता। अब कोई मेरे अज्ञान पर तरस खाकर रोज़ी की तरह मुझे सिखाने का कष्ट नहीं उठाएगा। मैं उसकी बातें सुनता गया। वह प्राचीन तिथियों, प्रमाणों, निष्कर्षों और विभिन्न भित्ति-चित्रों के विवरणों की चर्चा करता गया। आखिर उसके इस काम का क्या उपयोग था, यह पूछने का साहस मुझमें नहीं हुआ। रोज़ी जब ट्रे में कॉफी लेकर आई (वह क्षिप्र पगों से जैसे फर्श पर तैरती हुई आई थी, मानो दिखा रही हो कि वह जोज़ेफ की चाल का मुकाबला कर सकती है) उस वक्त मार्को ने मुझसे कहा, ''प्रकाशित होकर सभ्यता के इतिहास के बारे में यह पुस्तक हमारी वर्तमान सभी धारणाओं को बदल देगी। इस स्थान की खोज करने में मैं तुम्हारा कितना आभारी हूँ, इसका ज़िक्र मैं पुस्तक में ज़रूर करूँगा ।''

'दो दिन बाद मैं फिर वहाँ गया। मैं दोपहर के वक्त वहाँ पहुँचा–ऐसे वक्त जब मुझे मालूम था कि मार्को नीचे गुफा में होगा और मुझे रोज़ी के साथ एकांत में कुछ क्षण गुज़ारने को मिल जाएंगे। वे लोग बंगले में नहीं थे। जोज़ेफ पिछले कमरे में उनके लंच का प्रबन्ध कर रहा था। उसने कहा, "दोनों नीचे गए हैं और अभी तक नहीं लौटे।" मैंने वहाँ की स्थिति भाँपने के लिए जोज़ेफ के चेहरे की ओर देखा। लेकिन उसका चेहरा भाव-शून्य था। मैंने उल्लसित भाव से पूछा,"कहो सब ठीक-ठाक है न, जोज़ेफ ?"

' "जी हाँ, सब ठीक है।"

' "मार्को तुमसे बहुत खुश है !" मैंने उसको प्रसन्न करने के लिए कहा। लेकिन उसने अपनी उदासीनता दिखाते हुए कहा, "अगर खुश है तो क्या हुआ? मैं तो सिर्फ अपनी ड्यूटी पूरी करता हूँ। अपने इस पेशे में कौन मेरी तारीफ करता है और कौन मुझे कोसता है, इसकी मैं परवाह नहीं करता। पिछले महीने यात्रियों का एक गिरोह मेरी पिटाई करने को तुल गया था, क्योंकि मैंने साफ कह दिया था कि मैं उनके लिए लड़कियाँ नहीं ला सकता। लेकिन इससे क्या मैं डर गया? मैंने उनको ताकीद की कि अगले सुबह ही यह जगह छोड़कर भाग जाएँ। यह जगह भले लोगों के रहने के लिए है। मैं अपनी ओर से यात्रियों के आराम की भरसक कोशिश करता हूँ। एक घड़ा पानी के लिए यहाँ अक्सर आठ आने लगते हैं और मुझे पहाड़ी के नीचे जानेवाली लॉरियों के साथ टीन और डिब्बे भेजकर उनके लौटने का इंतज़ार करना पड़ता है। लेकिन मेहमानों को इस मुश्किल का पता नहीं चलने देता। उन्हें इसका पता भी नहीं होना चाहिए। उनके लिए पानी का इन्तज़ाम करने का ज़िम्मा मेरा है और बिल अदा करने का ज़िम्मा उनका है। मैं अपनी ड्यूटी करता हूँ और दूसरों को अपनी ड्यूटी करनी चाहिए। इसमें किसी शक-ओ-शुबह की गुंजाइश नहीं होनी चाहिए। लेकिन अगर कोई मेहमान सोचे कि मैं लड़कियाँ लाने का दलाल हूँ तो मैं गुस्सा नहीं रोक पाता।"

' "बिल्कुल ठीक है, कोई भी ऐसी बात पसन्द नहीं करेगा," मैंने उसके एकांत भाषण का सिलसिला तोड़ने के लिए कहा। "मेरा ख्याल है कि यह आदमी तुम्हें कतई तंग नहीं करता।"

' "नहीं, नहीं, यह तो हीरा है। बहुत नेक आदमी है। अगर इसकी बीवी इसको अकेला छोड़ दे तो यह आदमी और भी भला हो जाए। बीवी के बिना वह कितना खुश था। तुम उसे यहाँ लाए ही क्यों? वह तो भयंकर झगड़ालू औरत है।"

' "अच्छी बात है तो मैं उसे पहाड़ी से नीचे ले जाऊँगा और मार्को को एकान्त में छोड़ दूँगा," मैंने गुफा की तरफ चलते हुए कहा। मार्को के आने-जाने से घास पर पगडंडी चिकनी और सफेद हो गई थी। झाड़ियों के बाद मैं बालू के मैदान को पार कर ही रहा था कि मैंने उसे सामने से लौटते हुए देखा। वह हमेशा की तरह मोटे कपड़े पहने था और उसका पोर्टफोलियों उसके हाथ में था। उससे कुछ गज़ पीछे रोज़ी आ रही थी। उनके चेहरों से मुझे उनके मूड का कुछ पता नहीं चला।

' "हलो !" मैंने उसकी तरफ देखकर प्रफुल्ल स्वर में कहा। उसने नज़रें ऊपर उठाईं, रुककर कुछ कहने के लिए मुँह खोला, फिर अपने शब्दों को निगल गया। मुझसे बचने के लिए वह एक तरफ खड़ा हो गया और उसने आगे चलना जारी रखा। रोज़ी उसके पीछे इस

तरह चल रही थी मानो नींद में चल रही हो। उसने मुड़कर मेरी तरफ देखा तक नहीं। रोज़ी के कुछ गज़ के फासले पर मैं पीछे-पीछे चलने लगा और हम कारवाँ की शक्ल में डाक-बंगले के फाटक के भीतर दाखिल हुए। मैंने महसूस किया कि मुझे भी उन्हीं की तरह खामोश रहना चाहिए और उन्हीं की तरह गुपचुप और उदास दिखाई देना चाहिए, तभी मैं उन लोगों में जंचूंगा।

'बरामदे की ऊपरी सीढ़ियों पर पहुँचकर उसने हम दोनों से कहा, "तुम दोनों में से किसी को भीतर आने की ज़रूरत नहीं है।" फिर उसने अपने कमरे में जाकर भीतर से दरवाजा बन्द कर लिया।

'जोज़ेफ एक प्लेट पोंछता हुआ रसोईघर के दरवाज़े में से निकला। उसने कहा, "मैं पूछने आया हूँ कि खाने के लिए क्या बनेगा।"

'रोज़ी बिना कुछ कहे बरामदा पार करके मार्को के कमरे की तरफ चली गई और उसने भीतर से दरवाज़ा बन्द कर लिया। यह नितान्त मौन मेरे लिए असह्य होता जा रहा था। यह नितान्त अप्रत्याशित था और मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि मैं उसके जवाब में किस ढंग से पेश आऊँ। मेरा अनुमान था कि वह हम लोगों से लड़ाई-झगड़ा या बहस करेगा, लेकिन उसके इस व्यवहार ने मुझे बिल्कुल चकित कर दिया।

' गफ्फूर दांतों के बीच एक तिनका चबाता हुआ आया और पूछने लगा, "हम लोग किस वक्त नीचे जा रहे हैं ?" मैं जानता था कि दरअसल वह सारा नाटक देखने की मंशा से आया था। वह ज़रूर इस बीच जोज़ेफ के साथ गप्पें हाँकता रहा होगा और दोनों ने रोज़ी के बारे में अपनी जानकारी का आदान-प्रदान किया होगा। मैंने कहा, "जल्दी क्यों मचा रहे हो गफ्फूर ?" फिर कटु स्वर में मैंने यह वाक्य भी जोड़ दिया, "जबकि तुम यहाँ रुककर बढ़िया तमाशा देख सकते हो।" उसने मेरे नज़दीक आकर कहा, "राजू, यह बात बिल्कुल अच्छी नहीं। आओ हम यहाँ से चले जाएँ। इन दोनों को अकेला रहने दो। जो भी हो, आखिरकार वे पति-पत्नी हैं। वे सुलह कर लेंगे। आओ, वापस अपने काम पर चले जाओ। तब तुम कितने मस्त और खुश थे। तुम्हें हर चीज़ में इतनी दिलचस्पी थी।" मेरे पास इस बात का कोई जवाब नहीं था। अगर उस क्षण भी ईश्वर मुझे गफ्फूर की सलाह पर चलने की सद्‌बुद्धि देता तो मेरे जीवन की दिशा बदल जाती। मुझे रोज़ी को वहीं छोड़कर वापस चले आना चाहिए था ताकि वह अपने पति के साथ बैठकर अपनी समस्याएँ सुलझा लेती। तब मेरी ज़िन्दगी में आने वाले बहुत-से गहरे मोड़ बच जाते। मैंने अपने गुस्से को ज़ाहिर न करते हुए गफ्फूर से कहा, "तुम कार के पास इन्तजार करो। मैं फिर बताऊँगा।" गफ्फूर बड़बड़ाता हुआ चला गया। कुछ देर बाद मैंने गफ्फूर को हॉर्न बजाते हुए सुना, उसी जल्दबाज़ी के अन्दाज़ में जिस तरह बस वाले सड़क की टी-शॉप पर खड़े अपने यात्रियों को बुलाने के लिए बजाते हैं। मैंने इस हॉर्न पर ध्यान न देने का निश्चय किया। मार्को ने बाहर के बरामदे में निकलकर कहा, "ड्राइवर, क्या तुम जाने को तैयार हो ?"

' "जी हाँ, जनाब," गफ्फूर ने उत्तर दिया।

' "अच्छा तो चलो," मार्को ने कहा और वह अपना बंडल उठाकर कार की ओर चल पड़ा। मैंने कमरे की खिड़की के शीशों में से उसे आते देखा। मैं घबरा गया। मैंने हॉल पार करके दरवाज़े से बाहर निकलना चाहा, लेकिन वह बन्द था। मैं जल्द से मुड़कर सीढ़ियों से

उतरता हुआ घूमकर गफ्फूर की कार के पास पहुँचा। मार्को तब तक गाड़ी में बैठ चुका था। लेकिन गफ्फूर ने अभी तक इंजन स्टार्ट नहीं किया था। औरों के बारे में पूछते हुए उसे डर लग रहा था, इसीलिए वह स्विच की चाबी को झूठ-मूठ घुमाकर वक्त गुज़ार रहा था। उसे हॉर्न बजाने के परिणाम से ताज्जुब हुआ होगा। ईश्वर जाने उसने क्यों हॉर्न बजाया था। वह शायद उसकी जाँच कर रहा था या योंही उससे खेल रहा था या फिर सबको बता देना चाहता था कि वक्त बीत रहा है।

‘ मैंने साहस करके कार में सिर डालकर मार्को से पूछा, ‘‘आप कहाँ जा रहे हैं ?’’

‘ ‘‘मैं होटल जा रहा हूँ, वहाँ का हिसाब चुकाने ।’’

‘ ‘‘सो किसलिए ?’’ मैंने पूछा। उसने एक तप्त दृष्टि से मुझे ऊपर से नीचे तक देखकर कहा, ‘मेरे लिए इसका जवाब देना ज़रूरी नहीं है। कमरा मैंने लिया था और अब मैं उसका हिसाब चुका रहा हूँ–बस । ड्राइवर, तुम सीधे मुझे अपना बिल दे सकते हो। जब पैसे लेने हों, अपनी रसीद तैयार रखना ।’’

‘ ‘‘क्या और कोई नहीं चल रहा ?’’ गफ्फूर ने साहस करके बंगले की ओर देखते हुए पूछा। ‘‘नहीं,’’ मार्को ने कहा। ‘‘अगर और कोई चलेगा तो मैं कार से उतर पड़ूँगा।’’

‘ ‘‘ड्राइवर,’’ मैंने अधिकारपूर्ण स्वर में कहा। गफ्फूर मेरे मुँह से ‘ड्राइवर’ का सम्बोधन सुनकर चौंक गया। ‘‘यह व्यक्ति जहाँ भी जाना चाहे, इसको ले जाओ और अपने किराये-भाड़े का पूरा हिसाब इससे कर लेना और कल यह कार मेरे लिए ले आना। मेरा अलग से हिसाब रखना।’’ मैं अपनी गुस्ताखी का और भी ज़्यादा प्रदर्शन कर सकता था। कह सकता था कि यह कार मैंने अपने बिज़िनेस के लिए रखी थी, लेकिन मुझे आगे बात बढ़ाने में कोई लाभ नहीं दीखा। वहाँ खड़े होकर मार्को को देखते हुए मेरे अन्दर अनजाने ही एकाएक एक तीव्र भावना जागी और मैंने एक झटके से कार का दरवाजा खोलकर मार्को को बाहर घसीट लिया। मोटे चश्मों और लोहे के टोप के बावजूद वह एक दुर्बल आदमी था–गुफाओं में बहुत ज़्यादा वक्त गुज़ारने से वह कमज़ोर हो गया था। ‘‘हैं ? क्या तुम मुझे पीटना चाहते हो ?’’ वह जोर से चिल्लाया।

‘ ‘‘नहीं, मैं तुमसे बात करना चाहता हूँ। और मैं चाहता हूँ कि तुम मुझसे बात करो। मैं तुम्हें इस तरह यहाँ से नहीं जाने दूँगा ।’’ मैंने देखा कि उसकी साँस ज़ोर-ज़ोर से चल रही थी। मैं शान्त हो गया और मैंने अपने स्वर को कोमल बनाकर कहा, ‘‘अन्दर आकर अपना खाना खाओ और जो तुम्हारे मन में है वह साफ-साफ कहो। जाओ पहले हम सारी बातें कर लें, उसके बाद तुम्हारे जी में जो भी आए तुम करना। तुम इस जगह पर अपनी बीवी को अकेला छोड़कर नहीं भाग सकते ।’’ मैंने गफ्फूर की ओर देखकर पूछा, ‘‘तुम्हें जल्दी तो नहीं है, क्यों ?’’

‘ ‘‘नहीं, नहीं। आप अपना खाना खा लें, जनाब। अभी तो बहुत वक्त है...’’

‘ ‘‘मैं जोज़ेफ से कहता हूँ कि वह आपका खाना फौरन लगा दे ।’’ मुझे अफसोस हुआ कि मैंने पहले ही दखल देकर सारी स्थिति काबू में क्यों नहीं कर ली।

‘‘तुम कौन हो ?’’ मार्को ने अचानक पूछा। ‘‘मुझसे तुम्हारा क्या काम है ?’’

‘ ‘‘बहुत काम है। मैंने तुम्हारी मदद की है। मैंने तुम्हारे काम को अपना काफी वक्त

दिया है। पिछले हफ्तों में तुम्हारे वास्ते मैंने काफी जिम्मेदारियाँ उठाई हैं।''

' ''और मैं इस मिनट से ही तुम्हें बर्खास्त करता हूँ,'' वह चिल्लाया। ''मुझे अपना बिल दो और यहाँ से दफा हो जाओ।'' अपनी उत्तेजित अवस्था में भी वह बिलों की बात नहीं भूलता था। मैंने कहा, ''हिसाब के मामले में शान्त मन से कहीं बैठकर सोचना क्या बेहतर न होगा–मेरा मतलब है, हिसाब जोड़ने के लिए। मेरे पास तुम्हारी दी हुई रकम में से कुछ पैसे बाकी हैं।''

' ''अच्छी बात है,'' वह गुर्राया, ''लाओ सारा हिसाब कर डालें। इसके बाद मैं तुम्हारी सूरत नहीं देखना चाहता।''

' ''इसमें कोई दिक्कत नहीं,'' मैंने कहा, ''लेकिन याद रखो कि इस बंगले में कमरों के दो स्यूट हैं और मैं उनमें से एक को बिल्कुल जायज़ ढंग से किराये पर ले सकता हूँ।'' इसी समय जोज़ेफ ने सीढ़ियों पर आकर पूछा, ''क्या रात को आपके लिए डिनर पकाऊँ?''

' ''नहीं,'' उसने उत्तर दिया।

' ''हाँ, मैं शायद डिनर खाऊँगा,'' मैंने कहा। ''और जोज़ेफ, अगर तुम्हें जल्दी हो तो तुम जा सकते हो। मैं तुम्हें फिर बुला लूँगा। तुम दूसरा स्यूट खोल दो और उसका किराया मेरे हिसाब में डालना।''

' ''बहुत अच्छा जनाब,'' कहकर उसने एक दरवाज़े का ताला खोला और मैं मकान-मालिक की अकड़ से उसमें दाखिल हुआ। मैंने दरवाजा बन्द नहीं किया। यह मेरा कमरा था और दरवाज़ा खुला छोड़ देना मेरी मर्ज़ी पर था।''

' मैंने खिड़की से बाहर झाँककर देखा। पश्चिम से सूरज की किरणें पेड़ों की फुनगियों को स्वर्ण से मण्डित कर रही थीं। यह अत्यन्त मनोहर दृश्य था। मेरी इच्छा हुई कि रोज़ी भी इसे देख सकती। लेकिन वह अन्दर थी। मैं अपने कमरे की लकड़ी की कुर्सी पर बैठकर सोचने लगा कि अब क्या किया जाए। मैंने क्या कर डाला था? मेरे सामने आगे का कोई स्पष्ट प्रोग्राम नहीं था। इसमें सन्देह नहीं कि मैंने उसे कार से घसीटकर उतार लिया था। लेकिन इससे बात क्या बनी? उसने अन्दर जाकर दरवाज़ा बन्द कर लिया था और मैं अपने कमरे में बैठा था। मैंने अगर उसको जाने दिया होता तो शायद मुझे रोज़ी को अपने बारे में बात करने के लिए राज़ी करने का मौका मिल जाता। अब मैंने बीच में दखल देकर सब कुछ चौपट कर डाला था। क्या मैं फिर जाकर गफ्फूर से कहूँ की हॉर्न बजाओ, जिससे शायद वह आदमी फिर अपने कमरे में निकल पड़े?

'इस तरह आधा घंटा बीत गया। बगल के कमरे से किसी हरकत या बातचीत का कोई स्वर नहीं सुनाई दिया। मैं पैर की उंगलियों के बल चलकर बाहर निकला, फिर रसोईघर में गया। जोज़ेफ वहाँ से गायब था। मैंने पतीलों के ढक्कन उठाकर देखा। खाना पका रखा था। लगता था कि किसी ने उसको छूआ तक नहीं था। मुझे उस आदमी के प्रति अचानक बड़ी दया महसूस हुई। रोज़ी तो अब तक भूख से मिट गई होगी। हर दो घंटे के बाद कुछ खाने की उसकी आदत थी। होटल में मैं लगातार उसके खाने के लिए ट्रे मँगवाया करता था। हम लोग अगर बाहर सैर पर होते तो मैं रास्ते में रूककर उसके लिए फल या नाश्ते की अन्य चीज़ें खरीदता रहता था। अब तो उस बेचारी लड़की का बुरा हाल होगा

और उसपर वह आज गुफा तक गई और आई थी। उसका विचार मन में उठते ही मुझे सहसा क्रोध आ गया। आखिर वह अपना खाना क्यों नहीं खा सकती थी या फिर मुझसे सारी स्थिति क्यों नहीं बता सकती थी? बजाय इसके, वह इस वक्त गूंगी-बहरी बनी कहीं बैठी थी। इस राक्षस ने कहीं उसकी ज़बान तो नहीं काट ली? मैने सचमुच डर से घबराकर सोचा। मैंने प्लेटों में खाना परोसा, फिर प्लेटों को ट्रे में सजाकर मैं उनके दरवाजे की ओर गया। बाहर मैं एक क्षण के लिए हिचकिचाया–सिर्फ एक क्षण के लिए ही, क्योंकि मैं जानता था कि अगर एक क्षण से ज्यादा पशोपेश में पड़ा रहा तो कभी अन्दर दाखिल नहीं हो सकूँगा। मैंने पैर से धक्का देकर दरवाज़ा खोला। रोज़ी अपने बिस्तर पर आँखें बन्द किए पड़ी थी। (क्या वह बेहोश थी? मैंने एक क्षण के लिए सोचा।) मैंने उसे पहले कभी इतनी दुखी अवस्था में नहीं देखा था। वह अपनी कुरसी पर बैठा हुआ था, मेज़ पर कोहनियाँ रखे और मुट्ठियों पर अपनी ठुड्डी टिकाए। मैंने उसे इतना रिक्त पहले कभी नहीं देखा था। मुझे उस पर दया आ गई। मैंने इस काण्ड के लिए स्वयं अपने को जिम्मेदार ठहराया। मैं इस झगड़े से तटस्थ क्यों नहीं रहा। मैंने ट्रे मार्को के सामने रख दी।

‘ ‘‘लोग आज अपना खाना ही भूल गए। अगर तुम्हारे दिमाग पर कोई बोझ है तो इसका यह मतलब तो नहीं कि खाना बरबाद किया जाए।’’

‘ रोज़ी ने अपनी आँखें खोलीं। वे सूजी हुई थीं। उसकी आँखें बड़ी और आकर्षक थीं, लेकिन इस समय वे कुछ और बड़ी, बाहर निकली हुई और डरी हुई, लाल और उदास लग रही थीं। वह उठकर बैठ गई और बोली, ‘‘तुम हम लोगों के साथ अपना वक्त बरबाद मत करो। तुम वापस चले जाओ। मुझे सिर्फ इतना ही कहना है।’’ उसकी आवाज़ मोटी, भर्राई हुई और उखड़ी-उखड़ी थी। ‘‘मैं सच कहती हूँ, तुम हमारे साथ मत रहो।’’

‘ आज इस औरत को क्या हो गया? क्या यह भी अपने पति के साथ मिली हुई थी। मुझे निकल जाने का आदेश देने का उसको पूरा अधिकार था। शायद उसे पश्चात्ताप हो रहा था कि वह लगातार मुझे अपने निकट खींचती रही थी। मैं इसके जवाब में सिर्फ इतना ही कह सका, ‘‘पहले तुम खाना खा लो। आखिर यह उपवास किसलिए कर रही हो ?’’

‘ ‘‘क्या तुम नीचे नहीं जा रहे ?’’ मैंने मार्को से पूछा। लेकिन उस आदमी का व्यवहार ऐसा था जैसे वह गूंगा-बहरा हो। उसने हम लोगों की बातें सुनी हैं, उसकी मुद्रा से इसका कोई संकेत नहीं मिला।

‘ रोज़ी ने फिर दुहराया, ‘‘मैं तुम्हें यहाँ से जाने के लिए कह रही हूँ। सुनते हो ?’’

‘ उसके स्वर ने मुझे कमजोर और डरपोक बना दिया। मैंने अस्फुट स्वर में कहा, ‘‘मेरा मतलब है तुम–या शायद वह नीचे शहर जाना चाहता हो, अगर ऐसा हो तो...’’

‘ घृणा से उसकी जीभ ने एक विचित्र आवाज़ की। ‘‘क्या तुम्हारी समझ में यह बात नहीं आई? हम लोग चाहते हैं कि तुम यहाँ से चले जाओ।’’

‘ मुझे क्रोध आ गया। जो औरत अभी अड़तालीस घंटे पहले मेरे आलिंगन में रही थी, वह इस समय मुझपर रौब छांट रही थी। अनेक अपमानपूर्ण और लांछना-भरी बातें मेरे कण्ठ में मचल रही थीं। लेकिन उस हालात में भी मुझमें इतनी अक्ल बाकी थी कि मैंने अपने शब्दों को निगल लिया, यह सोचकर कि वहाँ ज़्यादा देर खड़ा होना मेरे लिए

खतरनाक है, मैं पीठ मोड़कर कार की तरफ बढ़ा और मैंने कहा, ''गफ्फूर चलो चलें।''

' ''सिर्फ एक ही सवारी है ?''

' ''हाँ'' मैंने सीट पर बैठकर धम्म से दरवाज़ा बन्द करते हुए कहा।

' ''और वे लोग ?''

' ''मैं नहीं जानता। बाद में तुम उनसे निबट लेना।''

' ''अगर उनसे बात करने के लिए मुझे दोबारा यहाँ आना पड़ा तो फिर इस चक्कर का किराया कौन देगा ?'' मैंने अपना माथा पीटते हुए कहा, ''भले आदमी, फौरन चलो। इन सब मामलों को बाद में आकर निबटाना।''

' गफ्फूर एक दार्शनिक की तरह अपनी सीट में बैठ गया और उसने गाड़ी स्टार्ट कर दी। मैंने इस उम्मीद में पीछे मुड़कर देखा कि शायद वह खिड़की में से मेरी तरफ झांक रही होगी। लेकिन मेरी यह खुशकिस्मती कहाँ थी! कार ढलान पर तेज़ी से चलने लगी। गफ्फूर ने कहा, ''अब तुम्हारे परिवार के बड़े-बूढ़ों को चाहिए कि तुम्हारे लिए एक दुल्हन ढूंढ़े।'' मैं चुप रहा। अंधेरा बढ़ रहा था। उसने कहा, ''राजू, मैं उम्र में तुमसे बड़ा हूँ। मेरा ख्याल है कि इस बार तुमने बहुत अक्लमन्दी दिखाई है। इसके बाद तुम सुखी रहोगे।''

'आनेवाले दिनों में गफ्फूर की भविष्यवाणी पूरी नहीं हुई। मैंने जीवन में इतने दु:खदायी दिन कभी नहीं देखे। सभी सामान्य लक्षण तो मौजूद थे ही–यानी न खाने में रूचि थी, न नींद आती थी, न पाँव कहीं एक जगह टिकता था, न मन में शान्ति थी, न बोलने या स्वभाव में मधुरता थी, बस नहीं, नहीं, नहीं, सब चीज़ें नहीं थीं। एक बार इरादा पक्का करके मैं फिर अपने पेशे में लग गया। लेकिन मुझे हर चीज़ अवास्तविक लगती थी। मैंने दुकान के लड़के को निकाल दिया और खुद बैठकर चीज़ें बेचने और उनके दाम वसूल करने लगा, लेकिन हर बार मुझे महसूस होता कि यह मूर्खतापूर्ण काम है। जब ट्रेन आती, मैं प्लेटफार्म पर इधर से उधर चहलकदमी करता। निश्चय ही मैं घुमाने के लिए यात्री तो हमेशा पा सकता था। ''क्या तुम रेलवे राजू हो ?'' ''जी हाँ।'' और इसके बाद मोटा पति, पत्नी और दो बच्चे। ''देखो, हम लोग...से आ रहे हैं। अमुक-अमुक व्यक्तियों ने तुम्हारा ज़िक्र किया था और कहा था कि तुम ज़रूर हमारी मदद करोगे...और देखो मेरी पत्नी सरयू के उद्गम में स्नान करने की ज़िद कर रही है। इसके अलावा मैं हाथियों का कैम्प भी देखना चाहता हूँ। तुम अगर कोई और जगह बताओगे तो वह भी हम लोग खुशी से देखेंगे। लेकिन, याद रखो हमारे पास कुल तीन दिन का वक्त है। इससे ज़्यादा मुझे एक घंटे की भी छुट्टी नहीं मिल सकती। मुझे...तारीख को अपने दफ्तर में ज़रूर पहुँचना है।'' यात्रियों की इन बातों पर मैं शायद ही कभी ध्यान देता। मुझे पहले से ही पता होता था कि वे लोग क्या-क्या कहेंगे। मैं सिर्फ एक ही बात पर ध्यान देता था, वह यह कि उनके पास कितना वक्त है और उनकी आर्थिक स्थिति कैसी है। दरअसल मैं उनकी आर्थिक स्थिति पर भी उतना ध्यान नहीं देता था, लेकिन आदतन यह बात मेरे ध्यान में आ जाती थी, जानबूझकर नहीं। मैं गफ्फूर को बुलाता, सामने की सीट पर बैठ जाता और यात्रियों की पार्टी को घुमाने के लिए ले जाता। न्यू एक्सटेन्शन के पास से जब कार गुज़रती, मैं बिना सर घुमाए ही कहता, ''सर फ्रीड्रिक लॉले –'' जब हम मूर्ति के पास से गुज़रते तब मैं समझ जाता कि ठीक किस समय

सवाल पूछा जाएगा–'यह किसकी मूर्ति है ?' और मुझे यह भी मालूम होता कि अगला प्रश्न कब पूछा जाएगा और मैं पहले से ही अपना उत्तर तैयार रखता–"ज़िले का शासन चलाने के लिए राबर्ट क्लाइव इस आदमी को पीछे छोड़ गया था। उसने ही सारे बाँध और तालाब बनवाकर ज़िले का विकास किया था। भला आदमी था; इसीलिए यह मूर्ति यहाँ पर है।" विनायक स्ट्रीट पर स्थित दसवीं शताब्दी के ईश्वर मन्दिर के पास से गुज़रते हुए मैं उसकी दीवारों पर बनी मूर्तियों का विवरण सुनाता जाता, "अगर आप गौर से देखेंगे तो आपको मालूम होगा कि रामायण की सारी घटनाएँ दीवारों पर खुदी हुई हैं," आदि-आदि। मैं उन्हें बादलों और कोहरे से घिरे मेम्पी शिखर पर स्थित सरयू के उद्गम पर ले गया। वहाँ पहले तो स्त्री ने कुण्ड में डुबकी लगाई, फिर पुरुष यह कहते-कहते कि वह इन रिवाजों की परवाह नहीं करता, खुद भी उसमें कूद पड़ा। इसके बाद मैं उन्हें मन्दिर के भीतरी भाग में ले गया, वहाँ मैंने उन्हें खम्भे पर बनी पत्थर की प्राचीन मूर्ति दिखाई जिसमें शिव भगवान गंगा को अपनी जटाओं में लपेटे हुए हैं...मैंने उनसे अपनी फीस ली और गफ्फूर तथा दूसरे लोगों से अपना कमीशन वसूल किया और अगले दिन उन्हें गाड़ी पर चढ़ा दिया। यह सारा काम मैंने यन्त्रवत् ढंग से, बिना कोई उत्साह महसूस किए ही किया था। मैं हर समय रोज़ी के बारे में ही सोचता रहा था। 'उस आदमी ने शायद रोज़ी को भूखों मार डाला है या उसे पागल बना दिया है या शेर-चीतों के खाने के लिए वह उसे खुले जंगल में छोड़कर भाग गया है,' मैंने मन ही मन कहा। मैं एक अनाथ बालक की तरह दीखता था। किसी काम में मेरी दिलचस्पी नहीं थी। माँ ने इसका कारण जानना चाहा। उन्होंने पूछा, "तुम्हें क्या तकलीफ है ?"

' "कुछ नहीं," मैंने जवाब दिया। मेरी माँ मुझे घर पर इतना कम देखने की आदी थीं कि उनको यह देखकर आश्चर्य हुआ कि मैं अक्सर अब कहीं नहीं जाता। लेकिन उन्होंने ज़्यादा कुछ नहीं कहा। मैं खाता था, सोता था, प्लेटफार्म पर घूमता था और कभी-कभी यात्रियों को घुमाने के लिए भी ले जाता था, लेकिन मेरे मन में ज़रा भी शान्ति नहीं थी। मेरा मन हर समय उद्विग्न रहता था। यह अशान्ति स्वाभाविक थी। मैं यह तक न जानता था कि उसका आखिर हुआ क्या है–और इस मर्मान्तक खामोशी और अस्वाभाविक धैर्य का मतलब क्या है। यह बिलकुल अप्रत्याशित बात हुई थी। मैंने अपने सुखद स्वप्नों की भाषा में सोचा था कि वह अपनी पत्नी को मेरे हाथों में सौंपते हुए कृतज्ञतापूर्वक कहेगा, 'मुझे खुशी है कि तुम रोज़ी और उसकी कला की देखभाल करोगे। मैं खुद गुफा के चित्रों का अध्ययन करने के लिए एकान्त चाहता हूँ। तुम कितने अच्छे हो ।' या फिर वह अपनी आस्तीनें चढ़ाकर मुझे धक्के मारकर निकाल देगा। इन दो में से एक स्थिति ज़रूर आएगी, मैंने यही कल्पना की थी। लेकिन मैंने इस तरह के अनकहे तनाव की बात भी नहीं सोची थी। और फिर यह तो अकल्पनीय था कि रोज़ी इतने खूंखार ढंग से अपने पति का पक्ष लेगी। मैं उसके हृदय की इस कपट चाल से स्तम्भित रह गया था। मैं इस पर बार-बार मर्माहत होकर सोचता, सारी घटनाओं को मन में दुहराकर उनका अर्थ समझने की कोशिश करता। मैंने जान-बूझकर गफ्फूर से इस बारे में कोई चर्चा नहीं की। वह मेरी भावनाओं की कद्र करता था, इसलिए उसने भी कभी यह चर्चा नहीं छेड़ी, हालाँकि मैं रोज बेसब्री से इस बात का इन्तज़ार करता कि वह उन लोगों के बारे में कोई खबर सुनाएगा। किसी-किसी दिन, जब

मुझे उसकी कार की ज़रूरत पड़ती, वह कहीं नज़र न आता। तब मैं समझ जाता कि उस दिन वह पीक हाउस गया होगा। मैंने आनन्द भवन के करीब जाने से अपने को रोक रखा था। अगर मेरा कोई ग्राहक होटल में ठहरने की इच्छा प्रकट करता तो मैं उसे अब ताज होटल में भेज देता। मुझे उनके बारे में व्यर्थ चिन्ता नहीं करनी पड़ती थी। मार्को ने कहा था कि वह सीधे उनका हिसाब कर लिया करेगा–इसमें शक नहीं कि इस मामले में वह काफी चौकस है। मैं तो उन लोगों से या खुद गफ्फूर से अपना कमीशन वसूल करने के लिए ही इस तस्वीर में आता था। लेकिन मैं अपना सारा कमीशन छोड़ने को तैयार था। पैसा कमाने का मूड इस वक्त मेरे अन्दर नहीं था। मैं अन्धकार की जिस दुनिया में डूबा हुआ था, वहाँ पैसों के लिए कोई जगह नहीं थी। मेरा ख्याल है, कहीं कुछ रुपये ज़रूर पड़े होंगे। मेरी माँ उनसे हमेशा की तरह घर तो चला ही लेगी, और दुकान भी अपनी जगह कायम रहेगी। मैं जानता था कि गफ्फूर का हिसाब भी उसने चुका दिया होगा। लेकिन गफ्फूर ने इस बारे में कभी एक शब्द भी नहीं कहा। अच्छा ही हुआ। मैं नहीं चाहता था कि कोई बीते दिनों की याद दिलाए।

‘ रोज़मर्रा की साधारण ज़िन्दगी से मैं बेहद ऊब और डर गया क्योंकि मैं शान-शौकत की रोमांटिक ज़िन्दगी का इस बीच आदी हो गया था। धीरे-धीरे मुझे यात्रियों को घुमाने का काम बेमानी लगने लगा। मैंने रेलवे स्टेशन पर जाना कम कर दिया। मैं अब खलासी के लड़के को यात्रियों से मिलने के लिए स्टेशन भेज देता। वह पहले भी इस काम में कुछ अनुभव प्राप्त कर चुका था। बेशक यात्रियों को मेरे भाषणों और वर्णनों से वंचित रहना पड़ता था, लेकिन पिछले दिनों से मेरी बुद्धि भी कुन्द हो गई थी, और शायद उनको यह लड़का पसन्द था, क्योंकि दर्शनीय स्थान देखने के लिए वह भी उन्हीं की तरह उत्सुक रहता था। शायद ‘रेलवे राजू’ का नाम पुकारने पर वह खुद ‘हाँ’ कहने लग गया था।

‘ इस तरह कितने दिन बीते? सिर्फ तीस दिन, हालाँकि मुझे लगा कि बरसों गुज़र गए हैं। दोपहर को एक दिन मैं अपने घर के फर्श पर सो रहा था। मेरी नींद गहरी नहीं थी, क्योंकि मैंने नोट किया था कि साढ़े चार बजे की मद्रास मेल अभी-अभी गई है। ट्रेन की छुक-छुक जब समाप्त हो गई तो मैंने फिर सोने की कोशिश की। दरअसल ट्रेन के आने के शोर से ही मेरी नींद टूट गई थी। इसी वक्त मेरी माँ ने आकर कहा, “तुमसे कोई मिलने आया है।” माँ मेरे सवालों की प्रतीक्षा न करके रसोई में चली गई। मैं उठकर दरवाज़े पर गया। वहाँ रोज़ी खड़ी थी। उसके पाँव के पास एक ट्रंक रखा था और उसकी बगल में एक बण्डल था। “रोज़ी, तुमने खबर क्यों नहीं की कि तुम यहाँ आ रही हो? अन्दर आओ, अन्दर आओ। वहाँ क्यों खड़ी हो? वह तो मेरी माँ थी ।” मैं उसका ट्रंक उठाकर अन्दर ले गया। उसके इस हठात् आगमन के बारे में मैं अनेक अनुमान लगा सकता था। मैं उससे कोई सवाल नहीं पूछना चाहता था। मैं कुछ नहीं जानना चाहता था। मैं उसका प्रबन्ध करने के लिए व्यग्र था। मेरी सुध-बुध खो गई थी। मैं चिल्लाया, “माँ, यह रोज़ी है। यह हमारे घर में मेहमान रहेगी।” मेरी माँ औपचारिक ढंग से रसोई से निकलीं। उन्होंने मुस्कुराकर रोज़ी का स्वागत किया। “उस चटाई पर बैठ जाओ। तुम्हारा नाम क्या है, बेटी ?” माँ ने स्नेहपूर्ण स्वर में पूछा, लेकिन शायद ‘रोज़ी’ नाम सुनकर वे चौंक गई। वे किसी धार्मिक नाम की आशा करती थीं। उन्हें जैसे एक क्षण दुख हुआ, आश्चर्य हुआ, कि वे किसी ‘रोज़ी’ को अपने

घर में आतिथ्य कैसे देंगी। मैं खुद बड़े फूहड़ ढंग से खड़ा था। मैंने सुबह से शेव नहीं किया था और न अपने बालों में कंघी की थी। मेरी धोती मैली थी और उसमें सलवटें पड़ी हुई थीं। मेरी बनियान में आगे-पीछे कई छेद थे। इन छेदों को छिपाने के लिए मैंने सीने पर दोनों हाथ बाँध लिए। मैं कोशिश करके भी कभी इतना फूहड़ नज़र नहीं आ सकता था, जितना इस वक्त था। मुझे फटी हुई चटाई पर शर्म आई। यह उस वक्त से हमारे यहाँ थी, जब यह घर बना था। अँधेरे कमरे की दीवारें और खपरैल की छत धुएँ से काली हो रही थी। रोज़ी पर अपनी सम्पन्नता और आधुनिकता का प्रभाव डालने के लिए मैंने कितनी भी कोशिशें की थीं, वे एक क्षण में ही धूल में मिल गई। अगर उसने महसूस किया कि मैं आमतौर पर ऐसी ही गन्दी ज़िन्दगी का आदी हूँ, तो ईश्वर जाने उसे कैसा लगेगा। मुझे बहरहाल इतनी खुशी तो थी कि मैं चाहे फटी ही सही, लेकिन एक बनियान तो पहने था — वैसे मैं घर पर नंगे बदन बैठने का आदी था, माँ मेरी छाती के घने बालों पर कभी ध्यान नहीं देती थी, लेकिन रोज़ी, ओह...

‘ माँ रसोई में व्यस्त थीं, लेकिन एक मेहमान का स्वागत करने की रस्म अदा करने के लिए वे किसी तरह बाहर निकल आई थीं। मेहमान तो मेहमान थी, चाहे वह कोई ‘रोज़ी’ ही क्यों न हो। इसलिए माँ आकर चटाई पर बैठ गई, मेहमान से बातचीत करने की खातिर। उन्होंने पहला ही सवाल जो पूछा वह था, “तुम्हारे साथ कौन आया है रोज़ी ?” रोज़ी शरमा गई, वह हिचकिचाई और मेरी ओर देखने लगी। मैं दो कदम पीछे हट गया ताकि इस फटेहाल स्थिति में वह मुझे साफ-साफ न देख सके।

‘ मैंने उत्तर दिया, “मेरा ख्याल है माँ, रोज़ी अकेली ही आई है।”

‘ माँ आश्चर्यचकित रह गई। “आजकल की लड़कियाँ! तुम कितनी हिम्मतवाली हो! अपने दिनों में हमलोग तो किसी को साथ लिए बगैर सड़क के किनारे तक नहीं निकलते थे। और मैं सारी ज़िन्दगी में सिर्फ एक बार ही बाज़ार गई थी, तब राजू के बाप ज़िन्दा थे।”

‘ रोज़ी आँखें झपकाती हुई चुपचाप सुनती रही। उसकी समझ में नहीं आया कि वह इन भावनाओं का क्या उत्तर दे। उसने आँखें फाड़कर और भौंहें उठाकर देखा। मेरी नज़र उस पर गड़ी थी। वह कुछ पीली और परेशान दीख रही थी, लेकिन उस दिन की तरह सूजी हुई आँखों और कठोर स्वरवाली चण्डिका नहीं। उसका स्वर हमेशा की तरह ही मधुर था। वह पहले से कुछ कमज़ोर हो गई थी, लेकिन लगता था, जैसे उसे किसी बात की भी चिन्ता नहीं थी। माँ ने कहा, “पानी उबल रहा है। मैं तुम्हें कॉफी बनाकर देती हूँ। तुम्हें कॉफी पसन्द है न ?” मुझे खुशी हुई कि बातचीत अब इस आत्मीय स्तर पर आ गई है। मैंने मन में कामना की कि माँ सवाल पूछने की बजाय सिर्फ अपने बारे में बातें करेंगी। लेकिन ऐसा होना नहीं था। उन्होंने आगे पूछा, “तुम कहाँ की रहने वाली हो ?”

‘ “मद्रास की,” मैंने तुरन्त जवाब दिया।

‘ “यहाँ क्यों आई हो ?”

‘ “यहाँ कुछ मित्रों से मिलने आई है।”

‘ “क्या तुम्हारी शादी हो चुकी है ?”

‘ “नहीं,” मैंने फौरन कहा। माँ ने तीर की तरह मेरे ऊपर दृष्टि फेंकी। यह दृष्टि

अर्थपूर्ण थी। फिर अपने मेहमान की ओर स्नेहपूर्वक देखकर उन्होंने पूछा, ‘‘क्या तुम्हें तमिल भाषा नहीं आती ?’’ मैं जानता था कि अब मुझे चुप रहना चाहिए। मैंने रोज़ी को ही तमिल में इसका उत्तर देने दिया। ‘‘हाँ, आती है। घर पर हमलोग तमिल ही बोलते हैं।’’

‘ ‘‘तुम्हारे घर में और कौन लोग हैं ?’’

‘ ‘‘मेरे चाचा, चाची, और...’’ वह धीरे-धीरे बता रही थी कि माँ एक और भयंकर सवाल कर बैठी, ‘‘तुम्हारे पिता का क्या नाम है ?’’ रोज़ी के लिए यह एक भयंकर सवाल था। वह सिर्फ अपनी माँ को ही जानती थी और हमेशा अपनी माँ का ही ज़िक्र करती थी। मैंने कभी उससे उसके बाप के बारे में नहीं पूछा था। रोज़ी एक क्षण तक खामोश रही, फिर बोली, ‘‘मेरे पिता–अब नहीं रहे।’’

‘ मेरी माँ का हृदय सहानुभूति से द्रवित हो गया। वे आर्द्र स्वर में बोली, ‘‘बेचारी, न बाप हैं न माँ। तुम्हारे चाचा ज़रूर तुम्हारी देखभाल करते होंगे। क्या तुम बी.ए. पास हो ?’’

‘ ‘‘हाँ,’’ मैंने गलती सुधारते हुए कहा, ‘‘रोज़ी एम.ए. पास है।’’

‘ ‘‘वाह, वाह, बड़ी बहादुर लड़की हो। तब तो तुम्हें दुनिया में किसी बात की कमी नहीं है। तुम हमारी तरह अनपढ़ औरत नहीं हो। तुम कहीं भी अपना रास्ता बना सकती हो। तुम खुद अपनी रेलवे टिकट खरीद सकती हो, अगर कोई तंग करे तो पुलिसवाले को बुला सकती हो और अपने पैसे खुद सम्भाल के रख सकती हो। तुम क्या करना चाहती हो? क्या सरकारी नौकरी करके अपनी जीविका खुद कमाओगी? बड़ी बहादुर लड़की हो।’’ माँ रोज़ी से बहुत प्रभावित हुई। वे उठकर गईं और उसके लिए कॉफी का गिलास ले आईं। रोज़ी ने कृतज्ञतापूर्वक कॉफी पी। मैं सोच रहा था कि किस तरह वहाँ से निकल भागूं और ठीक से कपड़े बदलकर आऊँ। लेकिन वहाँ से निकलने का कोई मौका नहीं था। मेरे पिता की भवन-निर्माण-कला इससे आगे नहीं बढ़ी थी कि उन्होंने कुल एक बड़ा-सा कमरा और एक रसोई ही बनवाई थी। यह ठीक है कि बाहर एक चबूतरा था, जिसपर अक्सर मेहमान और मर्द लोग बैठा करते थे। लेकिन मैं रोज़ी से किस तरह कह सकता था कि वहाँ जाकर बैठे। वह खुला सार्वजनिक स्थान था और दुकान पर काम करनेवाला लड़का और उसके दोस्त जमा होकर उसे घूरेंगे और उससे पूछेंगे कि उसकी शादी हो गई या नहीं। मैं बड़ी कठिनाई में पड़ गया। हम सब तो एक ही कमरे में रहने के आदी थे और हमें इसमें कभी कोई बुराई नज़र नहीं आई थी। हमें इससे ज़्यादा की ज़रूरत भी नहीं महसूस हुई थी। मेरे बाप दुकान पर रहते थे, मैं पेड़ के नीचे खेलता रहता था और मर्द मेहमान आकर बाहर के चबूतरे पर बैठते थे। अन्दर का कमरा माँ या उनसे मिलने के लिए आनेवाली स्त्रियों के लिए रहता था। रात को सोने के लिए ही हम लोग कमरे में जाते थे। अगर मौसम ज़्यादा गरम होता तो हमलोग चबूतरे पर सोते। वह बड़ा कमरा अन्दर जाने का रास्ता भी था, बैठक, कपड़े बदलने और पढ़ने का कमरा भी था। मेरे शेव का शीशा वहाँ एक कील पर टंगा था। नहाने के लिए मैं अन्दर आँगन की एक खुली छतवाले स्नान-गृह में जाता था, जहाँ कुएँ से बाल्टी भरकर मैं सर पर डाल लेता था। मैं नहा-धोकर और कपड़े बदलकर तैयार होने के बीच कभी अन्दर आता, कभी बाहर जाता, और माँ तब तक या तो रसोई में व्यस्त रहतीं या कमरे में बैठी रहतीं। हम इन कार्यों के बीच एक-दूसरे की मौजूदगी के अभ्यस्त हो गए थे

और इसमें शर्म या संकोच का सवाल नहीं उठता था। लेकिन अब रोज़ी के सामने?

‘ माँ ने मेरी कठिनाई को भांपकर लड़की से कहा, ‘‘मैं पानी भरने के लिए कुएँ तक जा रही हूँ, तुम चलोगी मेरे साथ? तुम तो शहर की लड़की हो, तुम्हें हम गाँववालों की ज़िन्दगी भी देखनी-समझनी चाहिए।’’ रोज़ी चुपचाप उठकर माँ के पीछे चल दी। मैं दिल में मनाता रहा कि वहाँ माँ फिर उससे टेढ़े सवाल न करें। खैर, उनके जाते ही मैं व्यस्त हो गया, इधर से उधर अपनी तैयारी में भागता फिरा। जल्दी से मैंने दाढ़ी छीली, एक जगह काट भी ली, फिर नहाया, कंघी की और साफ धुले हुए कपड़े पहनकर तैयार हुआ। वे लोग जब लौटकर आईं उस वक्त तक मैं पृथ्वी की राजकुमारी की नज़रों के आगे पड़ने के काबिल हो गया था। मैं बाहर दुकान में गया और लड़के से कहा कि जाकर गफ्फूर को बुला लाए।

‘ ‘‘रोज़ी अगर तुम नहाकर कपड़े बदलना चाहो तो संकोच न करना। मैं बाहर रहूँगा। फिर हम लोग घूमने चलेंगे।’’

‘ ‘‘गफ्फूर की कार किराये पर मँगाना शायद अनावश्यक खर्च का बोझ उठाना था, लेकिन और चारा भी तो नहीं था। मैं अपने घर में रोज़ी से बातें नहीं कर सकता था, न मैं उसे लेकर सड़क पर टहलने के लिए जा सकता था। उसके साथ घुमने में मुझे किंचित् शर्म महसूस होती थी।

‘ मैंने गफ्फूर से कहा, ‘‘वह वापस आ गई है।’’

‘ वह बोला, ‘‘मुझे मालूम है। वे लोग यहाँ होटल में थे, और वह अभी मद्रास मेल से चला गया है।’’

‘ ‘‘तुमने तो कभी मुझे बताया नहीं।’’

‘ ‘‘मैं क्यों बताता? तुम्हें मालूम तो हो ही जाना था ।’’

‘ ‘‘क्या, क्या हुआ है ?’’

‘ ‘‘लेडी से ही पूछ लो, अब तो वह तुम्हारी जेब में है,’’ गफ्फूर ने चिढ़कर उत्तर दिया।

‘ मैंने उसको खुश करने के अन्दाज़ में कहा, ‘‘अरे नाराज़ मत हो गफ्फूर...मुझे शाम को गाड़ी चाहिए।’’

‘ ‘‘जैसा हुक्म, जनाब। टैक्सी का फायदा ही क्या अगर आपके हुक्म पर ला न सकूँ ?’’ उसने आँख मारी और मुझे यह देखकर खुशी हुई कि वह फिर पुराने दोस्ताना मूड में आ गया था। रोज़ी जब तैयार होकर बाहर निकली तो मैंने अन्दर जाकर माँ से कहा, ‘‘हम लोग ज़रा घूमकर अभी आते हैं माँ।’’

‘ ‘‘किधर चलें ?’’ गफ्फूर ने शीशे में से बाहर देखते हुए कहा। हमारी हिचकिचाहट देखकर वह बोला, ‘‘क्या पीक हाउस ले चलूँ ?’’

‘ पीक हाउस का नाम सुनते ही रोज़ी चौकन्नी हो गई और चिल्लाई, ‘‘नहीं, नहीं। मैं उस जगह से तंग आ गई हूँ ।’’ मैं चुप रहा।

‘ ताज होटल के सामने से गुज़रते हुए मैंने रोज़ी से पूछा, ‘‘यहाँ कुछ खाना चाहोगी ?’’

‘ ‘‘तुम्हारी माँ ने कॉफी पिलाई थी, और कुछ नहीं चाहिए। तुम्हारी माँ कितनी

अच्छी हैं !''

' ''बस उनमें एक ही बुराई है कि वे तुमसे तुम्हारी शादी के बारे में पूछती हैं।'' इस मज़ाक पर हम लोग एक तनावपूर्ण हँसी हँसे।

' ''गफ्फूर नदी की ओर ले चलो,'' मैंने कहा। वह बाज़ार की सड़क पर भीड़ हटाने के लिए बार-बार हॉर्न बजाता हुआ गाड़ी ड्राइव करने लगा। यह भीड़ का वक्त था। लोगों के दल सड़क पर इधर से उधर आ-जा रहे थे। रोशनियाँ जल चुकी थीं। दुकानों की तेज बत्तियों ने सड़क को जगमगा दिया था। गफ्फूर ने मोड़ पर इल्लामन स्ट्रीट में जाने के लिए गाड़ी घुमाई। यह संकरी गली, जहाँ तेल के व्यापारी रहते हैं, शहर की सबसे पुरानी गली है। इसके बीच बच्चे खेलते रहते हैं, गायें बैठी जुगाली करती हैं और गधे और कुत्ते रास्ता घेरकर खड़े रहते हैं। दोनों ओर के मकानों से टकराए बगैर इस संकरी गली में से कार निकाल ले जाना सम्भव नहीं है। नदी पर जाने के लिए गफ्फूर हमेशा इस रास्ते को ही चुनता था, हालाँकि इससे बेहतर और खुली सड़क एक और भी थी। बार-बार हॉर्न बजाकर भीड़ तितर-बितर करने में उसे खास मजा आता था। इल्लामन स्ट्रीट का आखिरी लैम्प बड़ी सड़क पर जाकर पड़ता था, और यह सड़क अदृश्य रूप से जाकर बालू में खो जाती थी। उसने आखिरी लैम्प के नीचे पहुँचकर ऐसे झटके से ब्रेक लगाया कि हम लोग उछलकर कार से बाहर आ गए। गफ्फूर आज कुछ अधिक उल्लासपूर्ण मुद्रा में था। उसका मिजाज ही ऐसा था, कभी बेहद खुश, कभी बेहद चिड़चिड़ा और कोई नहीं कह सकता था कि किस क्षण उसका मूड बदल नहीं जाएगा। हम उसे लैम्प के नीचे छोड़कर आगे बढ़े। मैंने कहा, ''हम लोग ज़रा टहलना चाहते हैं।'' उसने जवाब में अर्थपूर्ण आँख मारी।

' अन्धेरा घना हो गया था। बालू पर अभी भी कुछ लोग जहाँ-तहाँ बैठे थे। कुछ विद्यार्थी इधर-उधर टहल रहे थे। बच्चे खेल रहे थे और चिल्ला-चिल्लाकर चक्करों में दौड़ रहे थे। नदी के पक्के घाट पर कुछ लोग सन्ध्या का स्नान कर रहे थे। दूर नालप्पा कुंज के पास मवेशी अपने गले की घंटियां बजाते हुए नदी पार कर रहे थे। आकाश में तारे उग आए थे। तालुके के दफ्तर से सात के घंटे की आवाज़ आई। बड़ी हसीन शाम थी–जैसी वर्षों से चली आ रही थी। मैं बरसों से शाम के इसी वक्त यह सुन्दर दृश्य देखता आया था। क्या ये बच्चे कभी बड़े नहीं होते? मैं कुछ भावुक और काव्यमय हो उठा, शायद अपने साथ रोज़ी के होने के कारण मेरी भावनाएँ और चेतना जैसे यकायक तीव्र हो गई। मैंने बात शुरू करने के लिए कहा, ''बड़ी खूबसूरत शाम है।'' उसने संक्षिप्त उत्तर दिया, ''हाँ।'' हम चहलकदमी करते हुए विद्यार्थियों से दूर किसी एकान्त स्थान की तलाश में थे। मैंने बालू पर अपना रूमाल बिछाते हुए कहा, ''बैठ जाओ, रोज़ी।'' वह रूमाल उठाकर बालू पर बैठ गई। बढ़ता हुआ अँधेरा अनुकूल लग रहा था। मैंने उसके निकट बैठते हुए कहा, ''अच्छा अब बताओ, शुरू से आखीर तक।'' वह कुछ देर तक विचारमग्न रही, फिर बोली, ''वह आज शाम की गाड़ी से चला गया। बस इतनी ही बात है।''

''तुम उसके साथ क्यों नहीं गईं ?''

''मैं नहीं जानती। मैं इसीलिए लौटकर आई थी। लेकिन ऐसा हो नहीं सका। खैर, जो हुआ सो ठीक है। हम दोनों एक-दूसरे के साथ नहीं चल सकते थे।''

' ''मुझे बताओ कि हुआ क्या? और तुम उस दिन मेरे साथ इतनी बुरी तरह क्यों

बोली थीं ?''

' ''मैंने सोचा था कि एक-दूसरे को भूल जाने में ही हमारी भलाई है, और अच्छा हो कि मैं फिर उसके पास चली जाऊँ।''

' मेरी समझ में न आया कि इस पूछताछ को आगे कैसे बढ़ाऊँ। बातें मालूम करने का मेरे पास कोई साधन नहीं था–उन बातों को जो इस बीच घटित हो चुकी थीं। पूछताछ करते वक्त मेरी ज़बान लड़खड़ा जाती थी। फिर अचानक मुझे लगा कि इस तरह कोई नतीज़ा नहीं निकलेगा। मैं घटनाओं को सिलसिलेवार सुनना चाहता था, लेकिन वह इन बातों को सुनाने में असमर्थ थी। वह कभी आगे की, कभी पीछे की बातें करती, वह भी संक्षिप्त रूप में। मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। अधीर होकर मैंने कहा, ''एक-एक सवाल का धीरे-धीरे विस्तार से जवाब दो। मैं तुम्हें मार्को के पास छोड़कर आया था, ताकि तुम हमारे उस प्रस्ताव के बारे में बातें कर सको। तुमने उससे क्या कहा था ?''

' ''वही जो हमने तय किया था — कि वह मुझे नाचने की इजाज़त दे। जब तक मैंने इस बात का ज़िक्र नहीं किया था, वह बहुत खुश था। मैंने उस दिन या उससे अगले दिन तक इस प्रस्ताव की उससे चर्चा तक नहीं की। मैं उसे अपने काम के बारे में बताने के लिए उकसाती रही। उसने अपने नकल किए हुए चित्र और अपने लिखे हुए नोट्स दिखाए और देर रात तक वह उनके महत्त्व के बारे में बताता रहा। उसने कहा कि उसके कारण मानव-संस्कृति के इतिहास की पुनर्व्याख्या ज़रूरी हो जाएगी। वह अपनी पुस्तक के प्रकाशन की योजना के बारे में बताता रहा। फिर उसने कहा कि वह मेक्सिको जाएगा और सुदूर-पूर्व के देशों में भी जाकर इस तरह के अध्ययन करेगा और उन अध्ययनों को भी इस पुस्तक में जोड़ देगा। मुझे भी इससे बड़ा उत्साह मिला, हालाँकि मैं उसकी सब बातों को समझ नहीं सकी थी। मुझे लगा कि आखिरकार हम लोग अब एक-दूसरे को कुछ तो समझने लगे हैं...उस एकान्त बंगले में, जहाँ वृक्षों की पत्तियाँ हवा में सरसरा रही थीं, जिसके गिर्द लोमड़ियाँ और दूसरे जानवर घूम रहे थे और दूर नीचे घाटी में कहीं रोशनी चमक रही थी। दूसरे दिन सुबह मैं उसके साथ गुफा तक गई, किसी संगीत की स्वर-लिपि पढ़ने के लिए जो उसे गुफा की दीवार पर लिखी मिली थी। मुख्य गुफा से और भीतरवाले कमरे में बाँस की एक टूटी सीढ़ी पर चढ़कर हमें जाना पड़ता था। भयानक, डरावनी जगह है वह। कोई प्रलोभन अब मुझे ऐसी डरावनी और भयानक जगह पर जाने के लिए राज़ी नहीं कर सकता। 'यहाँ कोबरा साँप हो सकते हैं।' मैंने कहा, लेकिन उसने मेरे भय पर कोई ध्यान नहीं दिया। 'तब तो तुमको कतई नहीं घबराना चाहिए। दोस्तों के बीच में हो,'' वह बोला और हम दोनों हँस पड़े। फिर उसने लालटेन जलाकर दीवार पर वह जगह दिखाई, जहाँ चूने की ऊपरी परत खरोंचकर उसने नये भित्ति-चित्रों की खोज की थी। वे सब भी वैसी ही भयानक आकृतियों वाले प्राचीन चित्र थे, जैसे और दीवारों पर अंकित थे, लेकिन मार्को उनके गिर्द लिखे अक्षरों को पढ़ सका था। उनकी नकल करने पर उसने देखा कि वे तो संगीत की स्वर-लिपि हैं। मैं न तो इस स्वर-लिपि को समझ सकती थी, न उसका कोई उपयोग कर सकती थी। इन अक्षरों में कोई छन्द लिखा था जिसमें किसी प्राचीन संगीत-प्रणाली के लक्षण बयान किए गए थे। मैंने कहा, 'ये लक्षण अगर नृत्य के बारे में होते तो मैं कोशिश करके देख सकती थी–' उसने तपाक से मेरी ओर देखा। 'नृत्य' का शब्द उसे हमेशा

डंक की तरह चुभ जाता था। मुझे इस बारे में और कुछ कहते हुए डर लगा। लेकिन मकड़ी के जालों और चमगादड़ों के बीच उस प्राचीन फर्श पर लालटेन की मध्यम रोशनी में बैठते हुए मेरे अन्दर फिर साहस का संचार हुआ और मैंने पूछा, 'क्या तुम मुझे नाचने की इजाज़त दोगे ?'

' "तुरन्त उसका जवाब मिला–कठोर स्वर में,चेहरे पर कठोर मुद्रा फिर छा गई–'क्यों?"

' " 'मैं सोचती हूँ कि ऐसा करने से मुझे बड़ा सुख मिलेगा। मेरे मन में अनेक विचार घुमड़ते रहते हैं। तुम जैसे कोशिश कर रहे हो कि..."

' " ' ओह, तुम मेरा मुकाबला करना चाहती हो न! यह विद्या का क्षेत्र है, सड़क पर व्यायाम के करतब दिखाने का नहीं।'

' " ' तुम सोचते हो कि नृत्य सड़क पर व्यायाम के करतब दिखाने जैसी चीज़ है ?'

' " ' मैं तुम्हारे साथ इन बातों पर बहस करना व्यर्थ समझता हूँ। व्यायाम के करतब दिखाने वाला सारी ज़िन्दगी एक ही चीज़ को दोहराता जाता है; खैर, तुम्हारा नृत्य भी वैसी ही चीज़ है। इसमें बुद्धि की या रचनात्मक चीज़ कहाँ है? बस वही घिसे-पिटे करतब सारी ज़िन्दगी करते जाओ। हम बन्दर का नाच इसलिए नहीं देखते कि वह कलात्मक होता है, बल्कि इसलिए कि उसे बन्दर करता है।' मैं इन सारे अपमानों को पी गई। मुझे अभी भी उम्मीद थी कि मैं उसको राज़ी कर लूंगी। मैं खामोश हो गई ताकि वह अपना काम जारी रख सके। मैंने बात का रूख और दिशा में मोड़ दिया और वह फिर पहले की तरह प्रसन्न दीखने लगा। उस रात को खाने के बाद वह अपने अध्ययन में लग गया और मैं बरामदे में बैठकर बाहर घूमते हुए जानवरों को देखती रही। हमेशा की तरह, आज भी देखने के लिए कुछ नहीं था, लेकिन मैं बैठी सोचती रही कि उसने क्या कहा और मैंने क्या कहा और अब इस मामले का क्या हल निकाला जाए। मैंने सारे अपमानों और कष्टों की उपेक्षा की थी क्योंकि मुझे उम्मीद थी कि आखीर में अगर हम लोग किसी समझौते पर पहुँच गए तो सब कुछ वैसे भी भूल जाऊँगी। मैं वहाँ बैठी थी कि वह पीछे से आया और मेरे कंधों पर हाथ रख के बोला, 'मेरा खयाल था कि इस मामले में हम लोग अन्तिम फैसला कर चुके हैं। बोलो तुमने वायदा किया था या नहीं कि इस विषय को फिर कभी नहीं छेड़ेंगे ?" '

' तालुके की घड़ी ने आठ का घण्टा बजाया और बालू पर बैठी भीड़ गायब हो चुकी थी। हम अकेले रह गए थे, अभी भी मुझे रोज़ी के बारे में ज़्यादा मालूम नहीं हो सका था। गफ्फूर ने गाड़ी का हॉर्न बजाया। इसमें शक नहीं कि हमें देरी हो गई थी। लेकिन अगर मैं घर चला जाता तो शायद वह बातें न कर सकती। मैंने कहा, "क्या होटल में रात गुज़ारी जाए ?" "नहीं मैं वापस तुम्हारे घर लौटना चाहती हूँ। मैं तुम्हारी माँ से कहकर आई थी कि मैं वापस जाऊँगी।"

' "ठीक है। हम आधा घण्टा यहाँ और रूकेंगे। अब मुझे सारी बातें बताओ," मैंने कहा, मुझे याद आया कि मेरे पास नकदी नहीं है।

' रोज़ी ने कहना शुरू किया, "उसने इतने स्नेह से बात की कि मुझे लगा कि चाहे मुझे हमेशा के लिए अपनी सारी योजनाएँ क्यों न त्यागनी पड़ें, मुझे और कुछ नहीं चाहिए,

अगर उसका व्यवहार हमेशा मेरे साथ इतना ही अच्छा रहे। मैंने तय कर लिया कि मैं उससे किसी चीज़ की माँग नहीं करूँगी। फिर भी उसके लहज़े से उत्साहित होकर मैंने आखिरी चालाकी बरती, 'मैं चाहती हूँ कि तुम मेरा एक छोटा-सा नृत्य देखो। यह मेरी माँ की यादगार है। वह यह नृत्य किया करती थी ।' मैं उठकर खड़ी हो गई और उसका हाथ खींचकर अपने कमरे में ले गई। मैंने कुर्सी वगैरह चीज़ें वहाँ से हटा दीं और अपनी पोशाक को ठीक किया। फिर मैंने उसे धकेलकर बिस्तर पर लिटा दिया, जैसा कि मैंने तुम्हारे साथ किया था। मैंने जमुना किनारेवाले प्रेमी-प्रेमिका का गीत गाया और उसे नाच दिखाया। वह निरुत्साह भाव से बैठा रहा। अभी मैंने पाँचवी पंक्ति भी पूरी नहीं की थी कि उसने कहा, 'बस करो। बहुत देख लिया।'

' '' मैं सकपकाकर रुक गई। मुझे विश्वास था कि वह मेरे नृत्य पर मुग्ध होकर कहेगा कि मैं नाचना जारी रखूँ और ज़िन्दगी-भर नाचती रहूँ। लेकिन उसने कहा, 'रोज़ी, तुम्हें यह समझ लेना चाहिए कि यह कला नहीं है। तुम्हें पर्याप्त ट्रेनिंग नहीं मिली। तुम नाच का खयाल छोड़ दो ।'

' ''लेकिन यहाँ पर मैं गलती कर बैठी। गुस्से में मेरे मुँह से निकल गया, 'तुम्हारे अलावा सभी को मेरा नाच पसन्द है।'

' ''मिसाल के लिए ?'

' ''राजू ने मुझे नाचते देखा तो वह विभोर हो गया। जानते हो उसने क्या कहा ?'

' ''राजू ! तुमने कहाँ पर उसे नाच दिखाया था ?'

' '' 'होटल में–' और तब वह कुरसी की ओर इशारा करके जाँच करने वाले डाक्टर के अन्दाज़ में बोला, 'इधर आकर बैठो।' उसने मुझसे हर तरह के सवाल किए। यह सिलसिला रात-भर जारी रहा। जब से हम लोग यहाँ आए हैं तब से लेकर अब तक की सारी बातें उसने पूछ डालीं, रोज़ तुम किस वक्त होटल आते थे, कब जाते थे, कमरे में कहाँ बैठते थे, कितनी देर वहाँ रहते थे वगैरह-वगैरह। मुझे हर सवाल का जवाब देना पड़ा। मुझसे यह बर्दाश्त नहीं हुआ और मैं रोने लगी। मेरे जवाबों से वह अच्छी तरह भाँप गया कि इस बीच हम लोगों ने क्या-क्या किया था। अन्त में उसने कहा, 'मुझे नहीं मालूम था कि उस होटल में ऐसे-ऐसे कला-प्रेमी जमा होते हैं! लोगों की नेकचलनी में विश्वास करके मैंने मूर्खता की ।' पौं फटने तक हम लोग वहाँ बैठे रहे, वह बिस्तर पर और मैं कुरसी पर। नींद मुझ-पर हावी हो गई और मैं मेज पर सर रखकर सो गई। जब मेरी आँख खुली तो मैंने देखा कि वह गुफा के लिए जा चुका था।

' '' जोज़ेफ मेरे लिए कॉफी रख गया था। मैंने अपने बाल और कपड़े संभाले और उसकी तलाश में पहाड़ी से नीचे उतर गई। मैंने महसूस किया कि मैं ज़िन्दगी की सबसे बड़ी गलती कर बैठी हूँ। मैंने उससे बातें कहने में ऊँच-नीच का खयाल नहीं किया था, जिस तरह मैंने और सारे काम ऊँच-नीच का विवेक छोड़कर किए थे, जो गलत बात थी। मैंने महसूस किया कि मैंने बहुत बड़ा पाप कर डाला है। मैं जैसे सपने में गुफा की तरफ उतरती जा रही थी। मेरा मन बेहद उद्विग्न था। मैं उससे फिर सुलह कर लेने के अलावा ज़िन्दगी से और कुछ नहीं चाहती थी। अब मैं नाचना भी नहीं चाहती थी। मुझे लगा कि मैं खो गई हूँ...मेरे मन

में भय समा गया था। उसके प्रति मेरे मन में करुणा उमड़ आई, जब मुझे याद आया कि किस तरह वह सारी रात एक ही जगह बिस्तर पर बैठा रहा था, जब मैं कुरसी पर बैठी थी। उसके नेत्रों में छाई निराशा और आहत भाव मुझे रह-रहकर याद हो आता था। मैं घाटी में आगे बढ़ती गई, अपने चतुर्दिक् वातावरण से बिल्कुल बेखबर। उस वक्त अगर चीता भी मेरे मार्ग में पड़ जाता, तो मुझे उसके अस्तित्व का पता न चलता। वह अपनी गुफा में बैठा था, अपने टूटमा स्टूल पर, और भित्ति-चित्रों के स्केच बना रहा था। उसकी पीठ गुफा के द्वार की ओर थी। लेकिन जब मैं संकरे द्वार से अन्दर जाने लगी तो रोशनी रुकने से उसको पता चल गया और उसने पीछे मुड़कर देखा। उसकी दृष्टि कठोर थी। मैं जैसे कठघरे में खड़ी एक कैदी थी। 'मैं सच्चे दिल से माफी माँगने आई हूँ। मैं यह कहना चाहती हूँ कि तुम जैसा कहोगे वैसा करूँगी । मुझसे बड़ी गलती हो गई है...'

' '' वह बिना कुछ बोले फिर अपने काम में लग गया। वह इस तरह काम में एकाग्र था जैसे बिल्कुल अकेला हो। आखिरकार उसने जब अपना काम खत्म कर लिया तो अपने कागज़ सम्भालकर और पोर्टफोलियो उठाकर वहाँ से चल पड़ा–अपना टोप और चश्मा लगाकर। वह मेरे पास से इस तरह गुज़र गया जैसे मेरा अस्तित्व ही नहीं था। मैं वहाँ करीब तीन घण्टे तक खड़ी रही थी। इस बीच वह भित्ति चित्रों को नापता, टार्च से उनका निरीक्षण करता रहा और उनके रेखाचित्र बनाकर अपने नोट्स लिखता रहा था, मेरी ओर बिल्कुल ध्यान दिए बगैर। मैं उसके पीछे-पीछे बंगले तक गई। तुमने हमें उसी वक्त देखा था। मैं उसके कमरे में गई। वह अपनी कुर्सी पर बैठ गया और मैं बिस्तर पर। दोनों में से कोई एक शब्द भी नहीं बोला। तुम फिर कमरे में दाखिल हुए। मैं ईमानदारी से चाहती थी कि तुम उस वक्त हमें अकेला छोड़कर चले जाओ और हम लोग आपस में फिर सुलह कर लें।...यह स्थिति दिन पर दिन चलती गई और मैं इसी उम्मीद में रुकी रही। मैंने देखा कि जिस खाने को मैं छू देती थी, वह उसे नहीं खाता था। इसलिए मैंने उसको खाना परोसने का काम जोज़ेफ पर छोड़ दिया। मैं खुद रसोई में अकेली बैठकर खा लेती थी। मैं अगर बिस्तर पर लेट जाती थी तो वह फर्श पर सोता था। इसलिए मैंने फर्श पर सोना शुरू कर दिया और वह बिस्तर पर जाकर सोने लगा। वह न मेरी ओर देखता, न मुझसे बोलता। जोज़ेफ से तय करके वह दो बार नीचे गया, बंगले में मुझे अकेला छोड़कर। लौटकर वह फिर मेरी ओर ज़रा भी ध्यान दिए बगैर अपने काम में लग गया। लेकिन मैं दिन-प्रतिदिन उसके पीछे लगी रहती, वफादार कुत्ते की तरह–उसकी अनुकम्पा की प्रतीक्षा में। उसने मेरी पूरी उपेक्षा की। मैं कल्पना भी नहीं कर सकती कि एक इन्सान दूसरे इन्सान की इस तरह पूरी उपेक्षा कर सकता है। फिर भी मैं अपने आत्मसम्मान और गर्व को त्यागकर उसके पीछे छाया की तरह लगी रहती। मुझे आशा थी कि अन्त में वह फिर मान जाएगा। मैं उसके पास से एक क्षण के लिए भी दूर न होती, न कमरे में, न गुफा में। उस विशाल स्थान में इस तरह दिन-रात नि:शब्द रहते मन पर बड़ा बोझ पड़ता था। मुझे लगा कि मैं सचमुच गूंगी हो गई हूँ। वहाँ जोज़ेफ ही एक आदमी था जिससे मैं कभी-कभार एक-आध शब्द बोल सकती थी, लेकिन वह बड़ा गम्भीर और मितभाषी व्यक्ति है और मुझे बात करने का मौका नहीं देता था। इस तरह चुप्पी साधकर मैंने तीन हफ्ते गुज़ार दिए। लेकिन अब मैं और बर्दाश्त नहीं कर सकती थी। इसलिए एक रात को, जब वह अपनी मेज़ के सहारे बैठा था, मैंने कहा,

‘क्या तुम मुझे काफी सज़ा नहीं दे चुके ?’ इतने हफ्तों के बाद मेरा स्वर विचित्र लग रहा था, जैसे किसी और का हो। उस खामोश जगह में यह स्वर गूँज गया जिसमें मैं चौंक गई। आवाज़ सुनकर वह हिला, उसने मेरी ओर देखा और कहा, ‘मैं तुमसे आज आखिरी बार बोल रहा हूँ। तुम जहाँ चाहो जा सकती हो और जो जी में आए कर सकती हो।’

‘ “ ‘मैं तुम्हारे पास रहना चाहती हूँ। मैं चाहती हूँ कि तुम सब कुछ भूल जाओ और मुझे माफ कर दो...’ मैंने कहा। न जाने क्यों मैं उसे बहुत चाहने लगी थी। मुझे लगा कि वह अगर मुझे माफ करके वापस ले ले तो मेरे लिए यही काफी होगा।

‘ “ लेकिन उसने कहा, ‘हाँ, मैं भूलने की कोशिश कर रहा हूँ–इस पहली बात को भी कि मैंने किसी को अपनी पत्नी बनाया था। मैं भी यहाँ से जाना चाहता हूँ–लेकिन मुझे अपना काम पूरा करना है। मैं सिर्फ उसके लिए ही यहाँ रूका हूँ। लेकिन तुम यहाँ से जाने और अपने मन की करने के लिए आज़ाद हो।’

‘ “ ‘मैं तुम्हारी बीवी हूँ और तुम्हारे साथ हूँ।’

‘ “ ‘तुम यहाँ इसलिए हो कि मैं गुण्डा-बदमाश नहीं हूँ। लेकिन तुम मेरी बीवी कतई नहीं हो। तुम एक ऐसी औरत हो जो हर उस आदमी के साथ सो सकती है जो तुम्हारे नाचने-मटकने की तारीफ करता हो। बस। मैं तुम्हें अपने पास नहीं चाहता, लेकिन अगर तुम यहाँ से नहीं जा रही तो मुँह से मत बोलो। बस।’

‘ “मुझे बहुत बुरा लगा। मैंने सोचा कि इसके मुकाबले में तो ओथेलो ने भी डेस्डमोना के साथ ज़्यादा रहमदिली का सलूक किया था। लेकिन मैं इसको भी बर्दाश्त कर गई। मुझे अभी भी उम्मीद थी कि अन्त में वह नरम पड़ जाएगा और शायद जब वह यह स्थान छोड़कर जाएगा तो बदल जाएगा। अपने घर पहुँचकर सब ठीक हो जाएगा।

‘ “ एक दिन उसने सामान बाँधना शुरू किया। मैंने उसकी मदद करनी चाही, लेकिन उसने मुझे हाथ तक नहीं लगाने दिया। तब मैंने अपना सामान भी बाँध लिया और उसके पीछे चल पड़ी। गफ्फूर की कार आई। हम दोनों नीचे होटल में आ गए। उसी 28 नं. वाले कमरे में। मुझे वह कमरा अब जहर लग रहा था। एक दिन उसने हिसाब करने और बिल चुकाने में लगाया, और फिर ट्रेन का वक्त आने पर अपना सामान लेकर स्टेशन की ओर चल दिया। मैं चुपचाप उसके पीछे-पीछे चली। में धैर्यपूर्वक इन्तज़ार करती रही। मैं जानती थी कि वह मद्रास में हमारे घर जा रहा था। मेरे मन में घर जाने की बड़ी तीव्र इच्छा थी। कुली हमारे बक्स लेकर चला। उसने कुली को इशारे से मेरा सामान दिखाते हुए कहा, ‘मैं इस सामान के बारे में नहीं जानता–मेरा नहीं है।’ इस पर कुली ने एक क्षण मेरी ओर देखा और मेरा ट्रंक अलग कर दिया। जब ट्रेन आई तो कुली सिर्फ उसका ही सामान उठाकर ले गया और वह एक डिब्बे में बैठ गया। मेरी समझ में न आया कि मैं क्या करूँ। मैंने अपना सामान उठाया और उसके पीछे चल दी। लेकिन मैंने जब डिब्बे में पाँव रखना चाहा तो उसने कहा, ‘मेरे पास तुम्हारी टिकट नहीं है।’ और मुझे एक टिकट दिखाते हुए उसने डिब्बे का दरवाज़ा बन्द कर लिया। ट्रेन चल पड़ी और मैं तुम्हारे घर आ गई।”

‘ वह कुछ देर तक बैठी सुबकती रही। मैं उसे धीरज बँधाता रहा, “तुम ठीक जगह पर आई हो। अपने अतीत को बिल्कुल भूल जाओ। हम उस बदमाश को वक्त आने पर

अच्छा सबक सिखाएंगे।" फिर मैंने एक विराट घोषणा की, "सबसे पहले हम दुनिया से मनवाएंगे कि तुम इस युग की सबसे बड़ी कलाकार हो।"

' थोड़े ही दिनों में मेरी माँ सब कुछ समझ गई। रोज़ी जब स्नान करने के लिए चली जाती, माँ मुझसे कहतीं, "यह बहुत दिनों तक नहीं चल सकता राजू–अब यह मामला खत्म करो।"

' "बेकार दखल मत दो माँ। मैं अब बालिग हो गया हूँ। जानता हूँ कि मै क्या कर रहा हूँ।"

' "तुम अपने घर में एक नाचनेवाली लड़की को नहीं रख सकते। रोज़ सवेरे-सवेरे नाच और राग-रंग चलता है! घर का क्या हाल कर रखा है तुमने?"

' मेरा प्रोत्साहन पाकर रोज़ी ने नृत्य का अभ्यास शुरू कर दिया था। वह पाँच बजे उठकर स्नान करती, माँ के आले में रखी भगवान की तस्वीर के आगे प्रार्थना करती और फिर करीब तीन घंटों तक नृत्य का अभ्यास करती। घर उसके घुंघरुओं की झंकार से गूँज उठता। वह अपने वातावरण के प्रति बिल्कुल बेखबर रहती, उसका सारा ध्यान अपनी मुद्राओं और पग-संचालन पर ही एकाग्र रहता। इसके बाद वह माँ की मदद करती, सफाई करती, झाड़ देती, कपड़े धोती और घर की हर चीज़ को करीने से सजाती। मेरी माँ उससे खुश दीखती थीं और उसके प्रति स्नेहशील थीं। मैं अब सोचता भी नहीं था कि वह मेरे लिए कोई समस्या खड़ी कर देंगी, लेकिन एक दिन उन्होंने कहा, "तुम्हें अचानक हो क्या गया है?"

' माँ ने फिर रुककर कहा, "मैं सोचती थी कि इस बारे में कुछ करने की अक्ल तुम्हें आ जाएगी। यह इस तरह हमेशा तो नहीं चल सकता। लोग क्या कहेंगे?"

' " 'लोग' कौन हैं?"

' "मेरा भाई और तुम्हारे चचेरे भाई और हमारी जान-पहचान के दूसरे सब जने।"

' "मैं इन लोगों की राय की रत्ती-भर परवाह नहीं करता। इन बातों से तुम मत परेशान हो।"

' "आह, तुम अजब किस्म का हुक्म दे रहे हो, बेटा। मैं यह सब नहीं मान सकती।"

' स्नानगृह से आनेवाला धीमा संगीत रुक गया था। माँ ने तुरन्त इस विषय की चर्चा बन्द कर दी और जैसे ही रोज़ी नहाकर निकली, ताज़ा और शगूफे की तरह खिली हुई, माँ कमरे से उठकर चली गई। रोज़ी को देखकर कोई नहीं कह सकता था कि उसे किसी बात की चिन्ता सता रही होगी। वह इन दिनों जो कर रही थी, उससे काफी खुश थी। उसे अतीत ज़रा भी परेशान नहीं कर रहा था और भविष्य की ओर तो वह अपार विश्वास के साथ देख रही थी। मेरी माँ की वह अनन्य भक्त बन गई थी।

' लेकिन दुर्भाग्य से मेरी माँ, स्नेह के बाहरी दिखावे के बावजूद, अन्दर से कठोर होती जा रही थीं। उन्होंने अफवाहों पर कान धरने शुरू कर दिए थे और वे एक दाग लगी औरत के साथ रहने के विचार से समझौता नहीं कर पाती थीं। मुझे उनसे बहस करने में डर लगता था, इसलिए मैं अकेले में उनके सामने पड़ने से कतराता था। लेकिन जब भी उन्हें मौका मिलता, वे मेरे कान में यह फुसफुसाने से बाज न आतीं, "मैं कहती हूँ, यह लड़की

सचमुच की सर्पकन्या है। पहले दिन से ही मुझे तो वह अच्छी नहीं लगी।''

' मुझे अपनी माँ की इस धारणा और दुरंगे बर्ताव से चिढ़ होने लगी थी। रोज़ी अपनी अज्ञानता के कारण बड़ी खुश और निश्चिन्त थी और मेरी माँ की अनन्य भक्त बन गई थी। मुझे चिन्ता हुई कि कहीं किसी दिन माँ सीधे रोज़ी से निकल जाने के लिए न कह बैठें। मैंने भी नीति बदली और कहा, ''तुम ठीक कहती हो माँ। लेकिन वह एक शरणार्थी है और ऐसे में हम और कुछ कर भी तो नहीं सकते। उसे शरण देना हमारा फर्ज़ है।''

' ''क्यों? वह अपने पति के पास जाकर उसके पाँवों में क्यों नहीं गिर सकती? तुम तो जानते हो कि किसी भी पति के साथ रहना मज़ाक नहीं है, जैसा कि ये आजकल की लड़कियाँ सोचती हैं। किसी अच्छे पति का दिल सिर्फ पाउडर और लिपस्टिक से नहीं जीता जा सकता। तुम तो जानते हो, तुम्हारे बाप ने कितनी बार...'' मेरे पिता ने घर के किसी मामले में अपने अबुद्धिपूर्ण और कठोर बर्ताव से कितना बड़ा झगड़ा खड़ा कर दिया था और माँ ने किस तरह सब कुछ झेला था, इसकी एक कहानी उन्होंने सुनाई। मैं बड़े सब्र से और आदरपूर्वक वह कहानी सुनता रहा, जिससे उनका ध्यान दूसरी ओर बँट गया। कुछ दिनों के बाद वे रोज़ी से बात करते समय पतियों से सम्बन्ध रखनेवाली कहानियों का संकेत करने लगीं–अच्छे पतियों, बुरे पतियों, पागल पतियों, समझदार पतियों, नासमझ पतियों, पशुवत् हिंस्र पतियों, बिगड़े दिमागवाले पतियों, 'मूड' के शिकार पतियों–गरज़ यह कि हर किस्म के पतियों के किस्से सुनाने लगीं। लेकिन इन पतियों को उनकी बीवियाँ ही अपनी लगन, कोशिश और सब्र से ठीक रास्ते पर ला सकी थीं। वे सावित्री और सीता की पौराणिक कहानियाँ सुनातीं और दूसरी सती-साध्वी नारियों की मिसाल पेश करतीं। ऊपर से तो साधारण रूप में ही वे इन सबकी चर्चा करतीं लेकिन माँ का असली उद्देश्य छिप नहीं पाता था। वे इतने भौंडे ढंग से घुमा-फिराकर ये बातें करतीं कि हर शख्स को उनका संकेत नज़र आ जाता। रोज़ी के मामले से उन्हें अपने को अनभिज्ञ दिखाना चाहिए था। लेकिन वे बात-बात में उसकी ओर इशारा करतीं। मैं जानता था कि ये उपदेश रोज़ी के दिल पर चोट करते थे, लेकिन मैं मजबूर था। मुझे माँ का डर था। मैं रोज़ी को किसी होटल में रख सकता था, लेकिन अब मुझे अपनी आर्थिक स्थिति की वास्तविकता का खयाल रखना पड़ता था। रोज़ी को दु:खी देखकर मुझे अपनी निरुपायता का अहसास होता। केवल एक ही सन्तोष था कि उसके दु:ख में मैं भी उसका सहभागी था।

'मेरी चिन्ताएँ बढ़ती जा रही थीं। दुकान पर काम करने वाले लड़के की शिकायतें बढ़ती जा रही थीं। रेल के कर्मचारियों ने प्लेटफार्म पर फेरीवालों को आने की इजाज़त दे दी थी, जिससे दुकान की बिक्री कम होती जा रही थी। इसके अलावा नकद दाम पर सौदा लेनेवाले घट रहे थे और उधारवालों की संख्या बढ़ती जा रही थी। जिन आढ़तियों के यहाँ से मैं सामान लाता था, उन्होंने उधार पर मुझे सामान देना बन्द कर दिया। वह लड़का खरीद-बिक्री का हिसाब कुछ ऐसे ऊटपटांग ढंग से रखता कि मुझे यह अन्दाज़ लगाना मुश्किल हो गया था कि दुकान में कुछ फायदा भी हो रहा है या वह घाटे में ही चल रही है। वह काउण्टर पर से नकदी उठाकर जहाँ-तहाँ डाल देता और दुकान की अल्मारियों में जगह-जगह खाली खाने नज़र आने लगे थे। वह शायद पैसे चुराता था और खाने की चीज़ों पर हाथ साफ करने लगा था। आढ़तियों के यहाँ मेरी साख खत्म होते ही ग्राहक शिकायत

करने लगे कि दुकान पर कोई माँगी हुई चीज़ मिलती ही नहीं। अचानक एक दिन रेलवे ने भी मुझे वह स्थान छोड़ देने का नोटिस भेज दिया। मैंने स्टेशन मास्टर और पुराने खलासी की बहुत चिरौरी-मिन्नत की, लेकिन वे इस मामले में कुछ नहीं कर सकते थे। यह हुक्म कहीं ऊपर से आया था। दुकान किसी दूसरे ठेकेदार को दे दी गई।

'रेलवे से अपना सम्बन्ध टूट जाने की सम्भावना मेरे लिए अकल्पनीय थी। मैं क्रोध से हताश हो गया। जहाँ मेरे पिता और मैं बैठा करते थे, उस जगह एक नये आदमी को बैठा देखकर मेरी आँखों से आँसू बहने लगे। मैंने गुस्से में आकर लड़के के मुँह पर एक थप्पड़ जमाया, जिससे वह चीख-चीखकर रोने लगा। इस पर उसके खलासी बाप ने आकर मुझसे झगड़ा किया और कहा, "तुम्हारी मदद करने का उसे यह फल मिला है तुमसे! मैंने तो इस लड़के को पहले ही कहा था–खैर, वह तुमसे पैसे लेकर काम करने वाला नौकर तो नहीं था।"

' "इसको नौकरी के पैसे देता! यह तो सारी नकदी, उधार के पैसे और दुकान का सारा सामान हड़प गया है। खा-खा के मोटा हो गया है! पैसे तो, इसे चाहिए कि उल्टे मुझे दे जो सब कुछ खा-पीकर इसने मेरी दुकान चौपट कर दी।"

' "इस लड़के ने नहीं, बल्कि उस शैतान ने तुम्हें चौपट कर दिया है जो अन्दर बैठी है।" उसका इशारा रोज़ी की ओर था, जो शायद घर के दरवाज़े से झांककर इस झगड़े को देख रही थी और माँ चबूतरे पर खड़ी असीम यन्त्रणा से देख रही थीं। यह हद से ज़्यादा अशोभन दृश्य था। मुझे खलासी का इशारा बर्दाश्त नहीं हुआ, इसलिए मैंने गाली देकर उसपर हमला करना चाहा। इसी समय स्टेशन मास्टर आ गया और बोला, "तुम अगर यहाँ पर दंगा-फसाद करोगे, तो मैं तुम्हारा रेलवे की हद में दाखिल होना बन्द कर दूँगा।" नया दुकानदार तटस्थ भाव से खड़ा यह सारा तमाशा देखता रहा। उस मूँछोंवाले आदमी की लम्पट दृष्टि मुझे कतई पसन्द नहीं थी। खलासी को छोड़कर मैं क्रोध से भरा उसकी ओर मुड़ा और चिल्लाया, "याद रखो, तुम्हें भी किसी दिन ऐसी ही स्थिति का सामना करना पड़ेगा। यह मत सोचो कि तुम हमेशा यहाँ मौज उड़ाते रहोगे।" उसने मूंछे मरोड़ते हुए कहा, "सब तुम्हारे जैसे ही खुशनसीब होंगे, ऐसी उम्मीद कौन कर सकता है?" फिर उसने शरारत-भरे अन्दाज़ में आँख मारी। इस पर मैं क्रोध से बौखला गया और उसकी ओर झपटा। उसने हाथ से धक्का देकर मुझे पीछे हटा दिया, जैसे कोई मक्खी झाड़ दी हो। मैं लड़खड़ाकर पीछे गिरा और माँ से जा टकराया। सौभाग्य से वे सन्तुलन खोकर नीचे नहीं गिरीं, बल्कि उन्होंने अपने हाथों से मुझे सम्भाल लिया और चिल्लाईं, "चलो यहाँ से, चलते हो कि नहीं?" और उस खलासी और मूंछोंवाले आदमी और सबने गालियाँ देकर कहा, "जाओ, आज तो इस बूढ़ी माँ की बदौलत बच गए हो।" माँ मुझे घसीटकर घर के अन्दर ले गई। कुछ कागज़, कुछ रजिस्टर और मेरी दो-एक निजी चीज़ें, जो मैंने दुकान में रखी थीं, मेरी बगल में लगी थी। इन चीज़ों समेत मैं घर में दाखिल हुआ और मैं महसूस कर रहा था कि रेलवे से मेरा सम्बन्ध अब हमेशा के लिए खत्म हो गया है। मैं इतना उदास था कि मैंने रोज़ी तक की ओर मुड़कर नहीं देखा, जो एक ओर खड़ी मेरी ओर एकटक देख रही थी। कमरे के एक कोने में लेटकर मैंने आँखें बन्द कर लीं।'

8

'मुझे उधार देने वाला एक सेठ था, जिसकी आढ़त की दुकान मार्केट रोड पर थी। इस काण्ड के बाद वह जल्द ही मेरे घर पर आ धमका। उसने दरवाजे पर दस्तक दी। मैं दीवार के सहारे पीठ लगाए चटाई पर बैठा था और रोज़ी को नृत्य का अभ्यास करते देख रहा था। दरवाज़े पर सेठ को खड़ा देखकर मुझे बड़ी शर्म लगी। मुझे मालूम था कि वह क्यों आया है। वह एक नीले कपड़े में बाँधकर एक मोटी-सी बही साथ लाया था। मुझे देखकर वह प्रसन्न हुआ, जैसे वह डर रहा हो कि मैं कहीं घर छोड़कर भाग न गया होऊं। एक क्षण तक मेरी समझ में न आया कि उससे क्या कहूँ। मैं अपनी परेशानी उसे दिखाना नहीं चाहता था। रेलवे स्टेशन के उस झगड़े के बाद से मैं फिर अपनी स्थिति को ठण्डे दिमाग से समझने की कोशिश कर रहा था। रोज़ी को अभ्यास करते देखकर मेरे मन में यह बात स्पष्ट होती जा रही थी कि मुझे अब क्या करना चाहिए। उसके घुंघरुओं की झंकार, उसके गीतों के अस्फुट-मधुर स्वर और उसके नृत्य की ताल-मुद्राएँ मुझे मार्ग दिखा रही थीं। सौभाग्य से पिछले दिन की घटना के बारे में मेरी माँ ने मुझसे एक शब्द भी नहीं कहा था, जिससे मैं बहुत-सी परेशानी और मानसिक अशान्ति से बच गया था। लेकिन रोज़ी से बात किए बगैर उनका काम नहीं चलता था और मन के पूर्वाग्रहों के बावजूद वे उस लड़की को पसन्द करती थीं और उसके साथ स्नेहपूर्ण बर्ताव न करना उनके लिए सम्भव नहीं था। उसे भूखा रखना या उसे नाराज़ करना उनके दिल को गवारा नहीं होता था। उन्होंने खाना खिलाया और फिर अपना काम करने के लिए अकेला छोड़ दिया। सिर्फ मुझसे ही उस घटना के बाद वे नहीं बोलीं। मेरा विश्वास है कि वे सोच रही होंगी कि मैंने अपनी मनमानी हरकतों के कारण वह सब बरबाद कर दिया था जिसे उनके पति ने इतनी मेहनत से बनाया था। लेकिन सौभाग्य से उन्होंने इसके लिए उस बेचारी को जिम्मेदार ठहराकर कोई उलाहना नहीं दिया। उसे तो उन्होंने रोज़ की तरह प्राचीन कथाओं के उदाहरण और उपदेश ही देकर छोड़ दिया, जिन्हें सुनकर रोज़ी को बुरा नहीं लगा।

'पतला-दुबला सेठ अपने सर पर पचरंगी पगड़ी बाँधे हुए था। वह बड़ा सम्पन्न व्यवसायी था, उधार पर सामान देने में बड़ा उदार, लेकिन साथ ही वह चाहता था कि उसके दिए कर्ज़ का भुगतान नियमित रूप से होता रहे। वह मेरे दरवाज़े पर खड़ा था। मैं इसका कारण जानता था। मैंने उसकी आवभगत करते हुए कहा, "आइए, आइए विराजिए। हमारे लिए कितने सौभाग्य की बात है।" मैं उसे घसीटता हुआ अन्दर ले गया और चबूतरे के ऊपर बिठा दिया। वह मेरा अच्छा दोस्त था, इसलिए उधार-बाकी के बारे में बात करते हुए उसे संकोच हो रहा था। एक क्षण तक अप्रिय खामोशी छाई रही। सिर्फ कमरे से रोज़ी के घुंघरुओं की झंकार सुनाई दे रही थी। वह उसे सुनता रहा, फिर बोला, "यह क्या है?"

' "ओह," मैंने लापरवाही से कहा, "नृत्य का अभ्यास चल रहा है।"

‘ “नृत्य का अभ्यास!” वह आश्चर्यचकित हो गया। मेरे जैसे घर में नृत्य का अभ्यास चले, इसकी वह कल्पना भी नहीं कर सकता था। वह कुछ देर तक बैठा सोचता रहा, मानो स्मृति से जोड़कर इसका अर्थ समझ रहा हो। ‘शैतान घर के अन्दर है’ वाली कहानी शायद उस तक पहुँच गई थी। उसने इस मामले में अधिक जानने की इच्छा को दबाकर पूछा, “राजू, तुम्हें आजकल हो क्या गया है? महीनों से तुमने मेरा उधार भी नहीं चुकाया। पहले तो तुम हमेशा वक्त पर हिसाब चुका देते थे?”

‘ “अपना बिज़नेस इधर ठीक से नहीं चल रहा, भाई,” मैंने जानबूझकर लापरवाही से प्रसन्न मुद्रा बनाते हुए कहा।

‘ “नहीं, यह बात नहीं है। आदमी को हमेशा...”

‘ “और वह लड़का, जिस पर भरोसा करके मैंने सारी जिम्मेदारी डाल दी थी, उसने मुझे पूरा धोखा दिया।”

‘ “दूसरे पर दोष मढ़ने से क्या फायदा?” उसने पूछा। वह निर्मम आदमी था और लगता था मुझे तंग किए बगैर न मानेगा। उसने बही-खाता खोला और एक कॉलम के नीचे जोड़ी संख्या की ओर इशारा करते हुए बोला, “आठ हजार रुपये! इतनी रकम मैं बहुत दिनों तक पड़ी नहीं रहने दे सकता। तुम्हें इसके बारे में कुछ न कुछ करना होगा।” पहले माँ ने रोज़ी को लेकर कहा था, ‘तुम्हें इसके बारे में कुछ न कुछ करना होगा।’ फिर रोज़ी ने भी कहना शुरू किया था, ‘हमें कुछ न कुछ करना होगा।’ और अब यह आदमी भी यही कह रहा था। मैं उनकी इस सलाह से चिढ़ गया और मैंने रूखे स्वर में कहा, “मैं जानता हूँ।”

‘ “तो इस बारे में तुम क्या करना चाहते हो?”

“यही कि तुम्हें पैसे चुकाए जाएंगे...”

‘ “कब?”

‘ “मैं यह कैसे बता सकता हूँ?...तुम्हें इन्तज़ार करना होगा।”

‘ “अच्छी बात है। तुम्हें एक हफ्ता और चाहिए न?” उसने पूछा।

‘ “एक हफ्ता!” मैं इस मज़ाक पर हँस पड़ा। उसे जैसे बुरा लगा। आजकल मेरी बात पर सबको बुरा लगता था।

‘ उसने गम्भीर होकर कहा, “क्या तुम इसे हँसी की बात समझते हो? क्या तुम्हारा खयाल है कि मैं तुम्हारा मनोरंजन करने के लिए आया हूँ?”

‘ “सेठ, अपना स्वर क्यों ऊँचा कर रहे हो? हम लोग पुराने दोस्त हैं”

‘ “दोस्ती से इस मामले का कोई सम्बन्ध नहीं है,” उसने स्वर नीचा करके कहा। उसने जब आवाज़ ऊँची की थी, उस वक्त घुंघरुओं की छनछन सुनाई देना बन्द हो गया था, लेकिन आवाज़ धीमी करते ही भीतर से रोज़ी के पग-संचालन की चाप फिर सुनाई देने लगी। दीवार के पीछे रोज़ी की नृत्य-मुद्रा की कल्पना से मेरे होंठों पर शायद एक मुस्कान खेलने लगी थी। वह इससे फिर चिढ़ गया। “क्यों जनाब, जब मैं कहता हूँ कि मुझे मेरे पैसे चाहिए तो आप हँसते हैं, आप मुस्कराते हैं जैसे कोई सपना देख रहे हों। आप कहाँ हैं, इस दुनिया में या स्वर्ग में? मैं आज तुम्हारे पास काम-काज के अन्दाज़ में बात करने आया था। लेकिन लगता है, यह सम्भव नहीं है। अच्छी बात है, फिर मुझे दोष मत देना...” उसने

बहीखाता कपड़े में लपेटा और उठ खड़ा हुआ। ''सेठ, अभी न जाओ। तुम इतने परेशान क्यों हो?'' मैंने पूछा। दुर्भाग्य से मैं जो बात भी कहता, उसमें से लापरवाही की ध्वनि आती। वह अन्दर से कड़ा होकर गम्भीर हो गया। वह जितना ही चिढ़ता, मुझे अपनी हँसी पर काबू रखना उतना ही मुश्किल होता जाता। न जाने कौन-सा शैतान इस कुसमय में मेरे अन्दर इतनी हँसी जगा रहा था। हँसी मेरे अन्दर से फूट रही थी और खिलखिलाकर हँस पड़ने की प्रेरणा को मैंने बड़ी मुश्किल से रोका। शायद उसकी गम्भीरता का इतना प्रभाव तो मुझ पर पड़ा ही था। अन्त में जब वह क्रोध में फुँफकारता हुआ वहाँ से चला गया तो बगल में बहीखाता दबाए इस पतले-दुबले, रंग-बिरंगी पगड़ीवाले आदमी की वह गम्भीर मुद्रा मुझे इतनी बेहूदी लगी कि मैं हँसते-हँसते लोट-पोट हो गया। उसने मुड़कर एक बार आग्नेय दृष्टि से मेरी ओर देखा और चलता बना। मैं मुस्कुराता हुआ घर के अन्दर घुसा और फिर चटाई पर यथास्थान बैठ गया। रोज़ी ने एक क्षण के लिए रुककर पूछा, ''कोई दिलचस्प बात थी क्या? तुम्हारी हँसी की आवाज़ मुझे सुनाई दे रही थी।''

' ''हाँ, हाँ, कुछ ऐसी ही दिलचस्प बात थी कि मुझे हँसी आ गई।''

' ''वह कौन था?''

' ''एक दोस्त था,'' मैंने उत्तर दिया। मैं उसको इन परेशानियों के बारे में जानने नहीं देना चाहता था। मैं किसी बात से परेशान नहीं होना चाहता था। एक छत के नीचे रोज़ी के साथ रहना ही मेरे लिए काफी था। मुझे ज़िन्दगी में और कुछ नहीं चाहिए था। मैं शेखचिल्ली के कल्पना-स्वर्ग में विचरण कर रहा था। पैसों के बारे में बात न करके मैंने जैसे इस प्रश्न से हमेशा के लिए मुक्ति पा ली थी–कैसी मूर्खतापूर्ण धारणा थी। रोज़ी से बाहर की दुनिया मुझे इतनी अवास्तविक लगती थी कि इस समय इस धारणा के सहारे जीना मेरे लिए सम्भव था। लेकिन अधिक दिनों तक नहीं।

'आठ-दस दिनों के अन्दर ही मुझे मालूम हो गया कि मैं अदालती कार्रवाई की गिरफ्त में आ गया हूँ। मेरे हँसी-मजाक ने सेठ को इतना नाराज कर दिया था कि उसने अदालत के जरिये अपने पैसे वसूल करने के लिए फौरन कानून का सहारा लिया। मेरी माँ घबरा गईं। गफ्फूर के अलावा दुनिया में मेरा एक भी दोस्त नहीं था। मैंने उसे एक दिन फव्वारे के पास ढूँढ़कर उसको अपनी स्थिति के बारे में बताया। उसने पूरी हमदर्दी दिखाते हुए पूछा, ''तुम्हारा कोई वकील है?''

' ''हाँ, वह जो रूई के गोदाम के पास रहता है।''

' ''अरे, वह तो केस मुल्तवी कराने में पूरा माहिर है। वह तो केस को बरसों तक मुल्तवी करवाता जाएगा। इसलिए घबराओ नहीं। यह दीवानी का मुकदमा है या फौजदारी का?''

' ''फौजदारी का! उन्होंने मेरे ऊपर यह चार्ज लगाया है कि वह जब अपनी रकम वसूल करने के लिए मेरे यहाँ आया था, उस वक्त मैंने उसको पीटने की धमकी दी थी। काश मैंने सचमुच उसकी पिटाई की होती!''

' ''कितने अफसोस की बात है। अगर यह दीवानी का मुकदमा होता तो बरसों तक चल सकता था और इस देरी से तुम्हारा कोई नुकसान न होता। तुम्हारे घर में क्या वह

अभी तक है?'' उसने चालाकी से पूछा। मैंने उसकी ओर तीखी नज़रों से देखा। उसने कहा, ''खैर, तुम क्या करते हो, इसके लिए मैं किसी औरत को कसूरवार कैसे ठहरा सकता हूँ? तुम यात्रियों को देखरेख का काम फिर क्यों नहीं शुरू करते?''

' ''मैं अब रेलवे स्टेशन के पास तक नहीं फटक सकता। रेलवे के कर्मचारी मेरे खिलाफ गवाही देने वाले हैं कि मैं अक्सर लोगों से मारपीट कर बैठता हूँ!''

' ''क्या यह सच है?''

' ''हुं! खलासी का छोकरा अगर मेरे हाथ लग गया तो मैं उसकी गर्दन मरोड़ के रख दूँगा।''

' ''ऐसा मत करना, राजू। इससे अपना नुकसान ही करोगे। तुमने अपने लिए काफी परेशानियाँ खड़ी कर ली हैं। अब अपने को सम्भालने की कोशिश करो। आखिर तुम समझदारी से काम क्यों नहीं लेते?''

' मैंने इस पर सोचा, फिर कहा, ''मेरे पास अगर पाँच सौ रुपये भी हों तो नये सिरे से ज़िन्दगी शुरू कर सकता हूँ।'' उसका ख्याल आते ही मेरा उत्साह दुगना हो गया। ''वह सोने की खान है,'' मैं चिल्लाया। ''काश, उसका प्रोग्राम शुरू कराने के लिए मेरे पास पाँच सौ रुपये होते–ओह!'' मेरी कल्पनाएँ उड़ान भरने लगीं। मैंने गफ्फूर से कहा, ''जानते हो, भरत नाट्यम आजकल सबसे बड़ा कला-व्यापार है। इसकी इतनी माँग है कि सबसे बढ़िया नाच देखने के लिए लोग कितना भी खर्च कर सकते हैं। मैं इस बारे में कुछ नहीं कर पाता क्योंकि मेरे पास पैसे नहीं हैं। क्या तुम मेरी मदद नहीं कर सकते, गफ्फूर?'' वह मेरी दरखास्त पर मुस्कुराया। किसी की हँसी पर परेशान होने की अब मेरी बारी थी। मैंने कहा, ''मैंने तुम्हें काम दिलाने के लिए इतना कुछ किया है।''

' वह दरअसल एक दिलदार आदमी था। उसने मेरा विवेक जगाने की कोशिश की, ''मैं रईस आदमी नहीं हूँ, राजू। तुम तो जानते हो कि मैं किस तरह कार की मरम्मत तक के लिए उधार ले-लेकर काम चलाता हूँ। मेरे पास अगर पाँच सौ रुपये होते तो मैं यात्रियों को कम से कम अच्छे टायरों पर सवारी कराता। नहीं, नहीं, राजू...मेरी सलाह मानो। उसे वापस भेजकर साधारण, वास्तविक जीवन की ओर लौटने की कोशिश करो। इस कला-व्यवसाय की बात ज़बान पर भी मत लाओ। यह हम लोगों के लिए नहीं है।''

' यह सुनकर मैं इतना परेशान हो गया कि मैंने उसको चोट पहुँचाने के लिए कोई तीखी बात कही। वह जाकर अपनी ड्राइवर की सीट पर गम्भीर भाव से बैठ गया। ''तुम अगर किसी वक्त कार पर सैर करना चाहो तो मुझे बुला लेना। तुम्हारी मदद के लिए मैं सिर्फ इतना ही कर सकता हूँ। और याद रखो कि मैं तुम पर जो किराया पहले से बकाया है, वह नहीं मागूँगा।''

' ''तुमने पीक हाउस के जितने चक्कर किए थे, उनसे मेरा जो कमीशन बनता है, उसमें से काट लो,'' मैंने दम्भपूर्वक कहा।

' ''बहुत अच्छा,'' कहकर उसने कार स्टार्ट कर दी। ''कभी कार की ज़रूरत हो तो मुझे बुला लेना, यह हमेशा तुम्हारे लिए हाज़िर है। मैं खुदा से दुआ माँगता हूँ कि वह तुम्हें सही अक्ल दे।'' वह चला गया। मैं जान गया कि एक और दोस्त मेरी ज़िन्दगी के दायरे से

बाहर निकल गया है।

‘ दुर्भाग्य से ऐसा वह आखिरी दोस्त नहीं था। शीघ्र ही मेरी माँ की बारी आ गई। मैं एक दिन मन्त्रमुग्ध-सा बैठा रोज़ी का नृत्य देख रहा था। वह ‘नृत्य के चरण’ नाम की एक कृति दिखा रही थी। रोज़ी का कहना था कि उसमें उसने दो-तीन नये तोड़े जोड़े हैं और उन पर मेरी राय जानना चाहती थी। मैं आजकल इन बातों का विशेषज्ञ बन गया था। मैं उसे एक आलोचक की दृष्टि से देखने का उपक्रम कर रहा था, लेकिन दरअसल मेरा ध्यान उसके शरीर की रेखाओं में उलझा रहता था। उसने यह कहकर मुझे दूर धकेल दिया, ‘‘तुम पर कौन-सा भूत सवार हो रहा है?’’ वह कला की साधक थी, अब शारीरिक प्रेम उसके लिए एक मूलभूत उन्माद नहीं रह गया था।

‘ मेरे बचत के खाते में अब भी थोड़ी-सी रकम पड़ी थी, जिसके बारे में किसी को पता नहीं था। सेठ के आने के दो दिन बाद मैंने बैंक में से सारी रकम निकाल ली। मैं नहीं चाहता था कि यह रकम ज़ब्त की जाए। हमें इसी रकम का तो सहारा था। एक मामूली वकील कचहरी में मेरा केस लड़ रहा था। अदालत की फीसों वगैरह के लिए इस रकम का एक हिस्सा मैं उसे देने वाला था। बाज़ार में एक रूई की दुकान के ऊपर की एक परछत्ती पर उसका दफ्तर था। वह जगह इतनी तंग थी कि उसमें किताबों की एक अलमारी, एक मेज़, एक कुर्सी और मुवक्किलों के लिए एक बेंच रखी थी। जब मुझे सम्मन मिले थे तो मैं दहशत-भरी आँखों से अदालत में घूम रहा था। उस वक्त वकील की नज़रें मुझपर पड़ी थीं। जब मैं बरामदे में खड़ा इन्तज़ार कर रहा था तो उसने मेरे साथ दोस्ती पैदा कर ली थी और पूछा था, ‘‘क्या सचमुच तुमने सेठ को पीटा था? मुझे असली बात बताओ।’’

‘ ‘‘नहीं जनाब, यह झूठ है।’’

‘ ‘‘ज़ाहिर है कि वे लोग मुकद्दमे को आगे बढ़ाने के लिए तुमपर फौजदारी का इलज़ाम लगाना चाहते हैं। हम पहले फौजदारी का मुकद्दमा लड़ेंगे, फिर दीवानी में; हमारे पास बहुत वक्त है। तुम चिन्ता न करो। मैं इन मामलों से निपट लूँगा। तुम्हारी जेब में कितने रुपये हैं?’’

‘ ‘‘सिर्फ पाँच रुपये हैं।’’

‘ ‘‘इधर लाओ’’ अगर मैं पाँच की बजाय ‘दो’ कहता तो शायद वह उसी से सन्तुष्ट हो जाता। उसने रुपये जेब में डाल लिए और मेरे दस्तखतों के लिए एक कागज़ निकाला। ‘‘यह ठीक है। अब तुम्हारे सारे मामले सुलझ जाएंगे।’’ कचहरी में मुझे एक कठघरे में खड़े होने के लिए कहा गया। जज मेरी तरफ देख रहा था। सेठ अपनी नोटबुक लिए वहाँ खड़ा था। कहना न होगा कि उसका वकील भी वहाँ मौजूद था। हम एक-दूसरे की तरफ घूरने लगे। उसके वकील ने कुछ कहा। मेरे पाँच रुपल्लीवाले वकील ने जवाब में कुछ कहा और मेरी तरफ इशारा किया। इसके बाद अदालत के चपरासी ने मेरी पीठ थपथपाई और मुझे जाने के लिए कहा। मेरे वकील ने मेरी तरफ देखकर सर हिलाया। मेरी समझ में कोई बात आने से पहले ही सारा नाटक खत्म हो गया। मेरा वकील मुझे बाहर आकर मिला और उसने कहा, ‘‘मैंने केस मुल्तवी करवा दिया है। अगली तारीख कब है यह मैं तुम्हें बाद में बताऊँगा। रूई के गोदाम के ऊपर मेरे दफ्तर में आकर मुझसे मिलना, बगलवाली गली में जीना है।’’ वह चला गया। अगर मुकद्दमें में यही परेशानी थी तो मुझे लगा कि मैं आसानी

से सारे मामले को सुलझा लूँगा। एक काबिल वकील मेरी देखभाल कर रहा था।

‘ अदालत से लौटकर मैंने अपनी माँ से कहा, “चिन्ता की कोई बात नहीं माँ; मुकद्दमा ठीक चल रहा है।”

‘ “वह हमें इस मकान से निकाल सकता है। फिर तुम कहाँ जाओगे?”

‘ “ओह! इसमें काफी वक्त लगेगा। तब तक अपने दिमाग को बेकार परेशान मत करो,” मैं चिल्लाया।

‘ “वे हताश हो गई।” न जाने तुमको क्या हो गया है। तुम किसी बात को आजकल गम्भीरता से लेते ही नहीं।”

‘ “वह इसलिए कि मैं जानता हूँ कि किस बात की चिन्ता करनी चाहिए, किसकी नहीं। बस।”

‘ आजकल हमारी घरेलू बहसें रोज़ी की मौजूदगी में ही होती थीं। इसके लिए एकान्त की ज़रूरत नहीं पड़ती थी, हम लोग रोज़ी की उपस्थिति के अभ्यस्त हो गए थे। वह इन बहसों के बीच इस तरह व्यवहार करती थी मानो वह कुछ सुनती ही न हो। वह या तो एकटक निगाहों से फर्श की ओर देखती रहती या एक किताब के पृष्ठों की ओर (दुकान से मैं सिर्फ इस एक चीज़ को ही बचाकर ला सका था), और कमरे के एक कोने में सरक जाती थी, जैसे सुनने की सीमा से बाहर निकल गई हो। मेरे साथ अकेली होने पर भी वह हमारे घरेलू मामलों के बारे में सवाल पूछकर मुझे संकोच में नहीं डालती थी।

‘ मेरी माँ शायद यह सोचकर कि मैं अपना आवारापन नहीं छोड़ सकता, इस स्थिति के प्रति एकदम उदासीन हो गई थी। कम से कम मुझे ऐसा ही लगा। लेकिन दरअसल मुझे रास्ते पर लाने के लिए उन्होंने अपनी योजना सोच रखी थी। एक दिन प्रात: जब मैं एकाग्र मन से रोज़ी की नृत्य-भंगिमाएँ देख रहा था कि मेरे मामा जैसे आसमान फाड़कर आ टपके। वे मेरी माँ के बड़े भाई थे, माँ के गाँव के बड़े उत्साही जमींदार थे और एक प्रकार से हमारे घर के सलाहकार और निर्देशक थे। शादी-ब्याह हो, रुपये-पैसे का मामला हो, जन्म-मरण का मौका हो, या अदालत-मुकदमे का सवाल हो, हर बात में हमारा खानदान–यानी मेरी माँ और उनकी तीन बहनें जो जिले के विभिन्न भागों में रहती थीं–इन मामा की ही सलाह लेता था। वे अक्सर अपने गाँव में रहकर ही पत्र-व्यवहार द्वारा हम सब पर अपना नेतृत्व चलाते थे।

‘ मैं जानता था कि माँ उनको लिखकर सारी खबर पहुँचा देती थीं और महीने में उनका सघन अक्षरों में एक ही पोस्टकार्ड पाकर माँ को इतनी तसल्ली और खुशी होती थी कि वे हफ्तों तक उसका ज़िक्र करती रहती थीं। वे मामा की बेटी से मेरी शादी करना चाहती थीं। लेकिन पिछले हफ्तों की घटनाओं के कारण सौभाग्य से उन्होंने इस प्रस्ताव को स्थगित कर दिया था।

‘ अब मामा खुद आ धमके थे और दरवाज़े से ही उन्होंने अपनी गूँजती आवाज़ में पुकारा था, “बहन!” मैं हड़बड़ाकर खड़ा हुआ और दरवाज़े की ओर भागा। माँ रसोई में से झटपट निकलकर आई। रोज़ी ने नृत्य का अभ्यास बन्द कर दिया। मामा छह फुट लम्बे थे, खेतों में काम करने से उनका रंग गहरा सांवला हो गया था और उनके सिर पर छोटे

घुँघराले बाल थे। उन्होंने कुरते पर एक सदरी पहन रखी थी। उनकी धोती मटमैली थी, शहरवालों की तरह बुर्राक सफेद नहीं। उनके हाथ में जूट का एक थैला था (जिसपर हरे रंग में महात्मा गाँधी की तस्वीर छपी थी) और एक छोटा-सा बक्सा था। वे सीधे रसोईघर में पहुँचे, और थैली में से एक खीरा, कुछ नींबू, केले और हरी सब्जियाँ निकालकर बोले, "अपनी बगीची की ये चीज़ें हैं, जिन्हें मैं अपनी बहन के लिए लाया हूँ।" फिर उन्होंने बताया कि वे चीज़ें कैसे पकानी चाहिए। उन चीज़ों को देखकर मेरी माँ बहुत खुश हुईं और बोलीं, "रुको, मैं तुम्हारे लिए कॉफी बनाकर लाती हूँ।" मामाजी खड़े होकर बताने लगे कि किस तरह वे बस में सवार होकर आए थे। जब उन्हें मेरी माँ का खत मिला था तो वे क्या कर रहे थे, वगैरह। मुझे यह जानकर ताज्जुब हुआ कि माँ ने खत लिखकर उन्हें बुलाया था। यह बात माँ ने मुझे नहीं बताई थी। "तुमने तो मुझे नहीं बताया कि तुमने मामाजी को खत लिखा था।" मैंने कहा।

' मामाजी ने फौरन डाँटकर कहा, "तुम्हें क्यों बतातीं? तुम कोई उसके स्वामी हो!" मैं समझ गया कि वे मुझसे झगड़ा ठानना चाहते हैं। उनकी आवाज़ धीमी पड़ गई और उन्होंने मेरी कमीज़ का कालर पकड़कर मुझे नीचे खींच लिया और पूछा, "तुम्हारे बारे में ये कैसी-कैसी बातें सुनने में आ रही हैं। तुम बड़ी तरक्की कर रहे हो बरखुरदार! किसी भी आदमी को तुम पर नाज़ हो सकता है।" मैं अपने को छुड़ाकर एक तरफ हट गया और मेरे माथे पर गुस्से से त्यौरियाँ पड़ गईं। उसने कहा, "तुम्हें क्या हो गया है? तुम अपने को बड़ा आदमी समझने लगे हो? मैं तुम जैसे फूहड़ों से डरने वाला नहीं हूँ। जानते हो जब घर में कोई बछड़ा बेकाबू हो जाता है तो हम उसका क्या इलाज करते हैं? हम उसकी बधिया कर देते हैं। हम तुम्हारी भी बधिया कर देंगे, अगर तुम ठीक रास्ते पर नहीं आए।"

' मेरी माँ उबलते हुए पानी की ही देख-रेख में लगी रहीं, मानो उन्हें मालूम ही न हो कि हम दोनों के बीच क्या हो रहा था। मेरा खयाल था कि वे मेरा पक्ष लेंगी, लेकिन इस समय लगता था वे मेरी इस मुसीबत से मन ही मन खुश हो रही थीं, क्योंकि उन्होंने ही तो इसका जाल बिछाया था। इस आदमी की इतनी जुर्रत कि आकर मेरे ही घर में मुझे डाँट-फटकार रहा है! मैं क्रोध से उबलने लगा। मैं जैसे ही घर से बाहर निकला मैंने माँ को फुसफुसाकर मामा से कुछ कहते सुना। मैं समझ गया कि वे उनसे क्या कह रही थीं। मैं जैसे भय से उद्विग्न हो अपनी चटाई पर जाकर बैठ गया।

' रोज़ी उसी तरह अपनी जगह पर खड़ी थी, जहाँ मैं उसे छोड़ गया था–नृत्य की मुद्रा में, नितम्ब बाहर को झुकाए और कमर पर हाथ रखे। वह इस वक्त मन्दिर के खम्भों पर खुदी हुई मूर्तियों की तरह दीख रही थी। उसे देखकर मेरे मन में अचानक उन बीते दिनों की सुखद स्मृतियाँ जाग्रत् हो गईं, जब मैं लोगों को प्राचीन मन्दिर दिखाने ले जाता था और उस समय मुझे कैसा वैविध्यपूर्ण अनुभव करने और विविध किस्म के लोगों के सम्पर्क में आने का अवसर मिलता था। उसकी याद करके मेरे दिल से एक आह निकल गई। रोज़ी कुछ डरी और सहमी दिखाई दे रही थी। "वह कौन है?" उसने धीमे से पूछा।

' "उससे घबराने की ज़रूरत नहीं है। वह निरा पागल है। तुम्हें चिन्ता करने की ज़रूरत नहीं है।"

' उसे आश्वस्त करने के लिए इतना ही काफी था। मेरा कहना-भर काफी था। वह उस

पर अतर्क्य भाव से विश्वास कर लेती थी और अन्य सब बातों की नितान्त उपेक्षा कर देती थी। उसकी यह अन्धश्रद्धा मेरे अन्दर अपार आत्मविश्वास जगाती थी और जैसे मेरी प्रतिष्ठा को गरिमा प्रदान करती थी। मैंने उससे कहा, "तुम्हें अपना नाच बन्द करने की ज़रूरत नहीं है। तुम अभ्यास जारी रख सकती हो।"

' "लेकिन, लेकिन..." उसने मेरे मामा की ओर इशारा किया।

' "उनकी मौजूदगी को बिल्कुल भूल जाओ," मैंने कहा। मैं दुनिया की हर ताकत को चुनौती देने के मूड में था, लेकिन अपने अन्दर यह सोचकर काँप रहा था कि इस पर मामा न जाने क्या कहेंगे। "तुम्हें मेरे अलावा किसी की परवाह नहीं करनी चाहिए।" मैंने अचानक अधिकार के स्वर में कहा (मैं जब बालक था तब मुझे डराने के लिए इन मामा को ही बुलाया जाता था) यह मेरा घर है। यहाँ जो मेरे मन में आता है, करता हूँ। अगर कोई मुझे पसन्द नहीं करता तो उसे मेरे यहाँ आने की ज़रूरत नहीं है। बस।

' आखिर इस लड़की के सामने इतना बढ़-बढ़ के चुनौतियाँ देने की क्या ज़रूरत थी? उसने अपना नाच और गाना फिर शुरू कर दिया और मैं अब पहले से ज्यादा एकाग्र होकर उसके अभ्यास का निरीक्षण करने लगा, मानों मैं उसका गुरु था। मैंने अपने मामा को रसोई में से बाहर झाँकते हुए देखा, इसलिए मैं और भी गम्भीर गुरुवत् मुद्रा बनाकर रोज़ी को नृत्य के निर्देश देने लगा। मेरे मामा रसोई से मेरा अभिनय देखते रहे, फिर बाहर निकलकर कमरे में आ गए। रोज़ी अपने नृत्य में तन्मय थी जैसे अपने निजी कमरे में अकेली हो। मेरे मामा शायद नाच देखने के लिए ही अन्दर आए थे। उनकी आँखे घृणा और विद्रूप से बाहर निकल रही थीं। मैंने उनकी ओर ध्यान तक नहीं दिया। कुछ क्षण देखने के बाद वे जोर से चिल्लाए, "हूँ! तो तुम इस काम में आजकल मशगूल रहते हो? हूँ! हूँ! किसी ने कल्पना भी नहीं की थी कि हमारे खानदान में एक नाचने वाली को ताल देनेवाला लड़का भी पैदा होगा!"

' उन पर आक्रमण करने के लिए साहस और निश्चय जुटाने की खातिर मैं एक क्षण तक खामोश रहा। उन्होंने मेरी खामोशी से समझा कि मैं भयभीत हो गया हूँ, इसलिए उन्होंने एक और फब्ती कसी। "एक नाचनेवाली के कदमों में तुम्हें नाक रगड़ते देखकर तुम्हारे बाप की आत्मा अब बहुत खुश हो रही होगी!"

' वे मुझको गुस्सा दिलाने पर तुले दीखते थे। मैंने मुड़कर जवाब दिया, "अगर तुम अपनी बहन से मिलने आए हो तो बेहतर होगा उनके पास अन्दर चले जाओ। जहाँ मैं बैठा हूँ, वहाँ आने की क्या ज़रूरत है?"

' "आह!" उन्होंने खुशी से उछलकर कहा, "तुम्हारे अन्दर भी कुछ तेज़ी बाकी है, यह देखकर बहुत अच्छा लगा। तुमसे अभी भी उम्मीद की जा सकती है। लेकिन मामा को ही यह तेज़ी दिखाने की ज़रूरत नहीं है। अभी मैंने कहा नहीं था कि बहुत बिगड़ैल बछड़ों का हम लोग क्या करते हैं?" मामा इस वक्त तक फर्श पर बैठकर कॉफी की चुस्कियाँ ले रहे थे।

' "अश्लील बातें मत करो, और अब इस उमर में" मैंने कहा।

' "अरी ओ छोकरी!" उन्होंने चिल्लाकर रोज़ी से कहा, "अपना यह गाना और मटकना बन्द कर और मेरी बात सुन। क्या तू हमारे खानदान की है?" वे उत्तर की प्रतीक्षा

करने लगे। रोज़ी नाच बन्द करके उनकी ओर विस्फारित नेत्रों से देखने लगी। मामा ने कहा, "तुम हमारे खानदान की नहीं हो न? तुम हमारे गोत्र की भी नहीं हो न?" उन्होंने फिर एक क्षण उत्तर की प्रतीक्षा की और खुद ही उत्तर देना शुरू किया, "नहीं। क्या तुम हमारी जात की हो? नहीं। हमारे वर्ग की हो? नहीं। क्या हम तुम्हें जानते-बूझते हैं? नहीं। क्या तुम इस घर और परिवार की हो? नहीं। ऐसी सूरत में तुम यहाँ किसलिए हो? आखिर तुम एक नाचनेवाली लड़की हो। और ऐसी लड़कियों को हम अपने घर की देहरी के भीतर पाँव रखने की इजाज़त नहीं देते। समझती हो? तुम एक नेक और समझदार लड़की मालूम देती हो। तुमको एक ऐसे घर में आकर ठहरना नहीं चाहिए था। क्या किसी ने तुम्हें बुलाया था? नहीं। और अगर कोई तुम्हें बुलाए भी तो भी तुम्हें वहाँ ही रहना चाहिए, जहाँ तुम्हारी जगह है। तुम इस तरह हमारे घर में नहीं रहतीं चली जा सकतीं। यह बहुत असुविधा की बात है। और फिर अपने पति को छोड़कर जवान बेवकूफों को अपने जाल में मत फाँसती फिरो। यह बात तुम्हारी समझ में आई कि नहीं?" इस अप्रत्याशित आक्रमण से तिलमिलाकर रोज़ी वहीं ज़मीन पर जड़वत् बैठ गई और उसने दोनों हाथों से अपना मुँह ढांप लिया। लगता है कि मेरे मामा को अपनी इस सफलता से बहुत सन्तोष हुआ क्योंकि उन्होंने अपनी बात को और स्पष्ट करते हुए कहा, "देखो इन बातों पर रोने का आडम्बर रचने की ज़रूरत नहीं है। यह समझने की कोशिश करो कि हम लोग तुमसे क्यों कह रहे हैं। तुमको अगली ट्रेन से ही यहाँ से चल देना चाहिए। वायदा करो कि तुम आज ही यहाँ से चली जाओगी। हम तुम्हें टिकट के पैसे देंगे।" इस पर रोज़ी ज़ोर से सुबकने लगी। मैं उछलकर मामा पर झपटा और उनके हाथ के प्याले को ठोकर मारकर चिल्लाया, "निकल जाओ, इस घर से!"

' वे सम्भलकर उठ खड़े हुए और बोले, "तो तुम मुझे इस घर से निकाल रहे हो? बात यहाँ तक पहुँच गई है? लेकिन तुम होते कौन हो, कुत्ते के पिल्ले, मुझे घर से निकालनेवाले? मुझे नहीं, तुम्हें निकलना पड़ेगा। यह मेरी बहन का घर है। तुम अगर नाचनेवाली छोकरियों का मज़ा लूटना चाहते हो तो इस घर से अभी निकल जाओ।"

' मेरी माँ आँखों में आँसू भरे रसोई से दौड़ी आई। वे सुबकती हुई रोज़ी पर चिल्लाते हुए झपटी, "अब तो तू बड़ी खुश होगी, अपने किए पर, चुड़ैल, राक्षसी! तू हमारे यहाँ कहाँ से आ टपकी? तेरे आने से पहले सब ठीक था, घर में शान्ति थी। तू नागिन की तरह इस घर में घुस आई। एक मूर्ख छोकरे की इस तरह ज़िन्दगी बर्बाद करते मैंने आज तक किसी को नहीं देखा! यह बेचारा कितना नेक लड़का हुआ करता था! लेकिन तेरे ऊपर आँख पड़ते ही इसका दिमाग फिर गया। जब इसने पहली बार 'नागिन लड़की' का ज़िक्र किया था, मेरा तभी दिल धक् से रह गया था। मैं जानती थी कि इससे कोई भलाई नहीं निकलेगी।" मैंने माँ की बात नहीं काटी। पिछले हफ्तों में उन्होंने अपने कलेजे में जो भावनाएँ दबा रखी थीं, मैंने उन्हें निकल जाने दिया। इसके बाद उन्होंने मेरी हिमाकतों का कच्चा चिट्ठा खोलना शुरू किया, यहाँ तक कि अदालत में मेरी पेशी का भी ज़िक्र किया और बताया कि मेरी हरकतों के कारण अब यह घर भी हाथ से निकल जाएगा, जिसे मेरे बाप ने अपने खून-पसीने से बनाकर खड़ा किया था।

' रोज़ी ने अपने आँसुओं से भरे नेत्र उठाकर सुबकते हुए कहा, "मैं चली जाऊँगी, माँ,

तुम मुझसे इतना कठोर होकर मत बोलो। इतने दिनों तक तो तुम्हारा बर्ताव इतना स्नेहपूर्ण था।'' मेरे मामा ने बीच में बात काटकर माँ से कहा, ''यह तुम्हारी अपनी गलती है, बहन। यह लड़की एक तरह से ठीक ही तो कह रही है। तुमने इसके साथ अच्छी तरह सलूक क्यों किया? तुमको चाहिए था कि शुरू में ही इसको साफ-साफ कह देतीं।''

' मुझे लगा कि इस आदमी को दबाने में या घर से निकालने में मैं बिल्कुल असमर्थ था। वह जो मन में आए कहता था और जहाँ चाहे वहाँ ठहर सकता था। उसे ज़बर्दस्ती धक्के मारकर बाहर निकालने के अलावा बेचारी रोज़ी की रक्षा करने का और कोई चारा न था, लेकिन वह मुझे एक हाथ में ही पछाड़ सकता था, अगर मैं उस पर हमला करता। माँ के स्वभाव ने अपने भाई का सहारा पाते ही कैसी कलाबाज़ी खाई थी, यह देखकर मैं स्तम्भित हो गया था। मैं बढ़कर रोज़ी के पास गया, और दोनों की हैरानी की परवाह न कर मैंने उसकी गर्दन में अपनी बांहें डालकर (मेरे मामा चिल्लाए, 'इस लड़के ने अपनी शरम-हया खो दी है!') धीमे स्वर में कहा, ''इन लोगों की बात मत सुनो। ये जो चाहे इन्हें कहने दो। कह-कहकर इन्हें अपनी ज़बान थकाने दो। लेकिन तुम यहाँ से कहीं नहीं जाओगी, रोज़ी। मैं यहीं रहूँगा और तुम भी यहीं रहोगी। जिन लोगों को यह इन्तज़ाम पसन्द नहीं है, वे खुशी से यह घर छोड़कर जा सकते हैं।''

' इस तरह वे लोग कुछ देर तक और चीखते-चिल्लाते रहे, लेकिन जब इसका कोई नतीजा नहीं निकला तो दोनों फिर सलाह करने के लिए रसोईघर में चले गए। मैंने इसके बाद एक शब्द नहीं कहा। मैंने एक बड़ा सबक सीखा था–अपने कान में उंगली डालकर बैठने का और मुझे यह देखकर खुशी हुई कि रोज़ी भी अपना दिल कड़ा करके सब कुछ बर्दाश्त करती रही थी और मेरी सहानुभूति पर उसे पूरा विश्वास था। वह सर उठाकर बैठ गई। और घर में होने वाली घटनाओं को देखती रही। खाना पक जाने पर माँ ने मुझे रसोई से आवाज़ दी। मैं रोज़ी को भी खाने के लिए ले गया। मामा को भोजन कराने के बाद ही माँ ने मुझे बुलाया था। मामा अपने साथ गाँव से सब्जियाँ लाए थे और उनके बताए ढंग से ही माँ ने उनको पकाया। खाकर मामा बाहर चबूतरे पर चले गए। वहाँ अपनी चादर बिछाकर वे बैठ गए और पान चबाने लगे। फिर वे ठंडे फर्श पर लेटकर सो गए। उनके खर्राटे सुनकर मेरी जान में जान आई। तूफान के बाद पूर्ण सन्नाटा छा गया था। माँ ने हम दोनों की ओर देखे बगैर ही खाना परोस दिया था। घर में गहरी शान्ति का साम्राज्य था। साढ़े तीन बजे शाम तक यह शान्ति अटूट बनी रही।

' उठकर मामा भीतर आए और उन्होंने फिर लड़ाई का ऐलान करते हुए कहा, ''ट्रेन जाने में सिर्फ एक घंटा बाकी है। क्या मुसाफिर तैयार है?'' उन्होंने रोज़ी की ओर देखा जो खिड़की के नीचे बैठी पढ़ रही थी। उसने घबराकर ऊपर देखा। मैं उस दोपहर को उसके पास से अलग नहीं हुआ था। लोग चाहे जो कहें, मैं उसकी मदद के लिए उसके निकट ही रहना चाहता था। मेरे मामा जब तक शहर में थे, मैं एक क्षण के लिए भी असावधान नहीं रह सकता था। मामा कब जा रहे हैं, यह जानने के लिए मैं उस वक्त कुछ भी कर सकता था। लेकिन वे मनमाने स्वभाव के आदमी थे और उनके जाने के बारे में मेरी इच्छा का उनपर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता था।

' रोज़ी ने किंचित् घबराकर देखा था। मैंने हाथ उठाकर उसे दिलासा दिया। मेरी माँ

कोने में से उठकर सामने आई और रोज़ी की ओर स्नेह से देखकर बोलीं, "अच्छा बेटी, तुमने यहाँ आकर बड़ा अच्छा किया; लेकिन अब तुम्हारे जाने का वक्त आ गया है।" वे एक नई चाल चल रही थीं–स्नेह का दिखावा करने का और यह मानकर चलने का कि रोज़ी ने तो जैसे जाने का वायदा ही कर लिया था। "रोज़ी बेटी, तुम तो जानती हो कि ट्रेन साढ़े चार बजे जाती है। तुमने अपना सारा सामान बाँध लिया है न? मुझे तो तुम्हारे कपड़े अभी भी इधर-उधर बिखरे दिखाई दे रहे हैं।" रोज़ी ने दु:खी मन से आँखें झपकाईं। उसकी समझ में न आया कि इसका क्या उत्तर दे। इसलिए मैंने बीच में पड़कर कहा, "माँ, रोज़ी कहीं नहीं जा रही।"माँ ने मुझसे अनुनय की, "राजू, कुछ तो सोचो। यह किसी और की बीवी है। इसको अपने पति के पास जाना चाहिए।" माँ के कथन में ऐसा शान्त और अकाट्य तर्क था कि मैं अंध भाव से यह दुहराने के अलावा और कुछ न कह सकता था, "माँ, रोज़ी कहीं नहीं जा सकती। उसको यहीं रहना होगा।"

' तब माँ ने तुरूप की दूसरी चाल चली। "अच्छा, अगर यह नहीं जाती तो फिर मुझे घर छोड़कर जाना होगा," माँ ने कहा।

' मामा बोले, "तुम्हारा ख्याल था कि यह बेचारी बे-आसरे है और तुम्हारे ऊपर निर्भर है।' फिर अपनी छाती ठोंककर वे चिल्लाए, "जब तक मेरी साँस चलती है, तब तक मैं अपनी बहन को बेआसरा नहीं होने दूँगा।"

' मैंने माँ से मिन्नत की, "माँ, तुम कहीं नहीं जाओगी।"

' "तो फिर उस छोकरी का बक्सा उठाकर बाहर फेंको और उसको धक्का मारकर स्टेशन की ओर खदेड़ दो और तुम्हारी माँ कहीं नहीं जाएगी। तुम अपनी माँ को समझते क्या हो? तुम्हारा ख्याल है कि वह एक ही घर में नाचनेवाली पतुरियों के साथ..." मामा ने कहा।

' "चुप रहो, मामा," मैं चिल्ला पड़ा और मुझे अपनी गुस्ताखी पर आप ही आश्चर्य हुआ। मुझे डर लगा कि वे शरारती बछड़ोंवाली धमकी फिर न दुहराएं। सौभाग्य से उन्होंने इतना ही कहा, "तुम कौन होते हो यह कहने वाले कि मैं चुप रहूं या बोलूं? तुम सोचते हो कि मैं तुमको रत्ती-भर भी कुछ समझता हूँ? क्या तुम इस...इसे...यहाँ से भेज रहे हो या नहीं? हम लोग बस इतना ही जानना चाहते हैं।"

' "नहीं; रोज़ी नहीं जा रही," मैंने बड़े शान्त स्वर में कहा। मामा ने एक आह भरी, घूमकर रोज़ी की ओर देखा, फिर माँ की ओर रुख करके बोले, "अच्छा बहन, अब तुम अपना सामान बाँधो। हम लोग शाम की बस से जाएंगे।" माँ ने उत्तर दिया, "अच्छी बात है। मैं ज़रा देर में अपना सामान बाँध लूँगी।"

' "मत जाओ, माँ," मैंने फिर आग्रह किया।

' "इस छोकरी की जिद तो देखो। कितनी खामोशी से सब कुछ देख रही है।" मामा बोले।

' रोज़ी ने भी आग्रह किया, "माँ, मत जाओ।"

' "ओ हो!" मामा बोले, "यह इतना सर चढ़ गई कि तुम्हें माँ पुकारने लगी है? कल शायद यह मुझे ममिया ससुर कहने लगेगी।" उन्होंने एक भयानक हँसी हँसते हुए मेरी ओर

मुड़कर कहा, ''सच तो यह है कि तुम्हारी माँ को घर छोड़कर जाने की ज़रूरत नहीं है। अपने जीते जी तो वे ही इस घर की मालिक हैं। अगर ये मेरी बात मान लेतीं तो मैं तुम्हें आज अच्छी तरह मज़ा चखाता। ये आखिर तक यहीं ठहरी रहतीं। मेरे बहनोई बेवकूफ नहीं थे। उन्होंने तुमको सिर्फ आधे घर का ही वारिस बनाया था...'' और वे तुरन्त कानूनी पेचीदगियों का बयान करने लगे, जो मेरे पिता की वसीयत से पैदा हो गई थीं। फिर उन्होंने बताया कि वे अगर माँ की जगह पर होते तो किस तरह इन पेचीदगियों का हल निकालते, किस तरह एक-एक इंच ज़मीन के लिए लड़ते, यहाँ तक कि सुप्रीम कोर्ट तक मामले को ले जाकर दुनिया को दिखा देते कि तेरे जैसी कृतघ्न औलाद के साथ क्या करना चाहिए जिसे अपने परिवार की इज्ज़त का तनिक भी ख्याल नहीं है, लेकिन फिर भी जो अपने पूर्वजों की गाढ़ी कमाई के बल पर गुलछर्रे उड़ाना चाहता है। मामा जब तक कानूनी पहलुओं पर भाषण देते रहे, मैं चैन की साँस लेता रहा, क्योंकि तब तक रोज़ी को वे भूले हुए थे। ज़मींदारों की प्रथा के अनुसार वे भी मुकदमेबाज़ी की चर्चा को सबसे दिलचस्प चर्चा समझते थे। लेकिन जब माँ ने अन्दर से आकर कहा, ''चलो, मैं तैयार हूँ,'' तो कानूनी चर्चा का यह तिलिस्म एक झटके से जैसे टूट गया। माँ ने अपने कपड़े चारों ओर से समेट लिए थे। उन्होंने अपने लोहे के बड़े बक्से में, जो बीसियों साल से एक ही जगह बिना हटाए एक कोने में रखा था, अपना सामान भर लिया था और अब वह बक्सा बाहर निकालने-भर की देर थी। एक टोकरी में उन्होंने पीतल और तांबे के कुछ बर्तन रख लिए थे। मेरे मामा ने घोषणा की, ''ये बर्तन मेरे घर के हैं जो शादी के वक्त मेरी बहन को अपना घर बसाने के लिए दिए गए थे। ये बर्तन इनको हमने दहेज में दिए थे, इसलिए इनकी ओर ऐसी आँखों से घूरकर मत देखो।'' मैंने दूसरी ओर दृष्टि हटाकर कहा, ''माँ जो भी चाहे ले जा सकती है। इनसे कोई कुछ नहीं कहेगा।''

' ''आहा, तुमको इस बात पर बड़ा गर्व है न?'' मामा ने कहा, ''तुम अपनी माँ के प्रति बड़ी उदारता दिखा रहे हो , क्यों?''

' मामा मुझे ज़िन्दगी में पहले कभी इतने बुरे नहीं लगे थे। बचपन में हम लोग हमेशा उनसे डरा करते थे, लेकिन बड़ा होने के बाद मैंने उनको पहली बार इतने नज़दीक से देखा था। मेरी माँ उतनी नाराज़ नहीं दीखती थीं, जितनी कि उदास और मुझे तो लग रहा था जैसे वे मेरा पक्ष लेने के लिए अपने दिल में तैयार बैठी थीं। उन्होंने तपाक से मामा की बात काटते हुए अपने स्वर में असाधारण अनुकम्पा भरकर कहा, ''नहीं, मुझे और कुछ नहीं चाहिए। यही काफी है।'' उन्होंने प्रार्थना और भजन की कई छोटी-छोटी पुस्तकें आले पर से उठा लीं, जिनको वे दोपहर के भोजन से पहले भगवान के चित्र के नीचे बैठकर पूजा करते समय पढ़ा करती थीं, और मेरे मन में यह सोचकर गहरा अवसाद भर गया कि अब मैं माँ को कभी वहाँ बैठकर ध्यान-पूजा करते नहीं देखूंगा। माँ जब घर में अपनी चीज़ें बटोरती फिर रही थीं, मैं भी उनके पीछे लगा रहा और मेरे ऊपर नज़र रखने के लिए मामा मेरे साथ लगे रहे। शायद उनको डर था कि मैं माँ को रुक जाने के लिए फिर राज़ी न कर लूँ। उनकी चौकसी के बावजूद मैंने माँ से पूछा, ''माँ, तुम वापस कब आओगी?'' वे पहले तो हिचकिचाईं, फिर बोलीं, ''आऊँगी...आऊँगी...देखो कब तक।''

' ''उसी वक्त आ जाएगी जब इन्हें तार मिलेगा कि यहाँ रास्ता साफ हो गया है,''

मामा ने कहा। "हम लोग अपनी बहनों को वक्त पर धोखा देने वाले लोग नहीं हैं, याद रखना। गाँव का घर इनका ही है और जब चाहें ये वहाँ जा सकती हैं, ताकि इन्हें किसी की कृपा पर न रहना पड़े। हमारा घर उतना ही हमारी बहन का है जितना हमारा," उन्होंने गर्व से कहा। "भगवान के आले में दीपक जलाना मत भूलना," माँ ने देहरी की सीढ़ी से उतरते हुए कहा। "अपनी सेहत का ख्याल रखना, बेटा।" मामा ने बक्सा उठाया और माँ ने टोकरी। कुछ क्षणों में ही वे लोग सड़क के मोड़ से ओझल हो गए। मैं सीढ़ी पर खड़ा देखता रहा। देहरी पर रोज़ी खड़ी थी। मैं मुड़कर उसकी ओर देखने से डर रहा था, क्योंकि मैं सचमुच रो रहा था।

' प्रत्यक्ष रूप में हम एक विवाहित जोड़े की तरह रह रहे थे। रोज़ी घर सम्भालती थी और खाना पकाती थी। घर के लिए सौदा-सुल्फ लाने के अलावा मैं शायद ही कभी बाहर निकलता था। रोज़ी सारा दिन नाचती और गाती रहती थी। मैं हर समय उससे प्यार करता रहता था और बेसुध कर देने वाले रोमांच में डूबा रहता था। फिर यकायक जब मुझे महसूस हुआ कि वह मेरे आलिंगनों से तंग आ गई है तब कहीं मुझे होश आया। कुछ महीने बीतने के बाद उसने एक दिन पूछा, "तुम्हारी योजनाएँ अब क्या हैं?"

' "योजनाएँ!" स्वप्नों में डूबे हुए पुरुष ने सहसा जागकर पूछा, "कैसी योजनाएं?" इस पर वह मुस्कुराई और बोली, "तुम तो हर वक्त चटाई पर लेटे मेरी ओर देखते रहते हो या मुझे अपने आलिंगन में बाँधकर पड़े रहते हो। लेकिन मैं अब तक नृत्य का काफी अभ्यास कर चुकी हूँ–अब मैं चार घंटे का प्रोग्राम दे सकती हूँ, हालाँकि अगर साथ देने वाले वादक होते तो अभ्यास करने में आसानी हो गई होती..."

' "तुम्हारे साथ ताल देने के लिए यहाँ मैं जो हूँ। साथ देने के लिए तुम्हें और कौन चाहिए?"

' "मुझे पूरा एक आर्केस्ट्रा चाहिए। हम लोग काफी दिन घर में बन्द रहे हैं," वह बोली। उसके स्वर में इतनी गम्भीरता थी कि मुझे दोबारा मज़ाक करने का साहस नहीं हुआ।

' मैंने कहा, "मैं भी सोच रहा हूँ। हमें ज़रूर कुछ करना चाहिए।"

' दो दिनों तक गहरे सोच-विचार के बाद पहला कदम उठाने के रूप में मैंने सुझाव दिया, "देखो, 'रोज़ी' बड़ा मूर्खतापूर्ण नाम है। तुम्हारी कठिनाई यह है कि हालाँकि तुम एक पुराने नाचने वाले घराने की लड़की हो, लेकिन तुम्हारे माँ-बाप को तुम्हारा ठीक नाम रखना नहीं आया। सार्वजनिक ज़िन्दगी के लिए तुम्हारा नाम बदलना होगा। बोलो 'मीनाकुमारी' कैसा रहेगा?"

' उसने अपना सिर हिलाया, "यह ज़रा भी अच्छा नहीं। खैर, मुझे अपना असली नाम बदलने का कोई कारण नहीं दीखता।"

' "तुम समझती नहीं हो, प्यारी रोज़ी। यह गम्भीर या अर्थपूर्ण नाम नहीं है। तुम अगर इस नाम के साथ दर्शकों के सामने आओगी, तो वे सोचेंगे कि कोई सस्ती किस्म की नर्तकी है, जैसी जुआ-घरों में मनोरंजन के लिए रखी जाती हैं। शास्त्रीय नृत्य में निपुण नर्तकी की हैसियत से तुम्हें अपना नाम ऐसा रखना चहिए जिसकी ध्वनि काव्यमय और

आकर्षक हो।

' उसने महसूस किया कि मेरे तर्क में वज़न था और उसने तुरन्त पैड और पेन्सिल उठाकर बहुत सारे नाम लिख डाले, जो उसे तत्काल सूझ आए थे। मैंने भी अपने सुझाव जोड़ दिए। हम यह देखना चाहते थे कि उनकी ध्वनि कैसी लगेगी और कागज़ पर लिखकर वे कैसे दीखेंगे। पन्ने के पन्ने भरते गए और फेंक दिए जाते गए। यह एक अच्छा-खासा मज़ाक बन गया। इस खेल में मज़ा लेते वक्त हम लोग जैसे अपने मुख्य उद्देश्य को ही भूल गए। हर नाम में कोई न कोई हास्यास्पद बात निकल आती, या तो उसकी ध्वनि मज़ाक के काबिल होती या उस नाम का सम्बन्ध किसी ऐसे व्यक्ति से होता जो उसे अप्रिय बना देता। आधी रात के समय वह उठकर बैठ गई और बोली, "...के बारे में तुम्हारा क्या ख्याल है?"

' "यह एक राक्षस राजा की पत्नी का नाम था–लोग सुनकर डर जाएंगे," मैंने कहा। चार दिनों तक लगातार सोचने-विचारने और सैकड़ों नाम रद्द करने के बाद (इस क्रिया से हमें कम से कम यह महसूस करने का सन्तोष तो मिला कि हम लोग सचमुच इस पेशे से सम्बन्ध रखने वाले किसी महत्त्वपूर्ण कार्य में व्यस्त हैं) हमने 'नलिनी' नाम चुना। यह ऐसा नाम था जो सारपूर्ण भी था और जिसमें कविता और सार्वजनीनता भी थी और जिसे आसानी से याद भी रखा जा सकता था।

'नया नामकरण होने के साथ ही जैसे रोज़ी ने जीवन के एक नये चरण में प्रवेश किया। नये नाम के अन्तर्गत, 'रोज़ी' और उसने अपने पूर्व जीवन में जो कुछ भी सहा और झेला था, सब कुछ दर्शकों की दृष्टि से परे दफन हो गया। सिर्फ मैं ही जानता था कि वह रोज़ी है और उसे इसी नाम से पुकारता था। बाकी सारा संसार उसे नलिनी के नाम से ही जानता था। मैंने होश सम्भाला और शहर में जाकर लोगों से मिलना शुरू किया। यूनिवर्सिटी में, टाउन हॉल और क्लब में होने वाली मीटिंगों में जाकर मैं विभिन्न दलों के लोगों से मिलकर मौके की तलाश करने लगा। अलबर्ट मिशन स्कूल के लड़कों ने जब अपने यूनियन का वार्षिकोत्सव मनाने की तैयारियाँ शुरू कीं, उस वक्त वहाँ के क्लर्क के जरिए, जो कभी बचपन में मेरा सहपाठी रहा था, मैंने उनके काम में दिलचस्पी दिखाई। मैंने सुझाव दिया, "हर साल की तरह शेक्सपियर का नाटक खेलने की बजाय आप इस बार नृत्य का प्रोग्राम क्यों नहीं रखते?" मैंने भारतीय कलाओं के पुनरुद्धार का प्रश्न इतने प्रभावशाली ढंग से उठाया कि वे मेरी बात को अनसुना नहीं कर सके। ईश्वर जाने, मेरे अन्दर से न जाने कैसे इतनी प्रबल वाग्धारा फूट निकली थी। मैंने अपनी संस्कृति के महत्त्व और उसमें नृत्य के विशिष्ट स्थान के बारे में ऐसा ज़ोरदार भाषण दिया कि उन्हें मेरी बात माननी पड़ गई। किसी एक ने सन्देह प्रकट किया कि विद्यार्थियों की दर्शक मण्डली में क्या शास्त्रीय नृत्य चल सकेगा। मैंने सिद्ध किया कि इतना वैविध्यशाली होने के कारण शास्त्रीय नृत्य को तो सबसे लोकप्रिय मनोरंजन का माध्यम समझा जा सकता है। उस समय एक महान सामाजिक उद्देश्य को आगे बढ़ाने की प्रेरणा मेरे अन्दर से बोल रही थी। उस दिन मैं बड़ी संजीदा पोशाक में वहाँ गया था–मटका रेशम की मोटी कमीज़ें और दुपट्टे के साथ मैंने खादी की धोती और बिना कमानी का चश्मा पहन रखा था, जो मुझे उपहार के रूप में पहली भेंट के समय ही मार्को से मिला था। मेरी कलाई पर घड़ी थी। इस पोशाक ने मेरे व्यक्तित्व को ऐसी गरिमा प्रदान कर दी थी कि उन्हें आदरपूर्वक मेरी बात सुननी पड़ी। मुझे

भी लगा कि मैं एक नया आदमी बन गया हूँ। मैं अब पुराना रेलवे राजू नहीं था और मेरी हार्दिक इच्छा यह थी कि काश मैं भी रोज़ी की तरह एक नये नाम के नीचे अपने पुराने नाम को दफना सकता। सौभाग्य से किसी ने मेरे नाम पर ध्यान नहीं दिया। लगता था कि मेरे निजी मामलों में किसी को वैसी दिलचस्पी नहीं थी जैसी रेलवे कॉलोनी में मेरे पड़ौसियों ने दिखाई थी, और अगर किसी को मेरे बारे में मालूम भी था तो वह मेरे जीवन के उतार-चढ़ाव याद रखने की बजाय अपनी दूसरी समस्याओं में उलझा हुआ था। मुझे नहीं मालूम था कि मैं सांस्कृतिक विषयों पर इतने धारा प्रवाह रूप से बोल सकता हूँ। रोज़ी से बातें करने के दौरान मैंने इन विषयों की थोड़ी-बहुत शब्दावली सीख ली थी और आज मैंने उसका भरपूर प्रयोग किया। मैंने 'नृत्य-चरण' का वर्णन किया और उसके महत्त्व और वैशिष्टय का शब्दश: वह विवेचन दोहरा दिया जो मैंने रोज़ी से सुना था–यहाँ तक कि मैंने इस नृत्य की मुद्राएँ तक अपने भाव-प्रदर्शन द्वारा पेश कर दी। वे लोग आश्चर्यचकित-से मेरी ओर देखते रहे। मैंने कमेटी के सामने एक और चारा फेंका। मैंने कहा कि अगर वे चाहें तो मेरे साथ चलकर इस नृत्य का नमूना खुद अपनी आँखों से देख सकते हैं। उन्होंने बड़े उत्साह से यह बात मंजूर कर ली। मैंने उनसे कहा कि वह मेरी चचेरी बहन है जो मुझसे मिलने के लिए आई है और जो अपने शहर में बड़ी प्रसिद्ध कलाकार मानी जाती है।

'दूसरे दिन सुबह रोज़ी ने कमरे की चीज़ों को करीने से सम्भाल दिया था, ताकि उतना बुरा न दिखे और पड़ोस से गुलमुहर के फूल लाकर उसे सजा दिया था। उसने एक गुलदस्ता पीतल के गिलास में सजाकर एक कोने में रख दिया। उसने हमारे कमरे को भी थोड़ी-सी सुन्दरता प्रदान कर दी। उसने हमारे बिस्तरों को लपेट कर बक्सों, स्टूलों और दूसरी चीज़ों के साथ एक कोने में सरकाकर रख दिया और उस ढेर पर एक धोती बिछा दी और उसके ऊपर एक धारीदार दरी डाल दी, जिससे वह कोना रहस्यपूर्ण दीखने लगा था। पुरानी चटाई को झाड़कर उसने उसके फटे हुए कोने अन्दर को मोड़कर छिपा दिए। उसने गरम कॉफी के प्याले तैयार रखे। यह सब शानदार तैयारियाँ थीं, उसके लिए दर्शक मण्डली जुटाने के लिए। वे लोग, दो जने, समय पर पहुँच गए। उन्होंने दरवाज़ा खटखटाया। मैं उन्हें अन्दर ले गया। रोज़ी ने रसोई के दरवाजे पर छींट के कपड़े का एक परदा लटका दिया था और वह उसके पीछे अदृश्य हो गई थी। मैंने बाहर का दरवाजा खोलकर उन लोगों से कहा था, "ओह, आप लोग आ गए!" मानो मेरा ख्याल था कि वे लोग नहीं आएंगे। मैंने महसूस किया कि बहुत तकल्लुफ से पेश आना उचित नहीं होगा। उन्होंने मूर्खतापूर्ण ढंग से खीसें निपोर दीं, शायद यह महसूस करके कि वे ऐसे सुखद अभियान पर आए हैं, जहाँ उन्हें शायद एक सुन्दरी के दर्शन मिलेंगे।

' उन्हें चटाई पर बिठाकर मैं कुछ देर तक उनसे दुनिया की राजनीति पर बातें करता रहा। फिर मैंने कहा, "आप थोड़ा वक्त तो दे ही सकते हैं, शायद। मैं अपनी बहन से पूछ लेता हूँ कि वह खाली है या नहीं।"

' मैं परदा हटाकर रसोई में गया। रोज़ी वहाँ खड़ी थी। मैंने मुस्कराकर उसे आँख मारी। उसने भी वहीं खड़े-खड़े मुझे आँख मारी। हमें स्टेज के पीछे की इस तैयारी में आनन्द आ रहा था। हमें लगा कि जैसे हम सचमुच लोगों के सामने नृत्य-प्रदर्शन की तैयारी कर रहे हैं। रोज़ी ने आज बालों का जूड़ा बांधा था और माथे पर लाल बिन्दी लगाई थी, मुँह पर

हल्का-सा पाउडर लगाकर नीली सूती साड़ी पहनी थी–बड़ी तैयारी से सादगी का प्रभाव उत्पन्न किया था उसने। पाँच मिनट तक चुपचाप खड़े रहने के बाद, मैंने सिर हिलाकर इशारा किया और वह मेरे पीछे-पीछे कमरे में दाखिल हुई।

‘ कमेटी के मन्त्री और कोषाध्यक्ष सौन्दर्य की उस प्रतिमा को जैसे मन्त्र-मुग्ध हो देखते रह गए। मैंने रोज़ी से कहा, “ये लोग मेरे मित्र हैं। आओ बैठ जाओ...।” वह मुस्कुराई और दूर रखी एक छोटी चटाई पर सलज्ज भाव से बैठ गई। मुझे उसी क्षण पता चल गया कि उसकी मुस्कान उसकी भावी सफलता की कुंजी है। कुछ देर तक खामोशी रही, फिर मैंने बात शुरू की, “ये मेरे मित्र हैं। ये अपने कालेज यूनियन में एक ‘वैरायटी शो’ का आयोजन कर रहे हैं। ये लोग चाहते हैं कि इस आयोजन के लिए शायद तुम भी कुछ कर सको।”

‘ उसने पूछा, “वैरायटी शो? आपने और कौन-से प्रोग्राम पेश करने का आयोजन किया है?” और उसने जैसे एक ऊँचे भाव से अपनी भौंहें सिकोड़ लीं।

‘ उन्होंने जैसे माँफी माँगते हुए कहा, “कुछ फैन्सी ड्रेस के आइटम, नकलें और ऐसी ही चीज़ें होंगी।”

‘ वह बोली, “आप इन चीज़ों के साथ मेरा प्रोग्राम कैसे फिट कर सकेंगे? आप मुझे कितना समय देना चाहते हैं?” वह अपने प्रोग्राम की स्वयं निर्णायक बन गई थी।

‘ उन्होंने सकुचाते हुए कहा, “एक घंटा, डेढ़ घंटा या आप जितना वक्त चाहें।”

‘ अब रोज़ी ने उन्हें एक उपदेश दे मारा, “आप जानते हैं कि नृत्य का प्रोग्राम वैरायटी शो जैसी हल्की-फुल्की चीज़ नहीं है। इसमें गरमाई आने के लिए काफी वक्त चाहिए। नृत्य ऐसी चीज़ है कि दर्शकों के सामने ही उसे उत्तरोत्तर विकास करते जाना चाहिए।”

‘ उन्होंने उसकी भावना से पूर्ण सहमति प्रकट की। मैंने बीच में दखल देकर कहा, “इन लोगों के यहाँ आने का मकसद तुमसे मिलना था और इनकी इच्छा है कि तुम इन्हें अपने नृत्य का कोई नमूना दिखाओ। क्या तुम इन पर यह अनुग्रह कर सकती हो?”

‘ उसके मुख पर अप्रसन्नता का भाव झलक आया और उसने जैसे अस्फुट प्रतिवाद किया, कुछ हिचकिचाई, लेकिन कोई उत्तर नहीं दिया।

‘ “यह क्या हुआ? ये लोग तुम्हारे उत्तर की प्रतीक्षा कर रहे हैं। काफी व्यस्त लोग हैं।”

‘ “जी नहीं, नहीं। देवीजी को ज़बर्दस्ती मजबूर करने की ज़रूरत नहीं है। हम लोग प्रतीक्षा कर सकते हैं।”

‘ “कैसे–कैसे होगा यहाँ–साथ देनेवाले वादक भी तो नहीं हैं–वादक-मण्डली के बिना मैं कभी नहीं–” वह बोली। मैंने कहा, “यह स्टेज का प्रदर्शन नहीं है–थोड़ा-सा अपनी कला का नमूना-भर दिखाना है–जब स्टेज पर शो होगा, उस वक्त हम लोग वादक-मण्डली का प्रबन्ध भी कर लेंगे–आखिर तुम्हारा प्रोग्राम ही तो सबसे महत्त्वपूर्ण आइटम होगा–” मैनें उसको उकसाया और खुशी की बात है कि उन दोनों ने भी मेरा साथ दिया। इस पर रोज़ी ने संकोचपूर्वक राज़ी होते हुए कहा, “आप लोग अगर इतना ज़ोर देते हैं तो मैं आपका आग्रह नहीं टाल सकती। लेकिन वाद्य-वृन्द के बिना नृत्य ठीक न हो सके तो मुझे दोष मत दीजिएगा।” वह एक बार फिर परदे के पीछे चली गई और एक प्लेट पर कॉफी के प्याले

लेकर लौटी। उसने प्याले उनके सामने रख दिए। शिष्टाचारवश उन लोगों ने कहा ''कॉफी की आपने चिन्ता क्यों की?'' मैंने उन्हें पीने का आग्रह किया।

' वे लोग कॉफी पी रहे थे, जब रोज़ी ने अपना नृत्य एक गीत के साथ शुरू किया, जिसे वह धीमे स्वर में गा रही थी। मैंने हाथ से बजाकर ताल देने की कोशिश की, जैसे मैं नृत्य-कला का बड़ा जानकार उस्ताद था। वे लोग मुग्ध भाव से देखते रहे। वह अचानक रुक गई और भौहों का पसीना पोंछकर और एक गहरी सांस भरकर मुझसे बोली, ''ताल मत दो। इससे मैं गलत कर जाती हूँ।''

' ''अच्छी बात है,'' मैंने मुस्कुराते हुए कहा। मैं यह ज़ाहिर नहीं करना चाहता था कि उसने मुझे डांट दिया है। मैंने उन लोगों से फुसफुसाकर कहा, ''आप जानते हैं, यह नृत्य में ज़रा भी गलती बर्दाश्त नहीं कर सकती।'' उन्होंने सिर हिलाकर अनुमोदन किया।

' वह नृत्य समाप्त करके उसने पूछा, ''क्या और दिखाऊँ? क्या 'नृत्य-चरण' पेश करूँ?''

' ''हाँ, हाँ, ज़रूर!'' मैं राय लिए जाने पर उल्लसित होकर चिल्लाया। ''जारी रखो। वह इन्हें बेहद पसन्द आएगा।''

' नृत्य के बाद जब वे उसके इन्द्रजाली प्रभाव से होश में आए तो उनमें से एक ने कहा, ''मैं मानता हूँ कि मैंने आज तक भरतनाट्यम् कभी पसन्द नहीं किया था। लेकिन इन देवीजी का नृत्य तो अपने-आप में एक बड़ा सबक है। अब मेरी समझ में आया कि लोग क्यों भरतनाट्यम् पर जान देते हैं।'' दूसरे सज्जन ने कहा, ''मुझे तो सिर्फ इसी बात का डर है कि हमारे विद्यार्थी दर्शकों के लिए इनकी कला कहीं बहुत ऊँची न साबित हो। लेकिन इससे कुछ नहीं होता। मैं और प्रोग्राम को काटकर इन्हें ज़्यादा से ज़्यादा समय देना चाहूँगा।''

' ''दर्शकों की रुचि का संस्कार करने का लक्ष्य सामने रखकर हमें चलना चाहिए,'' मैंने कहा। हमें दर्शकों की रुचि जानकर उसके स्तर पर उतरने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। हमें श्रेष्ठतम कला पेश करके इस रुचि को ऊपर उठाना चाहिए।''

' ''मेरा ख्याल है कि इण्टरवल तक हम वैरायटी प्रोग्राम की बकवास चलाएंगे। इण्टरवल के बाद सारा प्रोग्राम इन देवी का ही रहेगा।'' मैंने रोज़ी की ओर उसका समर्थन पाने के लिए देखा और कहा, ''बेशक ये आपकी मदद करना चाहेंगी। लेकिन आपको एक पखावज बजाने वाले का तथा अन्य वादकों का प्रबन्ध करना होगा।'' और इस प्रकार मैंने रोज़ी के लिए वादकों का प्रबन्ध कर दिया, जिनकी वह आरम्भ से ही माँग करती रही थी।

9

'अचानक मेरी सरगर्मियाँ बढ़ गईं ; यूनियन के जलसे से यह शुरुआत हुई। रोज़ी फुलझड़ी की तरह चमकी। उसका नाम सार्वजनिक सम्पत्ति बन गया। अब जनता से उसका परिचय कराने की कोई ज़रूरत नहीं रह गई थी। अब इस बात की कल्पना-मात्र हास्यास्पद होने लगी। मैं इसलिए मशहूर हो गया चूंकि मैं रोज़ी के साथ आता-जाता था। वह मेरी वजह से मशहूर नहीं थी। उसकी मशहूर होने की वजह उसकी प्रतिभा थी और जनता के लिए उसकी प्रतिभा को स्वीकार करना आवश्यक हो गया था। अब मैं शान्त भाव से इस प्रसंग की चर्चा कर सकता हूँ–सिर्फ अब। उस वक्त तो मैं यह सोचकर खुशी से कुप्पा हो रहा था कि किस तरह मैंने उसे बनाया था। अब मैं सोचता हूँ कि मार्को भी हमेशा के लिए उसे दबाकर नहीं रख सकता था; कभी न कभी तो वह रस्सा तुड़ाकर अपना रास्ता तैयार कर ही लेती। मेरे वर्तमान विनीत भाव से किसी को गलतफहमी नहीं होनी चाहिए। उस वक्त मैं खुशी से फूला नहीं समाता था। एक बड़े से हॉल में जब मैं हज़ारों आंखों को उसकी तरफ देखता हुआ पाता था तो मेरे मन में यह विश्वास पक्का हो जाता था कि लोग एक-दूसरे से और अपने मन ही मन कह रहे होंगे, 'यह है वह आदमी जिसके बगैर–' और मुझे लगता था कि प्रशंसा की लहरें मेरे गिर्द टकरा रही हैं। हर शो में मैं पहली कतार में बीच के सोफे पर बैठना अपना अधिकार समझता था और लोगों को यह जतलाता था कि मैं चाहे जहाँ भी जाऊँ, वह सीट मेरे लिए निश्चित है, जब तक मैं वहाँ नहीं बैठूँगा, नलिनी नहीं नाच सकेगी, क्योंकि मेरी प्रेरणादायी उपस्थिति उसके लिए ज़रूरी थी। मैं समझदारी से अपना सर हिलाता, कई बार मैं हाथों से ताल देता, जब भी मेरी नज़रें उसकी नज़रों से टकरातीं तो मैं आत्मीयता जतलाने के लिए मुस्करा देता। कई बार मैं आंखों और उंगलियों के इशारे से उसके नाच की आलोचना करता या सुधारने का सुझाव देता। जलसे का अध्यक्ष मेरे पास बैठता और झुककर मेरे कानों में कुछ कहता तो मुझे बहुत अच्छा लगता। वे चाहते थे कि लोग उन्हें मुझसे बातें करते हुए देखें और पीछे बैठी जनता हमारे वार्तालाप के बारे में अनुमान लगाए। दरअसल बातचीत सिर्फ इतनी होती थी, "मालूम होता है कि हॉल भर गया है।" मैं हॉल के सुदूर कोने तक दृष्टि दौड़ाकर भीड़ का अन्दाज़ लगाता और जवाब देता, "हाँ, हॉल भर गया है।" फिर फौरन मुँह फेर लेता, क्योंकि शालीनता के तकाज़े के अनुसार मुझे आगे देखना चाहिए था। जब तक मैं पर्दों में से झांकते हुए आदमी को इशारा नहीं करता था, तब तक कोई शो शुरू नहीं हो सकता था। फिर पर्दा उठता था। जब तक मुझे यह तसल्ली नहीं हो जाती थी कि सब बातें दुरुस्त हैं। मैं बिजली, माइक्रोफोन के इन्तज़ामों के बारे में पूछताछ करता और इस तरह आसपास देखता मानो मैं वायु की गति, छत की मज़बूती का अनुमान लगा रहा होऊँ और सोच रहा होऊँ कि हॉल के खम्भों पर छत टिकी रह सकती है या नहीं। इन तमाम बातों से मैं एक ऐसा तनाव पैदा कर देता था

जो नलिनी के पेशे में सहायक सिद्ध होता था। इन शर्तों को पूरा करने के बाद जब नाच शुरू होता था तो संयोजकों को लगता था कि उन्होंने एक कठिन लक्ष्य की पूर्ति कर ली है। बेशक वे प्रोग्राम के लिए पेशगी रुपया देते थे, और पब्लिक टिकट खरीदकर कुर्सियों पर बैठती थी, फिर भी मैं यह जतलाता था कि मैं बहुत सख्त आदमी हूँ और नाच की इजाज़त देकर मैंने सबपर भारी एहसान किया है। जब मुझे लगता कि प्रोग्राम बहुत लम्बा हो गया है तो मैं अपनी रिस्टवाच की तरफ देखता और सर को झटका देता। नलिनी समझ जाती कि अगले डांस के बाद प्रोग्राम खत्म होना चाहिए। अगर कोई नये सुझाव रखता तो मैं हंसकर टाल देता। कई बार लोग हॉल के पीछे से कागज़ों के पुर्ज़े भेजते और कुछ डांसों की फर्माइश करते, लेकिन जब पूर्ज़ा मेरे नज़दीक आता तो मेरे माथे पर त्योरियाँ पड़ जातीं और इस तरह के पुर्ज़े भेजने में लोगों को घबराहट महसूस होने लगती। आमतौर पर वे क्षमा याचना करते, "मालूम नहीं–पिछली बेंच से किसी ने मेरे हाथ में थमा दिया–।" मैं माथे पर त्योरियाँ डालकर उदासीन भाव से उस पुर्ज़े को पढ़ने की तकलीफ गवारा करता, फिर सोफे की बांह के नीचे सरका देता। चिट कालीन पर गिरकर खो जाती। मैं इस तरह पेश आता कि इस तरह की चालाक हरकतें छोटे-मोटे लोगों के साथ कामयाब हो सकती हैं, मेरे आगे उनकी दाल नहीं गल सकती। पर्दा गिरने से एक मिनट पहले मैं सैक्रेटरी को इशारे से बुलाकर पूछता, "क्या मोटर तैयार है? मेहरबानी करके उसे दूसरे दरवाज़े पर मंगवा लीजिए, भीड़ से दूर मैं नलिनी को चुपचाप यहाँ से ले जाना चाहता हूँ।" यह झूठी बात थी क्योंकि दरअसल मैं नलिनी को भीड़ के सामने से ले जाना चाहता था, ताकि लोग आँखें फाड़-फाड़कर देख सकें। शो के बाद भी नलिनी की एक झलक पाने के लिए कुछ लोग हॉल में भटकते रहते थे। मैं उदासीन भाव से उसके आगे-आगे या पीछे-पीछे चलता। शो के बाद संयोजक उसे फूलों का हार भेंट करते, एक हार मुझे भी देते। मैं हार लेकर प्रतिवाद करता, "आपने बेकार ही इस हार पर पैसा बर्बाद किया।" फिर मैं लापरवाही से हार को बाँह पर लटका लेता या भीड़ में अत्यन्त नाटकीय अंदाज़ से नलिनी के हाथ में हार पकड़ाकर कहता, "तुम्हें सचमुच दो हार मिलने चाहिए," और वह हार का बोझ उठाती।

'घर के एकान्त में पहुँचने से पहले हम इसी दिखावटी दुनिया में रहते। घर पहुँचकर नलिनी घंटों के संयम और औपचारिकता को तिलांजलि देकर मुझे आवेश से गले लगा लेती और कहती, "मैं सात जन्मों में भी तुम्हारा कर्ज़ नहीं चुका सकती।" यह सुनकर मैं गर्व से फूल उठता और समझने लगता कि मैं सचमुच इस तारीफ के काबिल हूँ। फिर वह एक गीले तौलिये में कायदे से हारों को बाँधने लगती, ताकि वे ताज़ा बने रहें।

'जिस दिन डांस का प्रोग्राम होता वह शाम से पहले ही खाना तैयार कर लेती। हम चाहते तो रसोइया रख सकते थे, लेकिन वह कहती "दो जनों के लिए रसोइये की क्या ज़रूरत है? मुझे अपने स्त्री-सुलभ कर्त्तव्यों को भूल नहीं जाना चाहिए।" वह खाना खाते वक्त शो की बात करती रहती, किसी वाद्य या और प्रबन्ध की शिकायत करती, या बताती कि फलां वादक सुस्त था। वह पूरी तरह से 'शो' की स्मृतियों में खोई रहती। कई बार खाने के बाद भी वह कोई डांस दिखाती। फिर सोने के वक्त तक कोई न कोई किताब पढ़ती रहती। लेकिन कुछ महीने बाद ही मुझे अपना पुराना मकान छोड़ना पड़ा। सेठ ने फैसले से पहले ही कोई कानूनी नुक्ता उठाकर मेरी जायदाद कुर्क करवाने का हुक्म मंजूर करवा

लिया था। मेरे वकील ने आकर कहा, "चिन्ता न करो। इसका मतलब है, कि सेठ को मकान का पिछला टैक्स भी देना पड़ेगा। एक किस्म से हमें सेठ के पास मकान बन्धक रख देना पड़ेगा। तुम्हारी माँ के दस्तखतों की भी ज़रूरत पड़ेगी। मैं ले लूंगा। अगर तुम लोग इस मकान में रहे तो तुम्हें बराये नाम ही सही किराया देना पड़ेगा।"

' "अपने ही मकान में रहने का किराया?" मैंने पूछा, "अगर किराया ही देना है तो मैं इससे बेहतर मकान में रहना पसन्द करूंगा।" हमारी ऊपर उठती हुई सामाजिक स्थिति के लिए वह मकान छोटा था। वहाँ हम किसी मेहमान की खातिरदारी नहीं कर सकते थे। न वहाँ कोई एकान्त था, न ही फर्नीचर रखने की कोई जगह थी। मेरे पिता ने दुकानदार की हैसियत से मकान बनवाया था, विख्यात नर्तकी की देखभाल करनेवाले व्यक्ति की हैसियत से नहीं। मकान छोड़ने की बात सुनकर जब नलिनी हिचकिचाई तो मैंने पूछा, "तुम्हारे पास यहाँ अभ्यास करने के लिए कौन-सी जगह है?" लेकिन न जाने क्यों उसे इस मकान से बहुत मोह हो गया था, क्योंकि पहले-पहल उसे यहीं शरण मिली थी।

' वकील गाँव जाकर दस्तावेज़ पर मेरी माँ के दस्तखत करवा लाया। मैं यह पूछे बगैर न रह सका, "माँ पर इस खबर का क्या असर पड़ा था?" "बुरा नहीं, बुरा नहीं," मुकद्दमे की तारीखें डलवाने के माहिर वकील ने कहा, "खैर हम बुजुर्गों से यह उम्मीद नहीं रख सकते कि वे हमारी राय से सहमत हों। मुझे तुम्हारी माँ को समझाने के लिए बहुत-सी दलीलें पेश करनी पड़ी थीं। तुम्हारे मामा बड़े सख्त आदमी हैं।" चार दिन बाद मेरी माँ का खत आया। पीले कागज़ पर उसने पेन्सिल से लिखा था, "..... मैंने दस्तखत खुशी से नहीं किए, बल्कि इसलिए किए कि उसके बगैर वकील यहाँ से टलनेवाला नहीं था, और तुम्हारे मामा हाथ धोकर उसके पीछे पड़े थे। मेरी समझ में कुछ नहीं आता। मैं हर बात से तंग आ गई हूँ। जब तुम्हारे मामा बगीचे में गए तो मैंने उनसे छिपकर कागज़ों पर दस्तखत कर दिए, ताकि वकील बिना चोट खाए सही-सलामत यहाँ से लौट जाए। खैर, इन सब बातों का क्या मतलब है? तुम्हारे वकील ने कहा था कि तुम उस औरत के लिए बड़ा मकान तलाश कर रहे हो। अगर यह सच है तो मैं आकर अपने पुराने मकान में रहूँगी। जो भी हो, ज़िन्दगी के बचे-खुचे दिन मैं अपने मकान में गुजारना चाहूँगी।" माँ ने अपने क्रोध को तिलांजलि देकर मुझे लिखा था, सो अच्छा ही किया था। उसकी परेशानी को देखकर मेरा दिल पिघल गया, उसके वापस लौटने की बात पढ़कर मुझे परेशानी हुई। मैं इस बात का मर्म समझता था, लेकिन इस विचार से जूझ रहा था। भला इस टूटे-फूटे घर की किसे ज़रूरत थी? अगर माँ उस मकान में रहेगी तो मुझे सेठ को किराया देना पड़ेगा? माँ की देखभाल कौन करेगा? मैं काम में व्यस्त था। मैंने सब तरह की दलीलें देकर अपनी राय का औचित्यीकरण किया और बिना जवाब दिए माँ का खत एक तरफ डाल दिया। मैंने मकान बदल लिया और काम में व्यस्त हो गया, और भीड़भाड़ ने मेरी अन्तरात्मा को खामोश कर दिया। मुझे अफसोस होता था, लेकिन मैं कोई न कोई औचित्य ढूँढ़ लेता था। 'आखिरकार माँ को अपने भाई से प्यार है, वही माँ की देखभाल करेगा। वह यहाँ आकर बिलकुल अकेली क्यों रहना चाहती है?'

' न्यू एक्सटेन्शन का शानदार मकान हमारी स्थिति के अनुकूल था। इस दुमंज़िले मकान में बड़ा-सा सहन, बाग-बगीचा और गैरेज थे। ऊपर की मंज़िलों पर हमारे सोने के

कमरे थे और एक बड़े से हॉल में नलिनी डान्स का अभ्यास किया करती थी। एक कोने में नीले रंग का रेशमी कालीन बिछा था। बीचोंबीच संगमरमर का फर्श था।' दूसरे कोने में मैंने एक चबूतरे पर नटराज की पीतल की मूर्ति स्थापित कर दी थी। वहीं नलिनी का दफ्तर था। अब मैंने स्थायी रूप से पाँच साज़िन्दे जमा कर लिए थे, जिनमें एक बाँसुरी-वादक और एक तबलची था। कोमल से मैं एक डान्स मास्टर भी ले आया था, जो पिछले पचास बरस से परम्परागत नृत्य का अभ्यास करता आया था। गाँव के मकान से निकालकर मैं उसे मलगुड़ी ले आया था और वह सहन में बने कर्मचारियों के क्वार्टर में रह रहा था। हमारे घर में हर वक्त हर किस्म के लोग आते-जाते रहते थे। हमारे पास काफी नौकर थे, एक ड्राइवर, दो माली, गोरखा संतरी जो कमर से कटार बाँधकर फाटक पर पहरा देता था और दो रसोइये, क्योंकि मेहमानों की तादाद बढ़ गई थी। हर वक्त किस्म-किस्म के लोग सहन में से गुज़रते रहते थे। साज़िन्दे, उनके दोस्त, मुझसे वक्त लेकर मिलने वाले लोग, नौकर-चाकर, उनके दोस्त वगैरह-वगैरह। निचली मंज़िल पर मेरे सेक्रेटरी का कमरा था। वह ग्रैजुएट था और मेरा सारा पत्र-व्यवहार उसी के ज़िम्मे था।

' मेरे पास तीन या चार किस्म के लोग आते थे। कुछ को मैं बरामदे में मिलता था। इन लोगों में साज़िन्दे होते थे, जो नलिनी का साथ देने का मौका चाहते थे। इन लोगों के साथ मैं गुस्ताखी से पेश आता था। वे हमेशा मेरे साथ बातचीत करने के इच्छुक रहते थे और बाहरवाले बरामदे में खड़े रहते थे। मैं उनकी तरफ ध्यान दिए बगैर बाहर-भीतर आता-जाता रहता था। मुझे देखते ही वे अदब से खड़े हो जाते और नमस्कार करते। अगर वे मेरे करीब आ जाते तो मैं उनकी बात सुनने का उपक्रम करता और कहता, "अपना पता मेरे सेक्रेटरी के पास छोड़ दो। अगर मैं तुम्हारे लिए कुछ कर सका तो मैं सेक्रेटरी से कहकर तुम्हें बुलवा लूँगा।" अगर वे मुझे अपने सर्टिफिकेट दिखलाते तो मैं सरसरी निगाह से उन्हें देखकर कहता, "गुड, गुड। लेकिन इस वक्त मैं कुछ नहीं कर सकता। अपना नाम दफ्तर में छोड़ जाओ," यह कहकर मैं आगे चल देता। बाहरवाले बरामदे की बेंचें हर वक्त मुझसे बात करने के उत्सुक लोगों से भरी रहती थीं। मैं उनकी तरफ रत्ती-भर ध्यान न देता और वे यह अनुमान लगाते रहते कि मैं किस वक्त आकर अपनी मेज़ के सामने बैठूँगा। कई बार गुमनाम संगीतकार खासतौर पर नलिनी के लिए गीत बनाकर लाते। कभी-कभी जब मैं दफ्तर में बैठता तो उन लोगों का भीतर झाँककर मुझसे बातें करना मुझे बुरा नहीं लगता। इस तरह के लोगों को मैंने बैठने के लिए कभी कुर्सी नहीं दी थी। लेकिन अगर वे कुर्सी घसीटकर खुद-ब-खुद बैठ जाते थे तो मैं कुछ नहीं कहता था। जब मैं किसी से पीछा छुड़ाना चाहता था तो कुर्सी से उठकर भीतर चला जाता था और मेरा सेक्रेटरी उन्हें बिदा कर देता था। कई बार मैं हॉल के शीशे में से देखता था कि मुझसे मिलनेवालों की कितनी भीड़ है, फिर मैं बगल का दरवाज़ा खोलकर सीधा गैरेज में चला जाता था और वहाँ से फाटक पर पहुँच जाता था। मिलनेवाले असहाय भाव से मुँह ताकते रह जाते थे। मैं अपने को उन सबसे ज़्यादा ऊँचा समझने लगा था।

' इन प्रार्थियों के अलावा मुझसे, ऊँचे दर्जे के लोग भी काम से मिलने आते थे। उन्हें मैं हॉल में सोफे पर बैठाता था और घंटी बजाकर नौकर को कॉफी बनाने के लिए कहता था। इन अंतरंग लोगों के लिए दिन-रात कॉफी तैयार होती रहती थी। सिर्फ कॉफी का बिल ही

तीन सौ रुपये माहवार का होता था, जिसमें एक मध्यवित्त परिवार आराम से गुजारा कर सकता था। हॉल का सामान कीमती था–पीतल की ट्रेज़, हाथीदांत की छोटी-छोटी चीज़ें, बीचोंबीच नलिनी के साथ खिंचवाई गई तस्वीरें। हॉल में बैठकर चारों तरफ देखने पर मुझे आत्मसन्तोष की भावना होती थी।

' इस सारे मामले में नलिनी कहाँ थी ? नज़रों से ओझल। वह दिन का ज़्यादा हिस्सा साज़िन्दों के साथ रिहर्सल करने में लगाती थी। ऊपरी मंज़िल से पैरों और घुंघरुओं की आवाज़ें सुनाई देतीं थीं। जो भी हो, उसने जिस जीवन की कल्पना की थी, वह उसी को बसर कर रही थी। लोगों को उम्मीद रहती थी कि शायद जब नलिनी घर से बाहर निकले तो उसके दर्शन मिल जाएं। उनकी आँखें सदा भीतरी दरवाज़े पर लगी रहती थीं। मैं जानता था वे क्या खोज रहे थे। मैं सतर्क रहता था कि कोई नलिनी को न देख पाए। उस पर मेरा एकाधिपत्य था और किसी और को उससे कोई सरोकार नहीं था। अगर कोई उसके बारे में पूछने का दुस्साहस करता तो मैं कहता, "वे व्यस्त हैं।" या "उन्हें परेशान करने की कोई ज़रूरत नहीं। तुमने मुझे बात बता दी है, इतना ही काफी है।" मैं नहीं चाहता कि कोई उससे सीधे जाकर मिले। मेरे मन में यह विचार जड़ पकड़ता जा रहा था कि वह केवल मेरी सम्पत्ति थी।

' लेकिन मेरे कुछ ऐसे अन्तरंग मित्र भी थे, जिन्हें मैं ऊपर नलिनी के कमरे में ले जाता था। ये लोग गुण-ग्राही थे। मेरे लिए उन्हें अन्तरंग मित्र बनाना ज़रूरी था। इससे पहले मेरा कोई मित्र नहीं था। अब लोग मुझे अपना मित्र बनाना चाहते थे। दो जजों, ज़िले के चार प्रसिद्ध राजनीतिज्ञों (जिनके पास हमेशा दस-दस हज़ार वोटें रहती थीं), दो कपड़े की मिलों के मालिकों, एक बैंक के मालिक और म्यूनिस्पल कमेटी के एक मेम्बर के साथ मेरी इतनी बेतकल्लुफी हो गई थी कि हम मिलते वक्त एक-दूसरे की पीठ ठोंककर अभिवादन करते थे। साप्ताहिक 'सत्य' का सम्पादक भी मेरा घनिष्ठ मित्र था। इस पत्र में अक्सर नलिनी की तारीफ छपती थी। ये लोग पहले से समय निश्चित किए बगैर कभी भी मेरे हॉल में आकर कॉफी माँग सकते थे और ऊँची आवाज़ में पूछ सकते थे, "नलिनी कहाँ है? ऊपर? अच्छा तो मैं थोड़ी देर के लिए ऊपर ही जाता हूँ।" वे ऊपर जाकर उससे बातचीत कर सकते थे, कॉफी मंगवा सकते थे, जब तक जी चाहे ठहर सकते थे। वे बेतकल्लुफी से मुझे 'राज' कहते थे। मुझे उनसे सांठ-सांठ करना पसन्द था क्योंकि वे धनी और प्रभावशाली लोग थे।

' इनके अलावा कभी-कभी संगीतकार अभिनेता और दूसरे नृत्यकार भी नलिनी से मिलने आते थे और घण्टों उसके साथ गुज़ारते थे। नालिनी को ऐसे लोगों की संगति बहुत पसन्द थी, मैं अक्सर उन्हें गलीचों पर लेटे हुए, हँसते और बातचीत करते हुए देखता था–नौकर उनके लिए कॉफी और खाने-पीने का सामान ऊपर ले जाते थे। कभी-कभी मैं भी ऊपर जाकर उन लोगों से बातें करता था और मुझे महसूस होता था कि कलाकारों के दल में मैं अनधिकार प्रवेश कर रहा था। कई बार उन्हें प्रसन्न और मुक्त-हृदय देखकर मैं चिढ़ जाता था और नलिनी को इशारे से सोने के कमरे में बुला लेता था, मानों कोई महत्त्वपूर्ण बात एकान्त में करनी हो। जब वह दरवाज़ा बन्द कर देती तो मैं फुसफुसाकर पूछता, "ये लोग कितनी देर यहाँ रहेंगे?"

‘ “क्यों?”

‘ “ये लोग सारा दिन यहाँ गुज़ार चुके हैं। हो सकता है रात तक यहाँ रहें।”

‘ “खैर, मुझे इन लोगों का अपना पसंद है, यह तो उन लोगों की सहृदयता है कि वे हमें मिलने के लिए आते हैं।”

‘ “ओह! तुम तो इस तरह की बातें कर रही हो जैसे इनके अलावा हमें मिलने के लिए और कोई नहीं आता।”

‘ “ठीक है। मैं उन्हें वापस जाने के लिए कैसे कह सकती हूँ? फिर उनके साथ्ट बैठकर मुझे खुशी मिलती है।”

‘ “ज़रूर-ज़रूर, मैं तुमसे इस खुशी को छीन नहीं रहा। लेकिन याद रखो, तुम्हारे लिए आराम भी ज़रूरी है और हमें ट्रेन का सफर करना है। तुम्हें सारा सामान समेटना पड़ेगा, नाच का अभ्यास भी करना पड़ेगा। याद रखो, ट्रिची के शो के लिए तुमने नये नृत्य प्रस्तुत करने का वादा किया है।”

‘ “यह सब आसानी से हो जाएगा,” वह कहती। फिर मेरे कमरे का दरवाज़ा बन्द करके अपने मित्रों के पास लौट जाती। मैं खामोशी से कुढ़ता रहता। मैं चाहता था कि वह सुखी रहे–लकिन सिर्फ मेरे साथ ही। किस्म-किस्म के कलाकार लोग मुझे पसन्द नहीं थे। वे ज़रूरत से ज़्यादा कामकाज की बातें करते थे और सम्भव था कि नलिनी उन्हें हमारे कारोबार के सारे रहस्य बता देती। वह जहाँ भी जाती ऐसे मित्रों की मण्डली अपने आसपास ज़रूर जुटा लेती। उसने कहा, “वे भले लोग हैं। सरस्वती के वरद पुत्र हैं। मुझे उनसे बातें करना पसन्द है।”

‘ “तुम दुनिया की बातों को नहीं जानतीं–उन्हें तुमसे ईर्ष्या होगी। तुम नहीं जानतीं कि सच्चे कलाकार कभी इकट्ठे नहीं हो सकते? ये लोग तुम्हारे पास इसलिए आते हैं, क्योंकि वे तुमसे निकृष्ट हैं।”

‘ “मैं ऊँच-नीच की बातों से तंग आ गई हूँ। भला हम लोगों में कौन-से सुर्खाब के पर लगे हैं?” वह सचमुच क्रुद्ध होकर पूछती।

‘ “जानती हो, उन सौ लोगों को भी इतने शो नहीं मिलते, जितने तुम अकेली को मिलते हैं,” मैंने कहा।

‘ “सिर्फ पैसा ही तो ज़्यादा मिलता है। इस तरह की श्रेष्ठता की मेरी नज़रों में कोई कीमत नहीं है।”

‘ धीरे-धीरे हम दोनों में बहसें होने लगीं– जिन्होंने हमारे रिश्ते को दाम्पत्य का-सा रूप दे दिया। उसके मित्रों का क्षेत्र बढ़ता जा रहा था। पहली और दूसरी कोटि के कलाकार, संगीत-अध्यापक, शहर के कला-प्रेमी नलिनी से मिलने की इच्छा प्रकट करने लगे। स्कूलों की लड़कियां भी अपने समारोहों के लिए नीलिनी से सुझाव माँगने लगीं। यथासम्भव मैं ऐसे लोगों को दूर रखता, लेकिन अगर वे किसी तरह ऊपर पहुँच जाते तो मैं लाचार हो जाता था। नलिनी उन्हें घंटों अपने साथ रखती, मुश्किल से वापस जाने देती।

‘ हमें सैकड़ों मीलों से निमन्त्रण आते। हमारे संदूक हमेशा यात्रा के लिए तैयार रहते। कई बार तो हम पूरे पखवारे तक मलगुड़ी से बाहर रहते थे। हमें दक्षिण भारत के हर कोने

में जाने का मौका मिला था–कुमारी अन्तरीप से बम्बई की सीमा तक और समुद्र के किनारे से किनारे तक। मेरे पास एक नक्शा और कैलेण्डर रहता था। मैं पहले से ही सारा प्रोग्राम तय रखता था। बाहर से आनेवाले निमन्त्रणों को पढ़कर मैं उन लोगों को तारीखें बदलने का अनुरोध करता था, ताकि एक ही यात्रा में बहुत-सी जगहों पर नलिनी के प्रोग्राम हो सकें। हर बार यात्रा का प्रोग्राम बनाने में मेरी काफी शक्ति खर्च होती थी। महीने में करीब बीस दिन हम लोग बाहर रहते थे। जिन दिनों हम मलगुड़ी में रहते थे, तब एक या दो बार नज़दीक ही नाच का प्रोग्राम ज़रूर होता था–बाकी के दिनों को आराम के दिन कहा जा सकता है। यह बड़ा कष्टसाध्य प्रोग्राम था और मैं जहाँ भी जाता था, मेरा सेक्रेटरी मुझे डाक के बारे में सूचित करता रहता था और मैं उसे टेलीफोन द्वारा आदेश देता था। मेरे पास तीन महीने पहले के प्रोग्राम बुक रहते थे। एक बड़े से कैलेण्डर पर प्रोग्रामों की तारीखों को लाल स्याही में अंकित करके मैंने नलिनी के रिहर्सल वाले कमरे में टांग दिया। उसने प्रतिवाद किया, "यह बहुत बदसूरत कैलेण्डर है। इसे यहाँ से हटा दो!"

' "मैं चाहता हूं कि तुम्हें अन्दाज़ रहे कि तुम्हारा अगला प्रोग्राम कहां होने वाला है।"

' "इसकी कोई ज़रूरत नहीं। इन तरीखों को मैं किसलिए देखूँ?" उसने कैलेण्डर लपेटकर मेरे हाथ में थमा दिया और बोली, "मुझे मत दिखाओ। इतने सारे प्रोग्राम देखकर मैं डर जाती हूँ।" वह मेरे हुक्म पर ट्रेनों में सवार होती और उतर जाती थी। पता नहीं उसने कभी यह भी गौर किया था या नहीं कि हम किस शहर में हैं, और कौन-सी 'सभा' या संस्था हमारा प्रोग्राम करवा रही है। हम मद्रास में हों, मदुरै में या ऊटकमण्ड जैसी पहाड़ी जगह में हों, इससे उसे कोई फर्क नहीं पड़ता था। जहाँ रेलगाड़ी नहीं होती थी, वहाँ हमें मोटरकार लेने आती थी। लोग हमें बाहर खड़ी गाड़ी में ले जाते थे और किसी न किसी होटल या बंगले में ठहरा देते थे। हमारे साथी साज़िन्दों को भी एकसाथ किसी आरामदेह जगह पर ठहराया जाता था। मैं उन लोगों के आराम का बहुत ध्यान रखता था, ताकि उनका मूड ठीक रहे। मैं हर जगह कहता, "ये हमारे साज़िन्दे हैं। उम्मीद है कि आपने इनके माकूल इन्तज़ाम किया है।"

' "जी जनाब। हम लोगों ने दो बड़े कमरे इनके लिए रिज़र्व रखे हैं।"

' "इन्हें हमारे पास लाने के लिए एक कार भेज दीजिएगा।" हर शो से दो घण्टे पहले मैं उन्हें बुलवाकर तैयार रखता था। इन साज़िन्दों को वक्त की कोई परवाह नहीं थी। वे जहाँ जी आए सो जाते थे, खरीददारी करने लगते थे या ताश की बाज़ी लगाने बैठ जाते थे। वे कभी घड़ी की तरफ नहीं देखते थे। उन्हें काबू में रखना भी एक कला थी। उन्हें हर वक्त खुश रखना पड़ता था, वरना वे मूड या भाग्य को दोष देकर पूरी शाम तबाह कर सकते थे। मैं उन्हें अच्छी तनख्वाहें देता था और उनकी देखभाल का अभिनय भी करता था, लेकिन मैं उनसे दूर-दूर रहता था। मैं इस मामले में सावधान था कि वे लोग नलिनी के साथ बेतकल्लुफ न हो जाएँ।

' अगर शो छह बजे होता था, तो मैं नलिनी से आग्रह करता कि वह शाम के चार बजे तक आराम करे। अगर हम किसी के घर ठहरते तो वह औरतों के साथ बैठकर लगातार गप्पें हांकना पसन्द करती थी, लेकिन मैं जाकर सख्त, लेकिन स्नेहभरे अन्दाज़ में कहता, "मेरा ख्याल है कि तुम्हें कुछ देर आराम करना चाहिए। रात ट्रेन का सफर आरामदेह नहीं

था।" वह बात को अधूरी छोड़कर गेस्ट रूम में आ जाती। इस व्याघात से वह चिढ़ जाती और कहती, "तुमने आकर मुझे लोगों में से क्यों उठा दिया? क्या मैं नन्ही बच्ची हूँ?" मैं दलील देता कि उसी की भलाई के लिए मैंने ऐसा किया था। मैं जानता था कि यह अर्धसत्य था। अपने दिल में झांककर मैं देख सकता था कि मैं नहीं चाहता था कि वह दूसरों के साथ बैठकर खुश रहे। इसीलिए मैंने उसे वहाँ से उठा दिया था। मैं उसे किले में कैद रखना चाहता था।

' अगर शो के बाद ट्रेन पकड़नी होती थी तो मैं स्टेशन तक पहुँचने के लिए कार का प्रबन्ध कर लेता था। ट्रेन में मैं खाना चाँदी या स्टेनलेस स्टील के बर्तनों में मंगवाता था और हम डिब्बे के एकान्त में बैठकर खाना खाते थे। लेकिन ये क्षण संक्षिप्त होते थे, क्योंकि फिर वही चक्कर शुरू हो जाता था–किसी दूसरे स्टेशन पर उतरना, फिर से नाच का प्रोग्राम और फिर नये सफर की तैयारी। जब हम किसी मशहूर जगह पर जाते थे तो नलिनी किसी मशहूर मन्दिर, दुकान या दर्शनीय स्थान को देखने की माँग करती थी। मैं हमेशा कहता, "हाँ-हाँ। देखेंगे हम अपने प्रोग्राम के साथ उसका तालमेल बैठा सकते हैं। या नहीं।" लेकिन उसकी यह इच्छा कभी पूरी नहीं होती थी, क्योंकि हमें दूसरी जगह पहुँचने के लिए हमेशा ट्रेन पकड़नी होती थी। लगातार हम यान्त्रिक ढंग से काम करते थे। स्टेशन पर उसी तरह से लोग हमारा स्वागत करते थे, संयोजक लोग शोर मचाते थे, लोगों से मुठभेड़ें होती थीं, उन्हें चेतावनियाँ दी जाती थीं, फिर पहली कतार में बीच के सोफे पर मैं बैठता था, व्याख्यान और तारीफें और मुस्कानें मिलती थीं, शिष्ट वार्तालाप, फूल-मालाएँ और फ्लैश खींचे गए फोटोग्राफ, मुबारकबाद और जेब में चेक डालकर फिर अगली ट्रेन पकड़ने के लिए स्टेशन के लिए रवानगी। कुछ दिनों में बजाय यह कहने के कि "नलिनी के नृत्य के लिए मैं ट्रिची जा रहा हूँ," मैंने कहना शुरू किया कि "मैं रविवार को ट्रिची में शो दे रहा हूं, और सोमवार को मेरा प्रोग्राम..." और कहता, "मैं आपके यहाँ इस शर्त पर ही डान्स का प्रोग्राम दे सकता हूँ–" मैं ज़्यादा से ज़्यादा फीसें माँगता था, और देश में मुझे मनमानी फीस मिल भी जाती थी। 'शो' के लिए बातचीत करनेवालों को मैं प्रार्थियों की श्रेणी का समझकर उनसे सलूक करता था। मेरी माहवार आमदनी बहुत ज़्यादा थी। मैं ठाट-बाट और नौकरों पर बहुत ज़्यादा खर्च करता था और इन्कम टैक्स में लम्बी-चौड़ी रकम अदा करता था। फिर भी नलिनी उत्साहपूर्ण सन्तोष की बजाय समर्पित भाव से इन बातों को देखा करती थी। हमारे पुराने मकान में वह बड़ी सन्तुष्ट दिखाई देती थी, हालांकि मेरे मामाजी हर वक्त उसपर रौब जमाते रहते थे।

' नाच के बाद नलिनी को जो फूलों के हार पहनाए जाते थे, नलिनी उन्हें संभालकर रखती थी। आमतौर पर वह हार को तोड़कर उसपर पानी छिड़क देती थी और उसे सम्भालकर रख देती थी। वह हारों का ट्रेन में भी ध्यान रखती थी। उसने हार के टुकड़े को सूँघकर कहा, "मेरे लिए सब चीज़ों की अपेक्षा यही काम का हिस्सा है।" हम लोग ट्रेन में सफर कर रहे थे। मैंने उससे पूछा, "बात तुमने क्यों कही?"

' "मुझे चमेली से प्यार है।"

' "जो चेक इसके साथ आता है, उससे प्यार नहीं है?"

' "इतने पैसों का आदमी क्या करे? सारा वक्त, पूरा हफ्ता तुम चेक बटोरते रहते हो,

लेकिन वह वक्त कब आएगा जब हम इन चेकों का इस्तेमाल कर सकेंगे?"

"वाह, तुम्हारा इतना घर-बार है, बड़ी-सी कार है और न जाने क्या-क्या है–क्या इसे ज़िन्दगी का लुत्फ उठाना नहीं कहते?"

' "मैं नहीं जानती" उसने कहा और वह सोच में डूबी रही। "काश मैं भी भीड़ में घूम-फिर सकती, हॉल में बैठ सकती, और स्टेज के लिए पोशाक पहनने की बजाय, शाम यों ही गुज़ार सकती।"

' लगता था वह कोई खतरनाक किस्म की थकान महसूस कर रही थी। मैंने उसे इस विषय में अधिक न कोंचना ही उचित समझा। शायद वह चाहती थी कि उसे कम नाचना पड़े। मैंने पूछा, "कहीं तुम्हारी टाँगें तो नहीं दुख रहीं?"

' इसका अनुकूल प्रभाव पड़ा था। फौरन उसके स्वाभिमान पर चोट पहुँची और उसने कहा, "बिलकुल नहीं। मैं हर शो में लगातार कई घंटों तक नाच सकती हूँ। सिर्फ तुम मेरा नाच बन्द करना चाहते हो।"

' "हाँ, हाँ, यह सच है, वरना तुम अपने को थका डालोगी," मैंने कहा।

' "इतना ही नहीं, तुम ट्रेन भी पकड़ना चाहते हो अगर हम एक दिन छोड़कर ट्रेन पकड़ें तो न जाने क्या बिगड़ जाएगा।" मैंने उसे वाक्य खत्म नहीं करने दिया। चाटुकारी के स्वर में मैंने उसे मक्कार लड़की कहा और इस बात को मज़ाक समझकर हँसने लगा। फिर उसे प्यार से थपथपाकर मैंने यह बात ही उसके दिमाग से निकाल दी। मुझे लगा कि सोचने का यह तरीका खतरनाक है। मुझे महसूस होता था कि अगर हम ज़्यादा से ज़्यादा नहीं कमाएंगे तो यह बड़ी हास्यास्पद बात होगी। मेरा जीवन-दर्शन यह था कि जब तक चाँदनी छाई है, ज़्यादा से ज़्यादा पैसा कमा लेना चाहिए। पैसे से हमारा पेट नहीं भरता था। अगर मेरे पास कम पैसा होता तो कौन परवाह करता। फिर जिन मुस्कानों से लोग मेरा स्वागत करते थे, वे कहाँ जातीं? आजकल मैं साथवाली कुर्सी पर बैठे आदमी से कुछ कहता था तो वह आदरपूर्वक मेरा समर्थन करता था। कम पैसे में गुज़ारा करने के विचार-मात्र से ही मैं भयभीत हो उठता था। "सही वक्त पर अगर हम नहीं कमाते तो पाप करते हैं। मुसीबत के वक्त हमारी कोई मदद नहीं करेगा।" मैं सोचता था कि कुछ और पैसा आए तो किसी काम में लगा दूँगा। लेकिन ठाट-बाट और खातिरदारी में हमारा सारा पैसा चला जाता था। कई बार वह कहती, " सिर्फ हम दोनों पर दो हज़ार रुपये मासिक का खर्च! क्या इससे कम में ज़िन्दगी बसर करने का कोई तरीका नहीं है?"

' "यह बात मुझपर छोड़ो। हम दो हज़ार खर्च करते हैं क्योंकि यह हमारे लिए ज़रूरी है। हमें अपनी हैसियत के मुताबिक ही रहना पड़ेगा।" काफी सोच-विचार के बाद मैंने बैंक में उसके नाम पर हिसाब खुलवा दिया। मैं नहीं चाहता था कि मेरे लेनदार मेरा पीछा करते फिरें। मेरे मुकदमें को मुल्तवी करवानेवाला वकील अपने ढंग से केस को सम्भाल रहा था। वह कभी-कभी मेरे पास दस्तखत करवाने या पैसे लेने के लिए आता था, बाकी सारा काम मुझे तंग किए बगैर वह खुद संभालता था। नलिनी बिना देखे ही मेरे कहने पर हर चेक पर दस्तखत कर देती थी। खैर, एक बात बता देना ज़रूरी है–मैं जब कभी शहर में होता, मेरे गिर्द मित्रों की एक बड़ी मंडली जमा हो जाती थी और मैं उनके साथ करीब-

करीब चौबीसों घंटे ताश खेलता रहता था। मैंने ताश खेलने के लिए एक कमरा अलग कर लिया था, जहाँ दो नौकर हर वक्त चाय, नाश्ता या खाना तक परोसने के लिए तैनात रहते थे, और वहाँ चोरी-छिपे शराब के दौर भी चलते थे, हालांकि वहाँ मद्य-निषेध कानून लागू था–लेकिन मेरे जैसे प्रभावशाली व्यक्ति के लिए मद्य-निषेध कानून था भी नहीं। मैंने मेडिकल सर्टिफिकेट हासिल कर लिया था, जिसमें लिखा था कि स्वास्थ्य की रक्षा के लिए मेरे लिए शराब पीना निहायत ज़रूरी है। यह सच है कि मुझे शराब अच्छी नहीं लगती थी, लेकिन मैं व्हिस्की का गिलास हाथ में थामे घंटों बैठा रहता था। 'परमिट होल्डर' हमारे देश में सामाजिक दृष्टि से एक ऊँची उपाधि बन गया था, जिससे बड़े प्रभावशाली लोग मेरी ओर खिंचे चले आते थे क्योंकि शराब का परमिट पाना आसान काम नहीं था। जिनके पास परमिट नहीं था, ऐसे लोगों को शराब पिलाते वक्त मैं सड़क की ओर की खिड़की बन्द करके कानून के प्रति आदर-भाव प्रकट कर देता था। हर किस्म के लोग मुझे स्नेह से 'राज' पुकारकर मेरी पीठ थपथपाते थे। कभी-कभी तो हम दो-दो दिनों तक लगातार फ्लैश की बाज़ी जमाए खेलते रहते थे। मैंने एक बार फ्लैश खेलने के लिए दो हज़ार रुपये की चेक भुनवाई और बाकी लोगों पर भी यह पाबन्दी लगाई कि वे भी कम से कम इतनी ही रकम लेकर खेलने बैठें। हर किस्म के घनिष्ठ सम्पर्क में आने का नतीजा यह हुआ कि मुझे यह मालूम होने लगा कि पर्दे के पीछे कहाँ क्या हो रहा है, सरकार में, बाज़ार में, दिल्ली में या रेसकोर्स में और अगले सप्ताह में कौन क्या बननेवाला है। मैं आँख के इशारे-मात्र से एक क्षण में ट्रेन पर सीटें रिज़र्व करवा सकता था, जूरी के काम के लिए नियुक्त व्यक्ति को इस काम से मुक्ति दिलवा सकता था, निकाले हुए अफसर को उसकी पुरानी जगह पर फिर नियुक्त करवा सकता था। कोऑपरेटिव सोसाइटी के चुनाव में वोट पा सकता था, कमेटी में नामजदगी कर सकता था, लोगों को नौकरी दिला सकता था, बच्चों को स्कूल में दाखिल करवा सकता था, बदनाम अफसर का तबादला करवा सकता था। ये सभी महत्त्वपूर्ण सामाजिक कार्य थे–इस प्रभाव को बाज़ार के दर पर खरीदने में अच्छा-खासा फायदा था।

' इस उज्ज्वल जीवन में मैं यह बात बिलकुल भूल गया था कि मार्को अभी भी ज़िन्दा है। हम उसका नाम तक नहीं लेते थे और मैं कभी इस बात पर ध्यान नहीं देता था कि वह अभी भी धरती के किसी कोने पर मौजूद है। मैं सिर्फ एक सतर्कता बरतता था–उसके नज़दीक किसी जगह पर 'शो' नहीं देता था। मैं फिर उससे मिलने का जोखिम नहीं उठाना चाहता था। मालूम नहीं, नलिनी के दिल में क्या बात थी। मेरा ख्याल था कि उसके मन में अभी भी कटुता बाकी थी और वह नहीं चाहती थी कि कोई उसे मार्को की याद दिलाए। मेरा ख्याल है कि उसकी सारी स्मृतियाँ धुंधली पड़ गई थीं, और अब उनका कोई अस्तित्व नहीं रहा था। मेरा यह भी ख्याल था कि नलिनी नाम रखने के बाद रोज़ी अधिक सुरक्षित हो गई थी। लेकिन यह मेरी गलतफहमी थी। एक बार हम पूरा हफ्ता मलगुड़ी में ही रहे। एक दिन डाक से एक किताब आई। आमतौर पर मेरा सैक्रेटरी डाक से आनेवाले सूचीपत्रों, प्रोग्रामों, कविता-पुस्तकों आदि को देखता था। नलिनी के नाम कुछ अंग्रेज़ी और तमिल की कुछ सचित्र पत्रिकाएँ आती थीं, जिन्हें ऊपर भेज दिया जाता था। मैं सिर्फ 'शो' से सम्बन्धित पत्रों को पढ़ता था, पुस्तक और पत्रिकाओं की तरफ कभी मेरा ध्यान नहीं जाता था। मैं बहुत व्यस्त था और आजकल बैठकर किताब पढ़ने का समय मेरे पास नहीं था। मैंने

अपने सेक्रेटरी को आदेश दे रखा था कि किताबें वगैरह मेरे पास न लाई जाएँ। एक दिन वह एक पुलिन्दा लेकर आया और बोला, "जनाब, ज़रा इसे देखिए। मैंने सोचा कि आपको इसमें दिलचस्पी होगी।" उसने किताब खोलकर मेरे सामने की। मैंने उसके हाथ से किताब छीन ली। यह मार्को की किताब थी, तस्वीरों और टिप्पणियों से भरी हुई। पेन्सिल से एक जगह लिखा था, "–पृष्ठ पर देखो" मैंने देखा, मेम्पी गुफा–चित्रों के अन्तर्गत एक परिच्छेद के नीचे एक संक्षिप्त पंक्ति थी–"लेखक मलगुड़ी रेलवे स्टेशन के श्री राजू की सहायता के लिए कृतज्ञ है।" पुस्तक बम्बई से प्रकाशित हुई थी और लेखक के निर्देशानुसार मेरे पते पर भेजी गई थी। इस शानदार पुस्तक की कीमत बीस रूपये थी। उसमें बहुत-सी रंगीन तस्वीरें थीं और 'दक्षिण भारत के सांस्कृतिक इतिहास' पर एक निबन्ध था। शायद यह इस विषय का विख्यात ग्रन्थ था, लेकिन यह मेरी समझ से बाहर था। मैंने सेक्रेटरी से कहा, "ठीक है, मैं इस किताब को रखूँगा।" और मैं पन्ने पलटने लगा और सोचने लगा कि सेक्रेटरी उसे खास तौर पर किसलिए लाया था? क्या वह जानता था कि मैं कौन हूँ? या ···? मैंने इस विचार को दिल से निकाल दिया। ज़रूर वह जिल्द के नीले और सुनहरी रंग और तस्वीरों से प्रभावित हुआ होगा। उसे डर लगा होगा कि अगर उसने मेरा ध्यान इस पुस्तक की ओर न दिलाया तो शायद मैं नाराज़ हो जाऊँगा । बस इतनी-सी बात होगी। इसलिए मैंने कहा, "थैंक्यू, मैं इस किताब को पढ़ूँगा।" फिर मैं सोचने लगा कि उस किताब का क्या करूँ? क्या मैं उसे ऊपर नलिनी के पास ले जाऊँ या···? मैंने मन ही मन कहा, 'उस बेचारी को क्यों परेशान किया जाए? आखिरकार यह पाण्डित्यपूर्ण शोधग्रन्थ है–जिससे वह काफी बोर होगी।' मैंने फिर पुस्तक के पन्ने पलटे, यह देखने के लिए कि उसमें कोई खत तो नहीं रखा था। नहीं। पुस्तक बिजली के बिल की तरह निर्वैयक्तिक थी। मैंने 158 पृष्ठ खोलकर फिर वही पंक्ति पढ़ी। अपना नाम छपा हुआ देखकर मुझे बड़ा अच्छा लगा। लेकिन उसने ऐसा क्यों किया था? मैं उसके इरादों के बारे में तरह-तरह के अनुमान लगाने लगा। अपना वादा पूरा करने के लिए उसने मुझे यह पुस्तक भेजी थी या यह दिखाने के लिए कि वह इतनी आसानी से मुझे नहीं भूला? खैर। मैंने सोचा कि किताब को बन्द करके रखना ही बेहतर रहेगा। मैं किताब को अपने घर की सबसे अधिक सुरक्षित जगह पर रख आया–शराब की बोतलों की अलमारी में। ताश खेलने का कमरा साथ ही था। इस अलमारी की चाबी मैं हमेशा अपने पास रखता था। किताब वहाँ रखकर मैंने ताला लगा दिया। नलिनी उस अलमारी के नज़दीक नहीं जाती थी। मैंने कभी उस पुस्तक की चर्चा नलिनी से नहीं की। मैं मन ही मन कहने लगा, 'नलिनी' का इससे क्या सम्बन्ध है? पुस्तक मुझे भेजी गई है और लेखक ने मेरी सेवाओं के प्रति आभार प्रकट किया है।' लेकिन किताब को छिपाना लाश को छिपाने के बराबर था। अब मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि दुनिया की किसी चीज़ को न छिपाया जा सकता है न दफनाया जा सकता है। ऐसा करना छाते से सूरज को छिपाने के प्रयत्न सरीखा होगा। तीन दिन बाद, 'इलस्ट्रेटिड वीकली ऑफ बॉम्बे' के बीचवाले पृष्ठ पर मार्को की तस्वीर छपी। नलिनी हमेशा इस पत्रिका को पढ़ती थी। इसमें नवविवाहित जोड़ों की तस्वीरें, कहानियाँ और निबन्ध छपते थे, जो नलिनी को बहुत पसन्द थे। तस्वीर के साथ मार्को की किताब का रिव्यू भी था, जिसके बारे में लिखा गया था–'यह भारत के सांस्कृतिक इतिहास में एक युगान्तकारी खोज है।' मैं हॉल में बैठा हिसाब-किताब देख रहा

था। इसी वक्त कोई तेज़ी से नीचे भागता आया। मैंने देखा नलिनी के हाथ में पत्रिका थी और वह बहुत उत्तेजित थी। उसने पत्रिका मेरे सामने बढ़ाकर पूछा, "तुमने यह देखा?" मैंने आश्चर्य दिखाते हुए कहा, "बैठ जाओ। अपने दिमाग को शान्त करो।"

' "यह बड़ी महान चीज़ है। उसने ज़िन्दगी-भर इसके लिए मेहनत की है। पता नहीं पुस्तक कैसी होगी।"

' "वह पाण्डित्यपूर्ण पुस्तक है। हम लोगों की समझ में नहीं आएगी। जिन लोगों को इस विषय में रुचि है उन्हीं को यह पुस्तक मनोरंजक मालूम होगी।"

' "मैं उस पुस्तक को देखना चाहती हूँ। हम कहीं से इसे मंगवा नहीं सकते?" अचानक उसने मेरे सेक्रेटरी को बुलाया। इससे पहले उसने ऐसा काम कभी नहीं किया था। "मणि, देखो," उसने तस्वीर दिखाकर कहा, "मुझे यह किताब मंगवा दो।" मणि नज़दीक आया, पत्रिका का पैराग्राफ पढ़ने के बाद वह किसी सोच में पड़ गया। फिर उसने मेरी तरफ देखकर जवाब दिया, "ठीक है मैडम।" मैंने फौरन उससे कहा, "जल्दी से वह खत जाकर खुद पोस्ट ऑफिस में डाल आओ और लेट फी भी लगा देना।" वह चला गया। नलिनी वहीं बैठी रही। जब तक मेहमानों से मिलने के लिए उसे नीचे नहीं बुलाया जाता था, वह खुद नीचे नहीं आती थी। आज कौन-सी परेशानी उससे ये आश्चर्यजनक बातें करवा रही थी। मैं क्षण-भर के लिए सोचता रहा कि भीतर जाकर पुस्तक ले आऊँ या नहीं। लेकिन फिर वह मुझसे बहुत-सी सफाइयाँ माँगेगी। इसलिए मैंने सारे मामले को वहीं दबा दिया। वह वापस अपने कमरे में चली गई। बाद में मैंने देखा कि उसने अपने पति की तस्वीर काटकर ड्रेसिंग टेबल के शीशे से चिपका दी थी। मुझे इस बात से सदमा पहुँचा। मैं इस बात को मज़ाक समझकर टाल देना चाहता था लेकिन मुझे उपयुक्त शब्द नहीं मिल रहे थे। इसलिए मैं चुप रहा। मैं शीशे की तरफ से अपनी नज़रें दूर हटाकर गुज़र जाया करता था। आजकल हम मलगुड़ी में थे, वरना हम सफर कर रहे होते और मुमकिन था कि 'इलस्ट्रेटिड वीकली' का वह अंक हमें न मिलता। तीसरे दिन तड़के बिस्तर में लेटे-लेटे उसने सबसे पहला सवाल पूछा:

' "तुमने किताब कहाँ रखी है?"

' "तुम्हें किसने बताया?"

' "उसकी परेशानी क्यों? मैं जानती हूँ कि किताब तुम्हारे पास आई है। मैं उसे देखना चाहती हूँ।"

' "अच्छा मैं कल दिखा दूँगा।" ज़ाहिर था कि मणि इसके लिए ज़िम्मेदार था। मैंने घर में यह नियम बना लिया था कि मेरे सेक्रेटरी की नलिनी तक सीधी पहुँच न हो, लेकिन अब यह नियम टूटता जा रहा था। मैंने तय किया कि इस गलती के लिए मणि को सज़ा दूँगा। नलिनी तकिये का सहारा लेकर पत्रिका पढ़ने का उपक्रम कर रही थी। दरअसल वह झगड़ा करना चाहती थी। अचानक वह पूछ बैठी, "तुमने इस बात को मुझसे छिपाना क्यों चाहा?"

' मैं इस बात के लिए तैयार नहीं था। इसलिए मैंने कहा, "क्या हम इस मामले पर कल बातचीत नहीं कर सकते? इस वक्त मुझे नींद आ रही है।"

‘ वह झगड़े पर उतारू थी। बोली, “एक शब्द में कारण बताकर फिर तुम सो सकते हो।”

‘ “मैं नहीं जानता था कि तुम पुस्तक में इतनी दिलचस्पी लोगी।”

‘ “क्यों नहीं? आखिरकार····”

‘ “तुमने मुझे बताया था कि तुम्हें उसका काम दिलचस्प नहीं मालूम होता।”

‘ “शायद उससे तो अब भी मैं बोर हो जाऊँगी। लेकिन उसकी ज़िंदगी में होनेवाली हर चीज़ में मुझे दिलचस्पी है। मैं खुश हूँ कि अब वह मशहूर हो गया, हालांकि मैं इन बातों को कतई नहीं समझती।”

‘ “तुम्हें अचानक वहम हो गया है कि तुम्हें उसमें दिलचस्पी है। बस इतनी-सी बात है। लेकिन याद रखो, पुस्तक मुझे भेजी गई थी, तुम्हें नहीं।”

‘ “इसका मतलब यह तो नहीं कि तुम उसे मुझसे छिपाकर रखो।”

‘ “किताब मेरी है। क्या मैं उसका जो चाहूँ नहीं कर सकता? बस मुझे नींद आ रही है। अगर तुम पढ़ने की बजाय सोच रही हो तो बत्ती बुझाकर सोच सकती हो।” मालूम नहीं क्यों, मैं बिना सोचे-समझे ये बातें कह गया। बत्ती बुझ गई लेकिन वह बिस्तर पर बैठी अंधेरे में रोने लगी। मैंने क्षण-भर के लिए सोचा कि मुझे माफी माँगकर उसे तसल्ली देनी चाहिए, लेकिन मैंने ऐसा नहीं किया। कुछ दिनों से उसके मन में उदासी इकट्ठा हो रही थी। मेरे दखल दिए बगैर अगर वह मन का गुबार निकाल ले तो अच्छा ही है। मैंने करवट बदलकर सोने का बहाना किया। आधा घंटा गुज़र गया। मैंने रोशनी जलाकर देखा। वह अभी भी धीरे-धीरे रो रही थी। मैंने पूछा, “तुम्हें क्या हो गया है?”

‘ “जो भी हो···जो भी···हो वह मेरा पति है।”

‘ “बिलकुल ठीक कहती हो। लेकिन इसमें रोनेवाली तो कोई बात नहीं है। उसकी ख्याति से तुम्हें खुशी होनी चाहिए।”

‘ “हुई है,” उसने कहा।

‘ “तो फिर रोना बन्द करके सो जाओ।”

‘ “जब मैं उसकी बात करती हूँ तो तुम चिढ़ते क्यों हो?”

‘ मैं समझ गया कि अब सोने से कोई फायदा नहीं था। मुझे चुनौती मंजूर कर लेनी चाहिए। मैंने जवाब दिया, “कारण पूछती हो? तुम्हें याद नहीं उसने कब और कैसे तुम्हें छोड़ा था?”

‘ “याद है, और मेरे साथ यही होना चाहिए था। अगर कोई और पति होता तो वहीं मेरा गला घोंट देता। उसने महीने तक मेरे साथ रहना बर्दाश्त किया– मेरी करतूतों को जानते हुए भी।”

‘ “तुम एक ही घटना के बारे में दो ढंग से बात करती हो। मेरी समझ में नहीं आता, कौन-सी बात सच है।”

‘ “मैं नहीं जानती। हो सकता है मैंने उसे समझने में गलती की हो। जो भी हो। वह मुझपर मेहरबान था।”

‘ “वह तो तुम्हें छूने के लिए भी तैयार नहीं था।”

‘ “यह ताना देना ज़रूरी है?” उसने अचानक विनयपूर्वक कहा। मैं उसे समझ नहीं पाया था। पिछले कई महीनों से मैं उसके साथ खाता, सोता और रहता आया था, लेकिन मैं उसके मन को रत्ती-भर भी समझ नहीं सका था। उसकी मन:स्थिति कैसी थी, उसका दिमाग सही-सलामत था या वह पागल थी?···क्या वह झूठी थी? क्या मुझपर डोरे डालने के लिए उसने पहले अपने पति पर इतने सारे इलज़ाम लगाए थे? और अब लगता था कि वह मुझसे उकता गई थी–क्या अब वह मुझपर भी इलज़ाम लगाएगी, और मुझे बेवकूफ और अहमक बताएगी? मैं बहुत परेशान और दुखी हो गया। पति के प्रति अकस्मात् उसकी भावुकता मेरी समझ से बाहर थी। अचानक यह कौन-सी भावना उसके सर पर सवार हो गई थी? मैंने उसे सुखी बनाने के लिए भरसक कोशिशें की थीं। वह ख्याति के शिखर पर पहुँच गई थी। अब भला उसे कौन-सी चीज़ परेशान कर रही थी? क्या मैं उस चीज़ को समझकर उसका इलाज बता सकता था?

‘ बहुव्यस्तता के पेशेवर जीवन में मैं बहुत-सी चीज़ों पर अनायास अपना अधिकार समझ बैठा था। मैंने कहा, “हमें कहीं छुट्टी मनाने के लिए जाना चाहिए।”

‘ “कहाँ? उसने भावुकतारहित स्वर में पूछा।

‘ मैं भौंचक्का रह गया, “कहाँ? कहीं भी! कहीं न कहीं ···”

‘ “हम हमेशा कहीं न कहीं जाते रहते हैं। इससे क्या फर्क पड़ेगा?”

‘ “हम सिर्फ छुट्टी मनाने के लिए जाएंगे। डान्स के प्रोग्राम के बगैर।”

‘ “मेरा ख्याल है यह तब तक मुमकिन नहीं होगा जब तक मैं बीमार नहीं पड़ जाती या मेरी जांघ की हड्डी नहीं टूट जाती,” उसने कहा और वह दुष्ट ढंग से हंसने लगी। “जानते हो, कोल्हू के बैल लगातार चक्कर काटते रहते हैं?”

‘ मैं उठकर बैठ गया और बोला, “इस बार के प्रोग्रामों को खत्म करके हम लोग चलेंगे!”

‘ “तीन महीने बाद?”

‘ “हाँ, उसके बाद हम कुछ दिन आराम करेंगे।” उसे इस बात पर रत्ती-भर यकीन न हुआ। मैंने कहा, “अगर तुम्हें किसी शो का प्रोग्राम न पसन्द आए तो तुम इन्कार कर सकती हो।”

‘ “किससे?”

‘ “वाह, मुझसे और किससे।”

‘ “हाँ, अगर एडवान्स लेने से पहले तुम मुझसे ज़िक्र करोगे तब न?”

‘ मामला गम्भीर होता जा रहा था। मैंने आत्मीयता लाने के लिए उसके बिस्तर पर बैठकर उसके कंधे को झटका देते हुए पूछा, “क्या बात है? क्या तुम सुखी नहीं हो?”

‘ “नहीं मैं सुखी नहीं हूँ। तुम क्या कर लोगे?” मैंने हार मान ली थी। अब सचमुच मैं कुछ नहीं कह सकता था। “अगर तुम बताओगी कि क्या बात है तो मैं तुम्हारी मदद कर सकता हूँ। जहाँ तक मैं देख सकता हूँ, तुम्हारे जीवन में दु:ख का कोई कारण नहीं–तुम प्रसिद्ध हो गई हो, तुम्हारे पास पैसा है–आज़ादी है। तुम डान्स करना चाहती थीं, तुम्हारी

वह इच्छा भी पूरी हो गई है।"

' "इतनी पूरी हुई है कि मैं तंग आ गई हूँ," उसने टिप्पणी जोड़ी।

' "लगता है मैं उन तोतों की तरह हूँ जिन्हें पिंजरे में डालकर गाँव के मेले में घुमाया जाता है, या सरकस के बन्दर की तरह हूँ, जैसा कि मार्को कहा करता था–" मैंने सोचा कि शब्दों की बजाय हंसी ज़्यादा कारगर सिद्ध होगी। शब्दों में से और शब्द निकलते हैं, लेकिन ज़ोर के ठहाके से सुनने वाले के कान बहरे हो जोते हैं और उसमें सब चीज़ समा जाती है। मैंने जानबूझकर हंसी का दौर पैदा कर लिया। अब नलिनी ज़्यादा देर उदास नहीं रह सकती थी। उसे भी हंसी की छूत लग गई। देखते-देखते उसकी मुस्कराहट हंसी में बदल गई और उसका सारा शरीर झूमने लगा। उसके सारे सन्देह और उदासी हंसी के विस्फोट में उड़ गए। सोने के वक्त हम बहुत खुश थे। आधी रात गुज़रे दो घंटे हो गए थे।

' इस छोटी-सी गड़बड़ के बाद हमारी ज़िन्दगी फिर यांत्रिक सांचे में ढल गई। तीन दिन के बाद मैं पूरी तरह से ताश के खेल में खो गया और अब हमारी मुलाकातें बहुत कम हो गईं। जब मिलते थे तो मामूली बातचीत ही होती थी। वह आजकल खोई-खोई रहती थी, इसलिए उसके गुस्से को ज़्यादा न उकसाने का सबसे अच्छा तरीका यही था कि उससे दूर-दूर रहा जाए। दक्षिण भारत में आगामी तीन महीने संगीत और नृत्य की बहार के थे। हमारे प्रोग्राम भी बुक हो चुके थे, जिनपर मैं भारी एडवांस ले चुका था। हमें दो हज़ार मील का सफर करके फिर मलगुड़ी लौटना था। इस प्रोग्राम को पूरा करने के बाद वह आसानी से अपने मूड पर काबू पा सकती थी। फिर मैं आसानी से उसे तीन महीने के प्रोग्राम में झोंक सकता था। इस प्रोग्राम में ढील देने का मेरा कोई इरादा नहीं था। ऐसा करने से कोई लाभ नहीं होता, बल्कि ढील देना आत्महत्या के समान मूर्खतापूर्ण साबित होता। मेरा एक ही टेकनीक था कि किस तरह उसको तीन महीने तक संतुष्ट रखा जाए।

' बिना किसी विशेष घटना के हमारे प्रोग्राम पूरे हो गए थे। हम मलगुड़ी वापस लौट आए थे। मणि दो दिन के लिए बाहर गया था और मैं मेज़ पर जमा हुए डाक के ढेर को खुद छाँट रहा था। डान्स के निमंत्रणों को मैंने एक ओर रख दिया। साधारण तौर पर मैं उन निमंत्रणों को फौरन स्वीकार कर लेता था, लेकिन इस बार मुझे हिचकिचाहट हुई। मैंने महसूस किया कि जवाब देने से पहले नलिनी से बात कर लेना ठीक रहेगा। निश्चय ही वह उन्हें स्वीकार कर लेगी। लेकिन उसे लगेगा कि उससे भी राय ली गई है। मैं खतों को छाँटने लगा। अचानक एक खत मेरे हाथ में आ गया जो 'रोज़ी उर्फ नलिनी' को लिखा गया था। लिफाफे के ऊपर मद्रास के एक वकील की फर्म का पता छपा था। कुछ देर के लिए मेरी समझ में नहीं आया कि उस खत का क्या करूँ। नलिनी शायद ऊपर अपनी कोई कभी न खत्म होने वाली पत्रिका पढ़ रही थी। मुझे खत खोलने में घबराहट महसूस हो रही थी। मेरे जी में आया कि खत उसके पास ले जाऊँ। मेरे भीतर के विवेक ने कहा, 'आखिरकार यह नलिनी का मामला है। वह बालिग है और उसी को यह मामला निबटाना चाहिए।' लेकिन यह विवेक क्षणभंगुर सिद्ध हुआ। यह खत कई दिन पहले रजिस्टरी से आया था, मणि ने उसे मेज़ पर रख छोड़ा था। लिफाफे पर बड़ी-सी मुहर थी। कुछ देर के लिए मैंने खत की तरफ देखा और अपने को समझाया कि मैं मुहर से डरनेवाला नहीं हूँ। मैंने काटकर लिफाफा खोल लिया। मैं जानता था कि अगर मैं उसके खतों को खोल लूँगा तो वह बुरा

नहीं मानेगी। यह खत एक वकील ने भेजा था उसमें लिखा था, "श्रीमती जी, अपने मुवक्किल के निर्देशानुसार हम एक आवेदनपत्र आपके हस्ताक्षरों के लिए भेज रहे हैं। कृपया निशानवाली जगह पर हस्ताक्षर करके वापस भेज दें ताकि–बैंक के सेफ में से ज़ेवरात की संदूकची निकाली जा सके। इसके बाद हम अपने मुवक्किल के दस्तखत भी ले लेंगे, चूँकि आप जानती हैं कि संदूकची आप दोनों के नाम से जमा की गई है। उचित समय पर ये ज़ेवरात आपको बीमा करवा के भेजे जाएंगे।" मुझे खुशी हुई कि अब नलिनी को और ज़ेवर मिलने वाले थे। निस्सन्देह उसे बड़ी खुशी होगी। लेकिन यह संदूकची कितनी बड़ी थी? ज़ेवरों की कीमत क्या होगी? कुछ देर तक ये सवाल मेरे मन को परेशान करते रहे। मैंने खत को दुबारा पढ़ा ताकि कोई संकेत मिल जाए। लेकिन वकील ने नपे-तुले शब्दों का इस्तेमाल किया था। मैं खत लेकर नलिनी को देने के लिए जाने लगा। लेकिन ज़ीने पर पहुँचकर मैं ठिठक गया। अपने कमरे में जाकर मैं कुर्सी पर बैठकर सोचने लगा, 'मुझे इस मामले पर दोबारा गौर करना चाहिए। जल्दी किस बात की है?' मैंने अपने-आप से पूछा। जहाँ उसने संदूकची की इतने दिन प्रतीक्षा की है, वहाँ दो दिन और लग गए तो कुछ फरक नहीं पड़ेगा। खैर, उसने कभी इस बात का ज़िक्र नहीं किया। शायद उसे परवाह भी नहीं है। मैंने वह खत शराब की अलमारी में रखकर ताला लगा दिया। यह अच्छी बात थी कि मणि वहाँ नहीं था, नहीं तो शायद वह सब गुड़ गोबर कर देता। इसके बाद कुछ मेहमान आ गए। उनसे बातचीत करने के बाद शाम को मैं कुछ मित्रों से मिलने के लिए बाहर चला गया। मैंने अपने दिल को बहलाने की बहुत कोशिश की, लेकिन बार-बार उस लिफाफे का ख्याल मुझे सताने लगा। मैं देर से घर लौटा। ऊपर जाने में मुझे हिचकिचाहट हुई। ऊपर से घुंघरुओं की आवाज़ आ रही थी। मैं समझ गया कि नलिनी अभ्यास कर रही है। अपने दफ्तर में जाकर मैंने फिर शराब की अलमारी से वह खत निकाला और उसे सावधानी से खोलकर पढ़ा। मैंने साथ में नत्थी आवेदन-पत्र को भी देखा। वह छपे हुए फार्म पर था। नलिनी के बाद मार्को के हस्ताक्षर होने थे। लेकिन अब इसको भेजने में उस आदमी का क्या उद्देश्य था? अचानक नलिनी को ज़ेवरों की संदूकची लौटाने की उदारता का क्या मतलब था? क्या वह उसको फांसने के लिए जाल बिछा रहा था या फिर उसका कोई और मकसद था? उस आदमी को जितना कुछ मैंने देखा और जाना था, उससे तो यही अनुमान होता था कि उसका उद्देश्य सिर्फ अपने मामलों को सही ढंग से निबटाना-मात्र था, जिस तरह उसने अपनी पुस्तक में मेरी मदद के लिए आभार प्रकट किया था। उसमें यंत्रवत् ठंडे दिल से अपनी गलतियों को सुधारने की क्षमता थी। उसकी रसीदें हमेशा सही होती थीं। वह शायद रोज़ी के गहनों के बक्स की भी अब ज़िम्मेदारी नहीं लेना चाहता था। और यह बात ठीक भी थी। रोज़ी के गहनों के लिए यह स्थान सबसे अधिक अनुकूल था। लेकिन संदूकची को कैसे छुड़वाया जाए? अगर रोज़ी ने यह खत देख लिया तो ईश्वर ही जानता है कि वह क्या कर बैठेगी। मुझे डर था कि वह इस खत को पढ़कर शान्त नहीं रह सकेगी, बल्कि पूरी तरह अपना संतुलन खो बैठेगी। वह इसका बेतुका मतलब लगाकर कहेगी, "देखो! वह कितना नेक है!" फिर वह अपने को दुखी बना लेगी और मेरे साथ झगड़ा करने को तैयार हो जाएगी। आजकल किसी भी बात से झगड़ा हो सकता था। 'इलेस्ट्रेटिड वीकली' में उसकी तस्वीर देखते ही वह अपने से बाहर हो गई थी– पुस्तक वाली घटना के बाद मैं बहुत

सावधान हो गया था और मैंने उसे वह पुस्तक नहीं दिखाई थी।

' अगले दिन मैं इन्तज़ार करता रहा कि शायद वह पुस्तक के बारे में पूछताछ करे। लेकिन उसने ज़िक्र तक नहीं किया। मैंने सोचा कि उस प्रसंग को वहीं पर खत्म कर देना ठीक रहेगा। मैं बहुत सतर्क रहता था। उसे हर वक्त खुश रखता था और काम में लगाए रखता था, लेकिन मैं जानता था कि हम दोनों के बीच में एक किस्म का संकोच पैदा हो गया था। इसलिए मैं बड़ी सावधानी से अपने को दूर-दूर रखता था। मैं जानता था कि वक्त बीतने पर वह ठीक हो जाएगी। लेकिन मैं यह भी जानता था कि उसे वह खत दिखा देना घातक सिद्ध होगा। वह मार्को की नेकी की चर्चा करती रहेगी और कुछ नहीं करेगी या (कौन कह सकता है) वह सब कुछ छोड़ अगली ट्रेन पकड़कर मार्को के पास जा सकती है। लेकिन खत का क्या किया जाए? मैंने अपने-आप से कहा, 'उसे व्हिस्की की बोतलों के साथ पड़ा रहने दो जब तक कि मैं उसे भूल नहीं जाता।' और मैं हंस पड़ा। रात के खाने के वक्त हम पास-पास बैठे। मौसम, साधारण राजनीति, सब्ज़ियों की कीमतों वगैरह पर बातें करते रहे। मैं जानबूझकर खाने-पीने की बातों की चर्चा करता रहा। बस एक दिन और बीत जाए तो सब ठीक हो जाएगा। तीसरे दिन हम फिर सफर के लिए रवाना हो जाएंगे। सफर की सरगर्मी और शोरशराबे में हम व्यक्तिगत बातों को भूल जाएंगे। खाने के बाद वह हॉल के सोफे पर बैठकर पान चबाने लगी और मेज़ पर रखी एक पत्रिका के पन्ने उलटने के बाद ऊपर चली गई। मैंने चैन की साँस ली। हमारी ज़िन्दगी फिर पहले जैसी होती जा रही थी। कुछ देर तक मैं दफ्तर में बैठा हिसाब-किताब देखता रहा। इन्कम टैक्स का खाता पन्द्रह दिनों में भेजा जानेवाला था। मैं अपने निजी बहीखाते को देखकर सोच रहा था कि किस तरह खर्च का ब्यौरा तैयार किया जाए। इस रहस्यपूर्ण विषय पर कुछ देर सोचने के बाद मैं ऊपर चला गया। मुझे मालूम था कि मैंने उसे इतना वक्त दे दिया है कि वह या तो पत्रिका पढ़ सकती है या सो सकती है। बातचीत से बचने के लिए कुछ भी किया जा सकता था। आजकल खुद मुझे अपने रुख पर भरोसा नहीं था। मुझे डर था कि कहीं मैं खतवाली बात बक न डालूँ। तकिये पर सर रखते ही मैंने यह फार्मूला दुहराया, "मेरा ख्याल है कि मुझे नींद आ जाएगी। पढ़ने के बाद क्या तुम बत्ती बुझा दोगी?" उसने जवाब में कुछ कहा। मैं सोचने लगा, 'सन्दूकची में भला कितने गहने होंगे? क्या यह गहने मार्को ने उसे दिए थे या मायके से मिले थे? वह भी कैसी लड़की थी, उसने कभी गहनों के बारे में नहीं सोचा। शायद वे पुराने फैशन के गहने थे, इसलिए वह इनकी परवाह नहीं करती थी। खैर, उन्हें बेचकर नकदी में बदला जा सकता है और किसी इन्कम टैक्स अफसर को सपने में भी उनका ख्याल नहीं आएगा। बैंक में रखने की नौबत आई है तो गहने काफी भारी होंगे। लेकिन क्या पता, मार्को काफी झक्की आदमी है, वह सभी किस्म की विलक्षण बातें कर सकता है। वह तो बैंक में रद्दी-सा पुलिन्दा भी रख सकता है, क्योंकि ऐसा करना सही है··· सही है।' मुझे नींद आ गई।

' आधी रात के बाद मेरी नींद खुल गई। नलिनी खर्राटे ले रही थी। एक विचार मुझे परेशान कर रहा था। मैं देखना चाहता था कि वकील के खत में कहीं समय की तो कोई पाबन्दी नहीं लगाई गई थी। मान लो मेरे खत छिपाने का कोई गम्भीर परिणाम निकला तो क्या होगा? मैं फौरन नीचे जाकर उन कागज़ात को देखना चाहता था। लेकिन मेरे

जागते ही वह भी जाग उठेगी और सवाल पूछने लगेगी। फिर क्या होगा? संदूकची सेफ में पड़ी रहेगी या वकील याद दिलाने के लिए एक और खत भेजेगा, जो मेरी अनुपस्थिति में रोज़ी को मिल जाएगा? उसके बाद सवाल पूछे जाएंगे, सफाइयाँ माँगी जाएंगी–झगड़े होंगे। यह मामला इतना बड़ा सरदर्द बन जाएगा, यह मैं नहीं जानता था। मार्को का हर काम विलक्षण होता था और उसमें से बेहद पेचीदगियाँ पैदा होती थीं। ज्यों-ज्यों मैं इस बारे में सोचता गया, त्यों-त्यों यह समस्या मेरे दिमाग में भीषण रूप धारण करती गई। मुझे ऐसा लगने लगा, मानों मेरी जेब में बारूद भरा हो। पाँच बजे तक मेरी नींद उचाट रही। फिर मैंने शराब की अलमारी खोली और उन कागज़ात का मुआइना किया। मैंने कई बार उस पत्र की एक-एक पंक्ति पढ़ी। वकीलों ने लिखा था, "लौटती डाक से वापस कीजिए।" मुझे यह आदेश अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मालूम होने लगा। मैं लिफाफे को दफ्तर के डेस्क पर ले गया और एक कागज़ उठाकर मैंने रोज़ी के दस्तखत बनाने का अभ्यास किया। हर रोज़ मैं उससे इतने ज़्यादा चैकों और रसीदों पर दस्तखत करवाता कि उसके दस्तखत मेरे लिए नितान्त परिचित हो गए थे। फिर मैंने आवेदन-पत्र को खोलकर निशानवाली रेखा पर लिखा 'रोज़ी, नलिनी' और उसे वकील द्वारा भेजे गए एक लिफाफे में बन्द करके मुहर लगा दी। सुबह साढ़े सात बजे, जब हमारा ब्रान्च पोस्ट ऑफिस खुला तो मैं सबसे पहले खिड़की के आगे खड़ा था। पोस्ट मास्टर ने पूछा, "इतनी जल्दी! आप खुद आए हैं।"

' "मेरा सेक्रेटरी बीमार है। मैं सुबह सैर करने इधर आया था। मेहरबानी करके इसकी रजिस्ट्री कर लीजिए," मैंने कहा। इस डर से कि कहीं गैरेज का दरवाज़ा खुलने से नलिनी जाग न जाए, मैं पैदल ही चला आया था। गहनों की संदूकची कब और कैसे आएगी, यह मुझे ठीक से मालूम नहीं था। मैं रोज़ पूछता, "डाक में कोई पार्सल आया है, मणि?" यह पूछना एक आदत-सी बन गई थी। मेरा ख्याल था कि अगले दो दिनों में पार्सल आ जाएगा। लेकिन अभी उसके कोई आसार नहीं थे। हमें चार दिन के लिए शहर से बाहर जाना पड़ा। जाने से पहले मैंने मणि से कहा, "हो सकता है कोई बीमाशुदा पार्सल आए। डाकिये से कहना कि मंगलवार तक वह पार्सल अपने पास ही रखे। मैं लौटकर ले लूँगा। डाकखानेवाले ऐसी चीज़ें जमा रखते हैं न?" "जी जनाब। लेकिन रजिस्टर्ड पार्सल तो मैं भी दस्तखत करके छुड़वा सकता हूँ।"

' "नहीं, नहीं। यह बीमाशुदा पार्सल है और इस पर हम दोनों में से एक के दस्तखत होंगे। पोस्टमैन से मंगलवार को आने को कहना।"

' "ठीक है जनाब," मणि ने कहा और मैंने वहीं चर्चा खत्म कर दी, वरना वह बात आगे बढ़ाता।

' हम लोग मंगलवार को वापस आ गए थे। ज्योंही रोज़ी ऊपर चली गई, मैंने मणि से पूछा, "क्या पार्सल आया था?"'

' "नहीं जनाब। मैं डाकिये का इन्तज़ार करता रहा था। कोई पार्सल नहीं आया।"

' "क्या तुमने डाकिया को बताया था कि हमारा बीमाशुदा पार्सल आनेवाला है?"

' "जी जनाब, लेकिन हमारे नाम कोई पार्सल नहीं था।"

' "अजब बात है। वकील ने 'लौटती डाक' से लिखा था। मालूम होता है उन्हें सिर्फ

दस्तखतों की ज़रूरत थी। शायद मार्को खुद गहनों की संदूकची हथियाना चाहता था, इसलिए उसने यह प्रपंच रचा था। लेकिन वकील का खत मेरे पास था, मैं उन्हें सीधा कर सकता था। उनकी कोई चाल कामयाब नहीं हो सकती थी। मैंने शराब की अलमारी में से फिर खत निकालकर पढ़ा। उन्होंने साफ शब्दों में वादा किया था, "हम बीमाशुदा पार्सल भेजेंगे।" अगर वकील के खत का कोई मतलब नहीं होता तो फिर किसके खत का मतलब होता है? मैं कुछ सकपका गया लेकिन मैंने अपने-आप को तसल्ली दी कि आखिरकार खत आएगा ही–बैंकों और वकीलों से आप जल्दबाज़ी नहीं करवा सकते। उनके काम करने के अपने ढंग, अपनी रफ्तार होती है। इन्हीं बुद्धू देर करनेवालों की वजह से ही तो देश का सर्वनाश हो रहा है। मैंने खत को वहीं रखकर ताला लगा दिया। मैं चाहता था कि हर बार मुझे खत पढ़ने के लिए शराब की अलमारी के पास न जाना पड़े। नौकरों को अलमारी का पता था। वे सोचते होंगे कि मैं हर कुछ मिनटों के बाद व्हिस्की के घूँट पीने जाता हूँ। डेस्क के भीतर खत रखना ठीक रहेगा, लेकिन मुझे शक हो गया था कि शायद मणि उस खत को देख लेगा। अगर उसने मुझे बार-बार इस खत को पढ़ते देख लिया तो ज़रूर उस खत को पढ़ना चाहेगा और कोई सवाल पूछने का बहाना करके मेरे पीछे आ खड़ा होगा और चुपके से खत पढ़ लेगा। वह कितना मक्कार था। कई महीनों से वह मेरे यहाँ काम कर रहा था। अभी तक मैंने उसमें कोई दोष नहीं देखा था। लेकिन अब वह और बाकी सब लोग भी मुझे शैतान, मक्कार और दुष्ट मालूम होते थे। उस रोज़ शाम को साठ मील दूर कालीपेट नामक एक छोटे शहर में हमारा प्रोग्राम था। संयोजकों ने साज़िन्दों के लिए एक वैन, तथा मेरे और नलिनी के लिए एक प्लाईमाउथ गाड़ी भेजी थी, ताकि हम शो के बाद उसी रात को घर लौट आएँ । यह शो किसी मैटर्निटी होम के लिए कोष इकट्ठा करने की खातिर आयोजित हुआ था। उन लोगों ने सत्तर हज़ार रुपये इकट्ठे कर लिए थे। ढाई सौ रुपये तक की टिकटें भी थीं। अफसरों ने व्यापारियों और दुकानदारों को टिकटें खरीदने के लिए कहा था। व्यापारियों ने इस शर्त पर टिकटें ली थीं कि उन्हें पहली कतार में सबसे नज़दीक की सीटें मिलेंगी। वे नर्तकी के करीब बैठना चाहते थे, ताकि नर्तकी उन्हें देख सके। उनका ख्याल था कि नाचते वक्त नलिनी उनकी तरफ देखेगी और बाद में पूछेगी, 'पहली कतार में वे बड़े-बड़े आदमी कौन थे?' उन बेचारों को क्या मालूम था कि नलिनी अपने दर्शकों को किस दृष्टि से देखती थी। वह अक्सर कहा करती थी, "मेरी नज़रों में तो वे लकड़ी के ठूँठों की तरह है। जब मैं नाचती हूँ तो किसी के चेहरे की तरफ नहीं देखती, हॉल में मुझे बस एक अंधेरा-सा कुआँ दिखाई देता है।"

' अफसरों की दिलचस्पी की वजह से इस समारोह को बड़े पैमाने पर आयोजित किया गया था। अफसरों ने इसलिए दिलचस्पी ली थी क्योंकि मुख्य संयोजक प्रान्तीय मंत्रिमण्डल का सदस्य था। उसकी महत्त्वाकाँक्षा थी कि इस इलाके में एक बहुत शानदार मैटर्निटी होम खोला जाए। इन परिस्थितियों को देखते हुए मैंने खर्च के लिए अपनी माँग घटाकर एक हज़ार रुपये कर दी थी, जिसका मतलब था कि हमें इन्कम टैक्स से मुक्ति मिल सकेगी। फिर सामाजिक कार्यों में चन्दा देना भी मुझे पसन्द था। हमें भी अच्छी-खासी आमदनी होनेवाली थी, लेकिन नलिनी के लिए कोई फर्क नहीं था, फर्क सिर्फ इतना था कि हम ट्रेन की बजाय कार से जा रहे थे। उसे इस बात की खुशी थी कि हम उसी रात को

वापस लौटनेवाले थे।

‘ समारोह के लिए बाँसों और नारियल की चटाइयों से एक विशाल पन्डाल बनाया गया, उसे भड़कीले कपड़ों, झाड़ियों, फूलों और रंगीन रोशनियों से सजाया गया था। रंगमंच का डिज़ाइन इतना सुन्दर था कि नलिनी ने, जो सिर्फ फूलों के हारों की ओर ध्यान देती थी, कहा, “कितनी खूबसूरत जगह है। यहाँ नाचकर मुझे बड़ी खुशी होगी।” पन्डाल में करीब एक हज़ार आदमी बैठे थे।

‘ हमेशा की तरह मेरे संकेत पर नलिनी ने अपना प्रोग्राम गणेशपूजा शुरू किया। वह हाथ में पीतल का दिया लेकर स्टेज पर आई।

‘ दो घंटे बीत चुके थे। नलिनी पाँचवाँ डान्स सर्प-नृत्य कर रही थी। आज वह असाधारण ढंग से नाच रही थी। मुझे इस डान्स में हमेशा से दिलचस्पी थी। वाद्य बजते ही सर्प-गीत शुरू हो गया और नलिनी स्टेज पर आई। उसने धीरे-धीरे अपनी उँगलियों को पंखे की तरह फैला लिया। उसकी गोरी हथेलियों पर स्पॉट लाइट डाली जा रही थी। उसके हाथ साँप के फन की तरह दिखाई दे रहे थे। उसके सर का मुकुट चमचमा रहा था। रोशनियों का रंग बदलने लगा, संगीत के स्वर मध्यम पड़ने लगे, वह धीरे-धीरे फर्श पर झुकने लगी। अंतरा में साँप को नाचने के लिए कहा गया था। यह साँप शिवजी की जटाओं, पार्वती की कलाई से लिपटा था–देवधाम कैलाश में। इस गीत में सर्प के रहस्यपूर्ण गुणों की स्तुति की गई थी। लय में एक जादू था। यह नलिनी का सबसे सुन्दर नृत्य था। उसका सारा शरीर किसलय के साथ कम्पित हो रहा था। इस गीत ने सर्प को छिपकर रहनेवाले, रेंगनेवाले जीव की कोटि से उठाकर एक अलौकिक जीव और देवताओं का आभूषण बना दिया था। यह डान्स पैंतालीस मिनट में खत्म हो गया। दर्शक मुग्ध भाव से देखते रहे।···इस डान्स ने मेरा दिल मोह लिया था यह डान्स नलिनी कभी-कभी ही किया करती थी। वह हमेशा कहती थी कि इस डान्स के लिए खास किस्म के मूड की ज़रूरत होती है। वह मज़ाक में कहती थी कि इतने ज़्यादा हिलने-डुलने से उसका शरीर थकान से चूर हो जाता था और वह कई दिनों तक सीधी खड़ी नहीं हो सकती थी। मुझे लगा जैसे मैंने ज़िन्दगी में वह डान्स पहली बार देखा हो। मुझे अपनी माँ के शब्द याद आए जो उसने पहले दिन नलिनी को देखकर कहे थे, “इस संपेरन से सावधान रहा।” माँ के विचार से मैं उदास हो गया। वह यह डान्स देखती तो कितनी खुश होती! रोज़ी को यह चमकदार पोशाक और मुकुट पहने देखकर वह क्या कहती! मुझे अफसोस हुआ कि मेरे और मेरी माँ के बीच दरार पड़ गई। वह कभी-कभी मुझे पोस्टकार्ड भेजती थी और मैं भी कभी-कभी उसे छोटी-मोटी रकम भेज दिया करता था और साथ में दो पंक्तियां लिख भेजता था कि मैं खैरियत से हूं। माँ मुझसे पूछती थी कि मैं कब अपना घर उसे लौटाऊंगा–उसके लिए बहुत बड़ी रकम की ज़रूरत थी और मैंने अपने आप से कहा कि फुर्सत मिलते ही मैं उस तरफ ध्यान दूँगा। खैर, जल्दी किस बात की थी? माँ गाँव में काफी खुश थी। उसका भाई उसकी अच्छी तरह देखभाल करता था। न जाने क्यों माँ ने रोज़ी के साथ जो बर्ताव किया था उसके लिए मैं उसे माफ नहीं कर सकता था। माँ के साथ मेरे अच्छे सम्बन्ध थे, लेकिन हम एक-दूसरे से दूर रहते थे–यही सबसे अच्छा इन्तज़ाम था। नलिनी को देखते हुए मुझे अपनी माँ का ध्यान आ रहा था। इसी वक्त संयोजकों में से एक आदमी धड़धड़ाता हुआ मेरे पास आया और कहने लगा,

“जनाब, आपको बाहर बुलाया गया है।”

‘ “कौन बुला रहा है?”

‘ “ज़िले का पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट।”

‘ “उसे कह दो कि इस डान्स के बाद मैं बाहर आऊँगा।” वह चला गया। पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट! उसके साथ तो मैं ताश की बाज़ियाँ लगाता। इस वक्त उसे कौन-सा काम पड़ गया था? सभी अफसर पन्डाल में मौजूद थे (मिनिस्टर के लिए सोफा अभी भी खाली पड़ा था) भीड़ और ट्रैफिक पर काबू पाने के लिए अतिरिक्त पुलिस बुलाई गई थी। इस डान्स के बाद जब पर्दा नीचे गिरा तो तुमुल करतलध्वनि हुई और मैं बाहर आ गया। पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट बाहर खड़ा था। उसने वर्दी की बजाय सादे कपड़े पहन रखे थे। मैंने कहा, “हलो! मुझे नहीं पता था कि तुम भी यहाँ आ रहे हो, वरना तुम मेरे साथ कार में आ सकते थे।” बहुत-से लोग हमें देख रहे थे, इसलिए वह मेरी आस्तीन पकड़कर मुझे एक तरफ ले गया। हम बाहर एक लैम्प के नीचे एकान्त में चले गए। वहाँ उसने फुसफुसाकर कहा, “मुझे सख्त अफसोस है, लेकिन मेरे पास तुम्हारी गिरफ्तारी का वारंट है। यह हैडक्वार्टर से जारी हुआ है।” मैं संकोच से मुस्कराया, अभी भी मुझे उसपर विश्वास नहीं हो रहा था। मेरा खयाल था कि वह मुझसे मज़ाक कर रहा था। उसने एक कागज़ निकालकर दिखाया। हाँ, उसकी बात सच थी। मार्को की शिकयत पर जाली दस्तखत बनाने के इलज़ाम में मेरे नाम वारण्ट जारी किया गया था। मैं किसी सोच में पड़ा था। सुपरिण्टेण्डेण्ट ने पूछा, “क्या हाल ही में तुमने उस महिला की तरफ से किसी कागज़ पर दस्तखत किए थे?”

‘ “हाँ वह व्यस्त थी। लेकिन आप उसे जाली दस्तखत कैसे कह सकते हैं?”

‘ “तुमने ‘फॉर’ लिखा था या सीधे ही दस्तखत कर दिए थे?” उसने सवालों की बौछार शुरू कर दी। “यह संगीन इलज़ाम है। उम्मीद है कि तुम अपनी जान छुड़वा लोगे, लेकिन फिलहाल तो मुझे तुमको हिरासत में लेना पड़ेगा।” मुझे हालात की संजीदगी का एहसास हुआ और मैंने फुसफुसाकर कहा, “मेहरबानी करके इस वक्त कोई तमाशा नहीं होना चाहिए। शो के बाद घर लौटने तक आप रुकें।”

‘ “मुझे तुम्हारे साथ कार में चलना पड़ेगा। वारण्ट की तामील होने के बाद तुम ज़मानत का इन्तज़ाम कर सकते हो, इससे तुमको छूट मिल जाएगी। लेकिन उससे पहले तुमको मेरे साथ मैजिस्ट्रेट के पास चलना होगा। वही ज़मानत पर तुमको छोड़ सकता है। मेरे पास कोई अख्तियार नहीं है।”

‘ मैं हॉल में जाकर सोफे पर बैठ गया। वे लोग मेरे लिए हार लाए। किसी ने उठकर नर्तकी और मिस्टर राजू को धन्यवाद दिया, जिनकी मदद से सत्तर हज़ार से ऊपर चन्दा इकट्ठा हो गया था। वक्ता भारतीय नृत्यकला, कला में उसके स्थान, दर्शन और उद्देश्य के बारे में लंबी-चौड़ी बातें बखान रहा था। उसका भाषण चलता रहा। वह स्थानीय हाई स्कूल की प्रबंध कमेटी का सम्मानित चेयरमैन या ऐसे ही किसी ओहदे का आदमी था। उसके भाषण के बाद खूब तालियाँ बजीं। उसके बाद और भाषण भी हुए। मैं अप्रसन्न बैठा था और मुझे कोई बात सुनाई नहीं दे रही थी। न ही मुझे उन लोगों के शब्दों में कोई दिलचस्पी थी। भाषण लंबा था या छोटा, इसकी भी मुझे कोई परवाह नहीं थी। प्रोग्राम

खत्म होने पर मैं नलिनी के ड्रेसिंग रूम में गया। वह कपड़े बदल रही थी। कमरे के आसपास बहुत-सी लड़कियाँ खड़ी थीं। उनमें कुछ तमाशबीन थीं, कुछ नलिनी के दस्तखत चाहती थीं। मैंने नलिनी से कहा, "हमें जल्दी चलना होगा।" फिर मैं अपने चेहरे को संयत बनाकर बरामदे में गया, जहाँ सुपरिण्टेण्डेण्ट खड़ा था। मैंने चेहरे पर लापरवाही और उल्लास लाने की कोशिश की। पहली कतार में बैठनेवाले लोगों ने बारीकी से नलिनी के नृत्य की प्रशंसा की। "वह सब कलाकारों से श्रेष्ठ है," किसी ने कहा। "मैं पिछले पचास साल से नर्तकियों को देखता आ रहा हूँ। मैं इस किस्म का आदमी हूँ जो भूखा रहकर भी डान्स देखने के लिए बीस मील पैदल चलता है। लेकिन इससे पहले मैंने कभी···" वगैरह-वगैरह। "जानते हैं यह प्रसूति-गृह अपने ढंग का पहला अस्पताल होगा। एक हिस्से का नाम हमें ज़रूर मिस नलिनी के नाम पर रखना चाहिए। उम्मीद है आप फिर आएंगे। हम आप दोनों को उद्घाटन समारोह पर बुलाना चाहेंगे। क्या आप हमें नलिनीजी की एक तस्वीर दे सकते हैं?····· हम उसे बड़े आकार में बनवाकर हॉल में लटकाना चाहेंगे। ····इससे दूसरे लोगों को भी प्रेरणा मिलेगी और कौन जानता है कि इसी इमारत में कोई ऐसी प्रतिभाशाली बालिका पैदा हो जो आपकी विख्यात पत्नी के चरण-चिह्नों पर चलकर महान कलाकार बन सके।"

' "मुझे उनकी बातों में कोई रुचि नहीं थी। जब तक नलिनी बाहर नहीं आई तब तक मैं सर हिलाकर 'हाँ-हाँ' करता रहा। मैं जानता था कि नलिनी को नज़दीक से देखने के लिए और उससे एकाध बात करने की खातिर ही लोगों ने मुझे घेरा था और वे मुझसे बातें कर रहे थे। हमेशा की तरह नलिनी अपना हार हाथ में लेकर आई थी। मैंने उसे अपना हार भी दे दिया। पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट बेतक्कलुफी से प्लाईमाउथ गाड़ी की तरफ बढ़ा। भीड़ मक्खियों की तरह हमारे आसपास जमा होने लगी थी, ड्राइवर ने दरवाज़ा खोला। मैंने अधीर स्वर में नलिनी से कहा, "भीतर बैठो! भीतर बैठो!" फिर मैं उसकी बगल में बैठ गया। एक पेड़ से लटकती हुई गैस की रोशनी में नलिनी के चेहरे का एक हिस्सा चमक रहा था। हवा में धूल की गहरी परत जमी थी, जिसे भीड़ मथ रही थी। सारी सवारियाँ, कारें, बैलगाड़ियाँ और इक्के भोंपू बजाते हुए–एक साथ चल पड़े थे। पहियों की चर्र-मर्र सुनाई दे रही थी। कुछ दूरी पर कुछ पुलिस के सिपाही खड़े थे। जब हमारी कार चलने लगी तो उन्होंने पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट को सैल्यूट किया। वह ड्राइवर के साथ अगली सीट पर बैठा था। मैंने नलिनी से कहा, "हमारा दोस्त हमारे साथ वापस शहर चल रहा है।" करीब दो घंटे का रास्ता था। थोड़ी देर तक वह 'शो' के बारे में बातें करती रही। मैंने उसके डान्स के बारे में अपनी राय दी और बताया कि उसके सर्प-नृत्य के बारे में लोग क्या कह रहे थे। उसने कहा, "तुम इस डान्स से कभी नहीं उकताओगे।" फिर सब खामोश होकर सुस्ताने लगे और घर पहुँचने का इन्तज़ार करने लगे। हमारी कार देहाती सड़क पर टुनटुनाती घंटियोंवाले बैलों की लंबी कतारों को पीछे छोड़कर आगे बढ़ती जा रही थी। मैं फूहड़ ढंग से उसके कानों में फुसफसाया, "इन घंटियों की आवाज़ तुम्हारे घुँघरुओं जैसी है।"

' ज्योंही हम घर पहुँचे, नलिनी ने मुस्कराकर पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट से विदा ली, 'गुडनाइट' कहकर वह घर में गायब हो गई। सुपरिण्टेण्डेण्ट ने मुझसे कहा, "चलो अब जीप में चलें," जीप फाटक के बाहर खड़ी थी। मैंने प्लाईमाउथ गाड़ी लौटा दी और कहा, "मैं कहता हूँ, मेहरबानी करके मुझे थोड़ा-सा वक्त दो। मैं नलिनी को बताना चाहता हूँ।"

‘ “ठीक है। देर मत करो। हमें आफत मोल नहीं लेनी चाहिए।”

‘ मैं ज़ीना चढ़कर ऊपर गया। वह मेरे पीछे-पीछे आया। वह बाहर खड़ा रहा। मैं नलिनी के कमरे में चला गया। उसने इस तरह मेरी बात सुनी जैसे मैं किसी पत्थर के खम्भे से बात कर रहा हूं। अभी भी उसका विस्मित, भ्रमित चेहरा मेरी आंखों के सामने आ जाता है। वह स्थिति को समझने की कोशिश कर रही थी। मेरा ख्याल था कि वह पछाड़ खाकर गिर जाएगी, क्योंकि वह छोटी-छोटी बातों पर परेशान हो जाती थी। लेकिन इस बात का जैसे उस पर कोई भी असर नहीं पड़ा। उसने सिर्फ इतना कहा, “मैं जानती थी कि तुम सही काम नहीं कर रहे। यह कर्म है। हम क्या कर सकते हैं?” फिर ज़ीने पर आकर उसने पुलिस अफसर से कहा, “जनाब, हम लोग क्या करें? क्या बचने का कोई रास्ता नहीं है?”

‘ “श्रीमतीजी, इस वक्त तो मेरे अख्तियार में कुछ नहीं है। इस वारण्ट पर ज़मानत नहीं मिल सकती। लेकिन शायद कल आप आवेदन-पत्र दे सकती हैं कि इस मामले पर फिर से गौर किया जाए। लेकिन कल तक कुछ नहीं हो सकता है जब तक मजिस्ट्रेट के सामने आवेदन-पत्र नहीं पहुँचता।” अब वह मेरा दोस्त नहीं, बल्कि भयंकर रूप से कानून बघारनेवाला आदमी था।

10

'मुझे हवालात में साधारण अपराधियों के साथ दो दिन काटने पड़े। सेण्ट्रल पुलिस स्टेशन के भीतर दाखिल होते ही पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट का मैत्री भाव समाप्त हो गया। वह मुझे हवलदार को सौंपकर चलता बना। रोज़ी मुझे हवालात में मिलने आई और रोती रही। मैं कोठरी के एक कोने में आँखें चुराकर बैठा रहा। कुछ देर के बाद मैंने अपने को संयत करके कहा कि वह जाकर हमारे बैंकर से मिले। उसने सिर्फ इतना ही पूछा, "ओह! हमारे पास इतना पैसा हुआ करता था, सारा पैसा कहाँ गया?"

' तीन दिन के बाद मैं घर चला गया, लेकिन पुरानी नॉर्मल ज़िन्दगी अब नहीं रही थी। मैंने देखा कि घर में मकबरे जैसी शान्ति छा गई है। मिलनेवाले भी बहुत कम आते हैं। मणि यन्त्रवत् सर झुकाए अपने कमरे में काम करता रहता था। उसके लिए खास काम नहीं था। अब बहुत कम खत आते थे। घर कब्र की तरह खामोश रहता था। ऊपर नलिनी के पैर भी खामोश रहते थे। उसे भी मिलने के लिए कोई नहीं आता था। उसने किसी तरह से ज़मानत के लिए दस हज़ार रुपये जुटाए थे। अगर मैं साधारण लोगों की तरह अक्लमन्दी दिखाता तो इस रकम का आसानी से प्रबन्ध हो सकता था। लेकिन मैंने बची-खुची रकम शेयर और सार्टिफिकेट खरीदने में लगा दी थी, जिनपर बैंक एडवान्स नहीं देते थे। बाकी पैसा मैंने टीमटाम में लगा दिया था। आगामी प्रोग्रामों का लिया एडवान्स भी इसीमें खर्च हो गया था। मैंने रोज़ी को सुझाव दिया, "तुम अगले तीन महीने अपने प्रोग्राम पूरे कर लो, ताकि हमें बचे-खुचे पैसे मिल जाएँ।" मैंने उसे रात के खाने के वक्त पकड़ा था, क्योंकि आजकल मैं सारा वक्त नीचे ही गुज़ारता था और उसे कुछ नहीं कहता था। रात को मैं हॉल के सोफे पर सो जाता था। रोज़ी ने कोई जवाब न दिया। मैंने फिर अपना सवाल दुहराया। जब रसोइया कोई चीज़ उठाने भीतर गया तो उसने कहा, "क्या रसोइये के सामने इस बात की चर्चा करनी ज़रूरी है?" मैंने विनीत भाव से डाँट खा ली।

' अब घर में मेरी पुरानी हैसियत नहीं रह गई थी। जब से उसने मुझे हवालात से छुड़ाया था तब से वह घर की मालकिन बन गई थी। इस विचार-मात्र से मैं मन ही मन कुढ़ने लगा था। जब उसका सदमा कुछ दूर हुआ तो वह कठोर हो गई। मेरे साथ अब वह इस तरह बात करती, मानों उसने किसी लुच्चे, आवारागर्द का उद्धार किया हो। यह एक मजबूरी थी। उसे मेरी मदद करने के लिए पाई-पाई बटोरनी पड़ी थी और वह कठोर बन गई थी। मैं चुपचाप खाना खाता रहा। खाने के बाद वह थोड़ी देर आकर हॉल में बैठी, सोफे पर एक थाली में पान रखे थे। मैं थाली सरकाकर उसके पास बैठ गया। उसके होंठ पान से लाल थे और चेहरे पर भी गर्मी आ गई थी। रौब से मेरी तरफ देखकर उसने पूछा, "अब क्या बात है?" मेरे कुछ कहने से पहले ही वह बोली, "याद रखो, रसोइये के सामने कुछ मत कहा करो। नौकर अब बहुत ज़्यादा बातें करने लगे हैं। पहली तारीख को मैं एक नौकर

को जवाब दे रही हूँ।"

' "रुको, रुको, जल्दी मत मचाओ," मैंने बात शुरू की।

' "किसलिए रुकूँ?" उसकी आँखों में आँसू आ गए। उसने अपनी नाक साफ की। दर्शक बने रहने के सिवा मेरे आगे कोई चारा नहीं था। अब वह मालकिन बन गई थी, अगर उसका जी रोने को चाहता था तो इसमें किसी का कोई दखल नहीं था। अगर वह ज़रूरत समझती तो उसमें आत्मसंयम की शक्ति भी थी। साँत्वना की ज़रूरत तो मुझे थी। अचानक आत्मकरुणा से मैं विभोर हो उठा। वह क्यों रो रही है? उसे तो जेल में कोई नहीं डाल रहा। उसे किसी नृत्य के लिए दर्शक और ख्याति जुटाने की खातिर इधर-उधर नहीं भागना पड़ा। मार्को जैसे अर्धविस्मृत आदमी ने शैतानी से उसे तो जाल में नहीं फँसाया? लगता था उसे सिर्फ गुफाओं की तस्वीरों में रुचि है, दरअसल वह बड़ा ज़हरीला और प्रतिहिंसक व्यक्ति था–अपने शिकार की टोह में बैठे साँप की तरह। अब मैं देखता हूँ कि मेरे ये विचार गलत थे। पर उस वक्त मैं क्या करता? ऐसे रुग्ण विचारों और आत्मकरुणा के बल पर ही तो मैंने उन क्षणों का सामना किया था। किसी तरह तैरते रहने के लिए इस शैतानियत की ज़रूरत थी। औरों के लिए मेरे पास वक्त नहीं था। मुझे उसकी मुसीबतों की परवाह नहीं थी। उसे कितनी आफत में डाला गया था, इतने महीनों तक नाचने और काम करने के बाद उसे पैसे की कमी का सामना करना पड़ा था। और अब उसे मेरे चरित्र की एक कमी की सज़ा भुगतनी पड़ रही थी। इस कमी को मैं विवेक-शक्ति की कमी कहूँ? नहीं, यह उससे भी अधिक निकृष्ट वस्तु थी–साधारण चरित्र की कमी। अब मैं इस बात को स्पष्ट देख रहा हूँ, लेकिन उस समय मैं भी अपने शिकवे-शिकायतों में डूबा था और बिना किसी परेशानी के उसकी उद्विग्नता को देख रहा था। हमेशा की तरह मैंने उसे रोने दिया उसने आँखें पोंछकर पूछा, "जब हम खाना खा रहे थे, तो तुमने कुछ कहा था?"

' "हाँ, लेकिन तुमने मुझे बात पूरी नहीं करने दी," मैंने गुस्ताखी से जवाब दिया। "मैं पूछ रहा था कि जिन प्रोग्रामों के लिए हमने पैसा लिया है उन्हें तुम क्यों न पूरा करो?" कुछ देर सोचने के बाद वह बोली, "क्यों करूँ?"

' "क्योंकि हमें एडवांस मिला है और हमें बाकी के पूरे रुपयों की ज़रूरत है।"

' "सारा पैसा कहाँ है?"

' "यह तो तुम्हें मालूम होगा। सारा एकाउंट तुम्हारे नाम पर है और अगर तुम चाहो तो बैंक की किताब देख सकती हो।" यह बड़ी निर्मम बात थी। कोई शैतान मेरी खोपड़ी के भीतर बैठकर मुझसे ये बातें कहलवा रहा था। अचानक मुझे महसूस हुआ कि मैंने उसके लिए बहुत कुछ किया है, लेकिन मेरे लिए उसके मन में कोई हमदर्दी नहीं है।

' उसे ऐसी अप्राकृतिक बहस को जारी रखने से चिढ़ थी। उसने सिर्फ यही कहा, "मेहरबानी करके मुझे बताओ कि तुमने कहाँ-कहाँ प्रोग्राम का वादा किया है, ताकि मैं उनके पैसे लौटा दूँ।" मैं जानता था कि यह सिर्फ कहने की बात है। लौटाने के लिए उसके पास पैसा कहाँ से आएगा? मैंने कहा, "पैसा लौटाने की क्या ज़रूरत है? तुम प्रोग्राम पूरे क्यों नहीं कर सकतीं?"

' "तुम्हें सिर्फ पैसे का ध्यान है? देखते नहीं कि मैं दोबारा पब्लिक के सामने अपनी

सूरत नहीं दिखा सकती!”

‘ “क्यों नहीं? मैं गिरफ्तार हूँ तो गिरफ्तार ही सही। तुम्हें तो किसी ने गिरफ्तार नहीं किया। फिर तुम अपना काम क्यों न जारी रखो?”

‘ “नहीं रख सकती। बस मुझे इतना ही कहना है।”

‘ मैंने भावशून्य स्वर में पूछा, “भविष्य में तुम क्या करोगी?”

‘ “शायद मैं उसके पास लौट जाऊँगी।”

‘ “तुम सोचती हो कि वह तुम्हें वापस ले लेगा?”

‘ “हाँ, अगर मैं नाचना बन्द कर दूँ।”

‘ मैं एक दुष्ट हँसी हँसा। उसने पूछा, “तुम हँस क्यों रहे हो।”

‘ “अगर सिर्फ नाचने की बात होती तो वह तुम्हें वापस ले लेता।”

‘ मैंने इस तरह की बातें क्यों की थी? उसके दिल को बहुत चोट पहुँची थी। उसने कहा, “हाँ, इस वक्त तुम ऐसी बात कहने की स्थिति में ही। हो सकता है, वह मुझे दहलीज़ के भीतर दाखिल न होने दे। ऐसी हालत में वहाँ प्राण त्याग देना ठीक होगा।” कुछ देर तक वह अपने मूड में खोई रही। यह देखकर कि उसका अभिमान टूट गया है, मुझे बड़ा सन्तोष हुआ, उसने कहा, “मेरा ख्याल है कि हम दोनों के लिए यही बेहतर होगा कि इस ज़िन्दगी को खत्म कर दिया जाए। एक गिलास या दो गिलास दूध में एक दर्जन नींद वाली गोलियाँ काफी होंगी। आजकल अक्सर सुनने में आता है कि फलाँ ने फलाँ व्यक्ति से आत्महत्या का समझौता किया था। मुझे यह हल बहुत शानदार मालूम होता है–लम्बी छुट्टी की तरह। किसी रात को बैठकर हम बातें कर सकते हैं और दूध के घूँट पीकर किसी नई दुनिया में आँखें खोल सकते हैं, जिसमें मुसीबतें नहीं हैं। मैं अभी यह सुझाव रखती, अगर मुझे यकीन होता कि तुम समझौते का पालन करोगे। लेकिन मुझे डर है कि मैं मर जाऊँगी, तुम अन्तिम क्षण में अपना फैसला बदल दोगे।”

‘ “ताकि मुझे तुम्हारी लाश ठिकाने लगानी पड़े?” मैंने कहा। इससे बदतर और कोई बात नहीं कही जा सकती थी। मैं बार-बार इस किस्म की बातें क्यों कह रहा था? मेरा ख्याल है कि मैं यह सोचकर चिढ़ गया था कि अब वह आज़ाद पंछी है, मैं गिरफ्तार हूँ और अब वह नाचना भी छोड़ देगी।

‘ “मैंने कहा, इस तरह के रुग्ण विचारों की बजाय नाचना क्या बेहतर नहीं होगा?” मुझे लगा कि मुझे फिर से उसे अपने अधीन रखना चाहिए। “तुम नाचतीं क्यों नहीं? क्या इसलिए कि मैं तुम्हारी देखभाल के लिए मौजूद नहीं रहूँगा? मुझे विश्वास है कि तुम अपनी देखभाल खुद कर सकती हो। और फिर हो सकता है, मैं जल्द ही छूट जाऊँ। ओह! इस केस में कुछ नहीं है। पहली ही सुनवाई में खत्म हो जाएगा। मेरी बात मानो। यह इलज़ाम झूठा है।”

‘ “सच?”

‘ “मेरे खिलाफ वे क्या साबित कर सकते हैं?”

‘ इस कानूनी नुक्ते में न पड़कर उसने कहा, “तुम अगर रिहा हो भी जाओ तब भी मैं पब्लिक में नहीं नाचूँगी। मैं इस तरह की सर्कस की ज़िन्दगी से तंग आ गई हूँ।”

‘ “ तुमने खुद यह ज़िन्दगी चुनी थी,” मैंने कहा।

‘ “लेकिन सर्कस की ज़िन्दगी नहीं। मैंने तो और ही सपने देखे थे। तुम्हारे पुराने घर के साथ सब कुछ चला गया।”

‘ “ओह! मैं कराह उठा, “तब तो तुम मुझे चैन नहीं लेने दोगी। तुमने मुझे मजबूर किया कि मैं तुम्हें पब्लिक के सामने लाऊँ, अब तुम दूसरी बात कह रही हो। मैं नहीं जानता, मैं नहीं जानता, तुम्हें खुश करना बहुत मुश्किल है!”

‘ “तुम कुछ नहीं समझते!” वह चिल्लाई और उठकर ऊपर चली गई। फिर कुछ सीढ़ियाँ उतरकर उसने कहा, “इसका यह मतलब नहीं कि मैं तुम्हारी मदद नहीं करूँगी। अगर मुझे अपनी आखिरी चीज़ भी गिरवी रखनी पड़े तब भी मैं तुम्हें जेल से छुड़वा लूँगी। लेकिन एक बार यह मामला खत्म हो जाए तो हमेशा के लिए मेरा पीछा छोड़ दो। बस, मैं सिर्फ यही माँगती हूँ। मुझे भूल जाना। मैं चाहे जीऊँ या मरूँ, तुम्हें इससे कोई सरोकार नहीं।”

‘ वह अपने वचन की पूरी निकली। अचानक उसकी सरगर्मियाँ शुरू हो गईं। वह मणि को साथ लेकर इधर-उधर भागने लगी। उसने अपने हीरे के गहने बेच दिए। सब शेयरों को खरीद के भाव पर बेचकर जितना पैसा इकट्ठा कर सकी, किया। वह मणि को चर्खी की तरह घुमा रही थी। मणि को मद्रास भेजकर उसने मेरे लिए एक बड़ा वकील मँगवाया। जब पैसे की और ज़रूरत पड़ी और उसने देखा कि हमें कहीं और से भी पैसा जुटाना पड़ेगा तो उसकी व्यावहारिकता प्रखर हो उठी। अपनी बात भूलकर वह फिर नाचने लगी, मणि की मदद से वह साज़िन्दों के और रेल के इन्तज़ाम खुद करने लगी। उसे सफर करते देखकर मैंने ताना दिया, “जानती हो, मैं यही चाहता था।” प्रोग्रामों की कोई कमी नहीं थी। दरअसल मेरी दुर्दशा से भी लोगों में कुछ दिनों के बाद नई दिलचस्पी पैदा हुई थी। जो भी हो, लोग नृत्य का आनन्द लेना चाहते थे, मेरी हालत की उन्हें कोई परवाह नहीं थी। उदासीन भाव से रोज़ी को अभ्यास करने और बाकी सारे काम करते देखकर मेरे दिल को बहुत चोट पहुँचती थी। मणि उसकी बहुत मदद करता था। और निमन्त्रण भेजनेवाले लोग भी रोज़ी की बहुत मदद करते थे। इन सब बातों से यह साबित हो गया था कि मेरे बगैर उसका गुज़ारा चल सकता है। मेरे जी में आया कि मणि से कह दूँ, “सावधान रहना, तुम्हें पता भी नहीं चलेगा, वह ऐसा नाच नचाएगी कि अचानक तुम्हारी हैसियत मुझ जैसी बन जाएगी। इस संपेरिन से बचकर रहना!” मैं जानता था कि मेरा मन ठीक से काम नहीं कर रहा था। मुझे मालूम था कि उसकी आत्मनिर्भरता को देखकर मुझे ईर्ष्या हो रही थी। लेकिन उस वक्त मैं यह भूल गया कि वह मेरी खातिर ही यह सब कर रही थी। मुझे डर था कि अपने प्रतिवादों के बावजूद भी वह कभी नाचना नहीं छोड़ेगी–वह ऐसा नहीं कर पाएगी, बल्कि दिन-प्रतिदिन उसकी स्थिति मज़बूत होती जाएगी। जिस तरह से वह सारा काम संभाल रही थी उसे देखकर तो यही लगता था कि मैं चाहे जेल में रहूँ या बाहर, उसका पति चाहे या न चाहे वह सब कुछ संभाल लेगी। उसकी ज़िन्दगी में न मार्को के लिए जगह थी न मेरे लिए। उसमें एक प्रबल जीवनशक्ति थी, जिसकी कीमत स्वयं उसने अभी तक कम आँकी थी।

‘ हमारा वकील भी मशहूर आदमी था। दक्षिण भारत की कचहरियों में उसके नाम

का जादू चलता था। उसने कई लोगों को (अनेक बार) फाँसी के फँदे से बचाया था। जनता को लूटनेवालों को जनता और कानून की निगाहों में निर्दोष सिद्ध किया था। वह आसानी से यह साबित कर सकता था कि कानून तोड़नेवाले गुण्डों का गिरोह निर्दोष है। पुलिस की साज़िशों का शिकार है। पुलिस द्वारा बड़ी मेहनत से तैयार किए गए केसों को वह रफा-दफा करवा देता था, पुलिस के बयान को हास्यापस्पद साबित कर देता था और सावधानी से इकट्ठे किए गए सबूतों को अपने अंगूठे और तर्जनी से पकड़कर छूमन्तर कर देता था। देखने में वह पुराने फैशन का था, लम्बा कोट और प्राचीन ढंग की धोती और पगड़ी पहनता था और उसे ऊपर काले रंग का चोगा। जब अदालत में खड़ा होकर वह जजों को सम्बोधित करता था तो उसकी आँखों में हँसी और आत्मविश्वास की चमक होती थी। जब वह अपने डेस्क पर रखे कागज़ात को देखता था तो बड़ी शानदार अदा से एक चुटकी नसवार नाक के अन्दर सूँघ लेता था। एक बार तो हमें डर लगा कि कहीं वह यह समझकर कि हमारा केस मामूली है, केस लड़ने से इन्कार न कर दे। लेकिन नलिनी की खातिर उसने केस लड़ना मंजूर कर लिया। एक विख्यात व्यक्ति ने दूसरे का लिहाज़ किया था। जब यह खबर मिली कि उसने केस लड़ना मंजूर कर लिया है (सिर्फ 'हाँ' कहलवाने के लिए ही एक हज़ार रुपया लग गया था) तो हमें लगा जैसे पुलिस ने माँफी माँग कर मेरे खिलाफ केस बन्द कर दिया हो। लेकिन उस वकील की फीस बहुत ज़्यादा थी। हर बार नकदी देकर उससे मशविरा लिया जाता था। वह अपने ढंग का 'मुल्तवी करानेवाला वकील था।' मुकद्दमा उसके हाथ में गीले आटे की तरह होता था, जिसे वह मनमाने ढंग से गूँधता था, बारीकी से उसकी काँट-छाँट करता था और खुर्दबीन की तरह जाँच करने के लिए बहुत-से दिनों की माँग करता था। फिर वह जजों की नाक में दम कर देता था और उन्हें लंच के लिए भी नहीं उठने देता था, क्योंकि वह बिना कोई वाक्य खत्म किए भी बातें कर सकता था; बिना साँस लिए एक वाक्य में दूसरा वाक्य जोड़ते जाने की तरकीब उसे मालूम थी।

' वह सुबह की ट्रेन से आया और शाम की ट्रेन से लौट गया। सारा दिन न तो वह अदालत से हिला न ही उसने केस को एक इंच भी आगे बढ़ने दिया।–एक जज ने आश्चर्य प्रकट किया कि दिन कैसे गुज़र गया था। इस तरह वह वकील अपराधी को ज़्यादा से ज़्यादा दिन आज़ाद रखता था, उसका आखिरी नतीजा चाहे जो निकले। लेकिन इसका मतलब यह भी था कि मुकद्दमे की चपेट में आए बेचारे मुवक्किल को ज़्यादा खर्च करना पड़ता था। वकील की फीस साढ़े सात सौ रुपये रोज़ थी, साथ में उसे रेल का भाड़ा और दूसरे खर्च भी देने पड़ते थे। वह कभी अपने साथ जूनियर वकील लिए बगैर नहीं आता था।

' मेरे केस को उसने तीन अंकों की कॉमेडी बनाकर प्रस्तुत किया, जिसका खलनायक मार्को था–सभ्य जीवन का शत्रु। पुलिस ने सबसे पहले मार्को की गवाही दिलवाई। मैंने देखा, मेरे विख्यात वकील के हर हमले पर वह थर्रा जाता था। शायद वह सोच रहा था, काश वह यह केस न चलाता। उसका भी वकील था, लेकिन वह छोटा और भयभीत दिखाई देता था। कॉमेडी के पहले अंक में कहा गया था कि खलनायक अपनी पत्नी को पागल बनाना चाहता था, दूसरे अंक में बताया गया था कि किस तरह राजू नाम के सीधे-सादे परोपकारी जीव ने मार्को की पत्नी को मौत और भुखमरी के पंजे से बचाया, उस महिला की रक्षा के लिए उसने अपने समय और काम-काज का भी त्याग किया और राजू की मदद से

ही वह महिला कला के संसार में इतना नाम पा सकी है। रोज़ी हमारे राष्ट्र और सांस्कृतिक परम्पराओं को चार चांद लगा रही है। सारा संसार भरतनाट्यम् के लिए भूखा है लेकिन मार्को उसका अपमान करता है, जब रोज़ी का नाम मशहूर हो गया तो, उसके मन में ईर्ष्या जगी और योर ऑनर, वह इस बेचारी महिला की ख्याति के महल को बारूद से उड़ाने के लिए लालायित हो उठा। फिर इस षड्यन्त्रकारी ने वह दस्तावेज़ निकाला जो कई बरसों से छिपा पड़ा था–महिला से दस्तखत कराने के पीछे मार्को का कोई और इरादा था–वह बाद में इसपर प्रकाश डालेगा–(मेरा वकील किसी भी चीज़ को दुष्ट सिद्ध कर सकता था–बाद में चाहे उसे मौका न भी मिले) बरसों पुराने कागज़ को बाहर निकालने का आखिर क्या मतलब था? इतने बरस तक उसने इस कागज़ को छिपा क्यों रखा था? फिलहाल वह इस बात पर कोई टिप्पणी नहीं करेगा। (उसने चारों तरफ इस तरह देखा जैसे कोई शिकारी कुत्ता लोमड़ी को सूँघता है) योर ऑनर, इस कागज़ को बिना दस्तखत किए मार्को को लौटा दिया गया, ताकि बखेड़े से बचा जाए। उस महिला को गहनों के लालच से नहीं फँसाया जा सकता था, न ही उसे गहनों से प्रेम था। नेक राजू खुद उस कागज़ को डाकखाने में ले गया था, पोस्टमास्टर इस बात का गवाह है। कागज़ों पर दस्तखत न देखकर षड्यन्त्रकारी को बड़ी निराशा हुई, इसलिए उन लोगों ने एक नई चाल चली। किसी ने महिला के दस्तखतों की नकल कर दी और उसे पुलिस के पास ले गया। यह करतूत किसकी थी, यह बताना मेरे वकील का काम नहीं था, न ही उसे इस सवाल में कोई दिलचस्पी थी। वह दावे से इतना ज़रूर बता सकता था कि उसके मुवक्किल ने जाली दस्तखत नहीं बनाए थे, बिना किसी हिचकिचाहट के वह अदालत से सिफारिश करेगा कि उसके मुवक्किल को निरपराधी घोषित करके रिहा कर दिया जाए।

‘ लेकिन सरकार का केस दिलचस्प और रंगीन भले ही न हो, मजबूत ज़रूर था। उन्होंने मणि को कटघरे में खड़ा करके इतने सवाल पूछे कि आखिर उसने यह बक ही दिया कि मैं हर रोज़ बीमाशुदा पार्सल का इन्तजार करता रहता था। पोस्टमास्टर को भी यह कबूल करना पड़ा कि जब मैं डाकखाने गया था तो अजब ढंग से पेश आ रहा था। अन्त में लिखाई विशेषज्ञ ने कहा कि वह लिखाई मेरी मालूम होती है–उसने चेकों के पीछे, रसीदों, और खतों पर मेरी लिखाई का हवाला देकर यह बात कही।

‘ जज ने मुझे दो बरस की सज़ा दी। हमारा विख्यात वकील सन्तुष्ट दिखाई दे रहा था। उसका कहना था कि कानून के मुताबिक मुझे सात बरस की सज़ा मिल सकती थी, लेकिन उसकी धाराप्रवाह दलीलों ने पाँच साल सज़ा में से घटा दिए थे, हालाँकि अगर मैं ज़रा-सी सावधानी बरतता···

‘ मेरे विख्यात वकील को अपना उद्देश्य पूरा करने में कई महीने लगे थे। उधर नलिनी वकील का और घर का खर्च जुटाने के लिए पहले से भी ज्यादा मेहनत कर रही थी।

‘ मैं आदर्श कैदी समझा जाता था। अब मुझे एहसास हुआ कि लोग मुझे इसलिए बुरा और निकम्मा नहीं समझते थे, क्योंकि मैं इस काबिल था बल्कि इसलिए कि हमेशा से वे मुझे गलत जगह पर देखते आ रहे थे। अगर वे सेन्ट्रल जेल आकर मुझे देखते तो ज़रूर मेरी तारीफ करते। इसमें शक नहीं कि जेल में मेरी गतिविधियों पर नियन्त्रण था। मुझे तड़के ही बिस्तर से उठना पड़ता था और जब मेरी इच्छा बाहर घूमने की होती थी, तब मुझे भीतर

बन्द होना पड़ता था–सुबह पाँच बजे मुझे बाहर निकाला जाता था और शाम के पाँच बजे बन्द कर दिया जाता था। लेकिन इस बीच मैं परिस्थिति का मालिक था, जेल के हर विभाग में नेक निरीक्षक की तरह जाता था। सभी वॉर्डरों से मेरी पटती थी। जब उन्हें कैदियों की निगरानी करनी होती थी तो मैं उनकी जगह ड्यूटी दे दिया करता था। मैं बुनाई और बढ़ईगीरी विभाग में भी जाता था। हत्यारे, लुटेरे, गला काटनेवाले, सब मेरी बातें सुनते थे और मैं बातों से उनका अवसाद दूर कर सकता था। जब कभी आराम का मौका आता तो मैं उन्हें कहानियाँ और दार्शनिक बातें सुनाता। वे मुझे वडुयार (गुरु) कहकर पुकारने लगे, जेल में पाँच सौ कैदी थे और मैंने उनमें से अधिकांश लोगों के साथ आत्मीयता पैदा कर ली थी। अफसरों से भी मेरी पटती थी। जब जेल का सुपरिण्टेण्डेण्ट मुआइना करने निकलता था तो मैं उसके पीछे-पीछे चलता था और उसकी टिप्पणियाँ सुनता था। मैं भाग-दौड़कर उसके छोटे-मोटे काम भी कर दिया करता था, जिससे वह मुझे चाहने लग गया था। जब वह बाईं तरफ झुककर देखता तो मैं समझ जाता कि वह क्या चाहता है और मैं भागकर उस वॉर्डर को बुला लाता जिसे वह बुलाना चाहता था। उसकी एक क्षण की हिचकिचाहट से ही मैं भाँप लेता था कि वह सड़क पर पड़ी कंकड़ी को फिंकवाना चाहता है। उसे इन बातों से बेहद खुशी होती थी इसके अलावा मैं पहले से भागकर वॉर्डरों और दूसरे कर्मचारियों को उसके आने की खबर दे दिया करता था। वे लोग ऊँघ रहे होते थे, उन्हें उठकर अपनी पगड़ियाँ बाँधने का समय मिल जाता था।

' मैं सुपरिण्टेण्डेण्ट के घर के पिछवाड़े में सब्ज़ियों की क्यारी लगाया करता था। ज़मीन गोड़कर मैं पानी दिया करता था, कंटीली झाड़ियों की बाड़ें लगाता था, ताकि जानवर पौधों को नष्ट न कर सकें। मैं क्यारियों में बड़े-बड़े बैंगन, फलियाँ और गोभी उगाता था। जब छोटी-छोटी कलियाँ निकलतीं तो मुझे बड़ी उत्तेजना होती। मैं उन्हें बढ़ते हुए, शक्लें अख्तियार करते, रंग बदलते और पत्तियाँ झड़ते हुए देखता। जब सब्ज़ियाँ तैयार हो जातीं तो मैं उन्हें तोड़कर पानी में धोता, अपनी बास्कट के छोर से पोंछता और बाँस की बुनी टोकरी में कलात्मक ढंग से सजाकर (बुनाई की शेड से मैंने एक टोकरी मंगवा ली थी) मैं औपचारिक ढंग से उन्हें भीतर ले जाता था,चमचमाते बैंगनों,गोभी और पत्तेदार सब्ज़ियों को देखकर सुपरिण्टेण्डेण्ट मुझे खुशी से गले लगा लेता था। वह सब्ज़ियों का और अच्छे-अच्छे खानों का शौकीन था। मुझे यह काम बहुत पसन्द था, नीला आसमान, खिली हुई धूप, मकान के साये में बैठकर काम करना, ठण्डे पानी का स्पर्श, इससे मेरे भीतर एक शानदार भावना पैदा हो गई–ज़िन्दगी और ये भावनाएँ बहुत अच्छी मालूम होने लगीं। ताज़ी खुदी हुई मिट्टी की गन्ध मुझे सबसे ज़्यादा खुशी देती थी। अगर यही जेल की ज़िन्दगी थी तो और लोग इसे क्यों नहीं अपनाते थे। जेल के नाम से ही वे काँप उठते थे, मानों वहाँ इन्सान को ज़ंजीरों में रखा जाता हो, लोहे से दागा जाता हो और सुबह से लेकर शाम तक उसे कोड़े लगाए जाते हों। कैसे मध्ययुगीन विचार थे ये? जेल से ज़्यादा अच्छी जगह कौन-सी हो सकती थी। नियमों का पालन करने पर यहाँ बाहर की दुनिया की बजाय ज़्यादा तारीफ मिलती थी। मैं दूसरे कैदियों के साथ खाना खाता था और उन्हीं के साथ सामाजिक जीवन व्यतीत करता था। पचास एकड़ के इलाके में मैं आज़ादी से घूम-फिर सकता था–अगर सोचा जाए तो इतनी जगह बहुत होती है। देखा जाए तो आमतौर पर इन्सान इससे

कम ज़मीन में भी गुज़ारा करता है। नये कैदी जेल में आकर पहले कुछ दिन उदास और क्षुब्ध रहते। मैं उन्हें समझाता, "दीवारों को भूल जाओ तो तुम सुखी रह सकोगे।" मुझे उन लोगों की बात सोचकर हँसी आती थी जो जेल के विचार-मात्र से आतंकित हो उठते हैं। हो सकता है फाँसी पानेवाले, हिंस्र या आज्ञा न माननेवालों के विचार भिन्न हों, लेकिन बाकी सभी लोग वहाँ सुखी रह सकते थे। दो साल के बाद जब मुझे जेल से बाहर जाना पड़ा तो आंसुओं से मेरा गला रुंध गया। मेरी ख्वाहिश हुई कि काश मैंने इतना रुपया वकील पर बर्बाद न किया होता। उस जेल में स्थायी रूप से रहने में मुझे बहुत खुशी होती।

' सुपरिंटेण्डेण्ट ने मुझे अपना व्यक्तिगत नौकर बनाकर दफ्तर में मेरा तबादला करवा दिया। मैं उसके डेस्क की देखभाल करता, दवातों में स्याही भरता, कलम साफ करता, पेन्सिल तेज़ करता और दरवाज़े के बाहर खड़ा रहता, ताकि काम के वक्त कोई उसे दिक न करें। ज्योंही वह मेरे बारे में सोचता मैं जाकर खड़ा हो जाता। मैं इतना चैतन्य रहता था। वह मुझे फाइलों से भरे सन्दूक बाहरी दफ्तर में पहुँचाने को कहता और दफ्तर से कागज़ात लाकर मैं उसे देता। उसकी गैरहाज़िरी में अखबार आते थे–उसके पास ले जाने से पहले मैं खुद अखबारों में नज़र डाल लेता। मेरा ख्याल है, कि उसने कभी इसका बुरा नहीं माना। वह लंच के बाद सुस्ताने से पहले अखबार पढ़ना पसन्द करता था। मैं विश्व के नेताओं के भाषणों, पंचवर्षीय योजनाओं के विवरणों, मिनिस्ट्रों द्वारा किए गए पुलों के उद्घाटनों या पुरस्कार-वितरण समारोहों, आणुविक धमाकों और संसार की मुसीबतों की खबरों पर सरसरी निगाह दौड़ाता था।

' लेकिन शुक्रवार और शनिवार को मैं काँपती हुई उँगलियों से 'हिन्दू' का अंतिम पन्ना पलटता था–अंतिम कॉलम के ऊपर हिस्से में हमेशा नलिनी की तस्वीर के साथ यह छपा रहता था कि वह किस संस्था में 'शो' दे रही है और टिकटों का दर क्या है। कभी दक्षिणी भारत के एक कोने में, उससे अगले हफ्ते लंका में, कभी बम्बई में और कभी दिल्ली में उसके शो होते थे। उसका साम्राज्य सिकुड़ने की बजाय दिनोंदिन विस्तृत होता जा रहा था। यह देखकर मैं जलभुन जाता था कि वह मेरे बगैर भी काम में जुटी हुई है। अब बीच के सोफे पर कौन बैठता था? मेरी तर्जनी के संकेत के बगैर शो कैसे शुरू हो सकता था? नाच कब बन्द करना है इसका पता नलिनी को कैसे लगता था? शायद वह लगातार नाचती रहती थी और दर्शकों में इतनी अक्ल नहीं थी कि वे उससे रुकने के लिए कहते। यह सोचकर मन ही मन मुझे खुशी हुई कि 'शो' के बाद उसकी ट्रेन ज़रूर छूट जाती होगी। मैं यह देखने के लिए अखबार पढ़ता था कि आजकल वह कहाँ नाच रही है और कितना पैसा पैदा कर रही है। अगर वह दूरदर्शिता से हिसाब नहीं रखेगी तो शरीर के अंगों को तोड़-मरोड़कर पैदा की गई उसकी सारी कमाई सुपरटैक्स की भेंट चढ़ जाएगी। अगर शुरू के महीनों में मणि मुझे जेल में मिलने न आता तो शायद मैं सोचता कि उसने मेरी जगह ले ली है, इस बात से मेरे मन में और भी ज़्यादा विष पैदा हो जाता।

' जेल में सिर्फ मणि मुझसे मिलने आता था। लगता था कि बाकी सारे दोस्तों और रिश्तेदारों ने मुझे भुला दिया था। मणि इसलिए आता था क्योंकि वह मेरी हालत देखकर उदास होता था। मेरा इन्तज़ार करते वक्त उसके चेहरे पर गंभीरता और अवसाद छाया रहता था। लेकिन जब मैंने उसे कहा, "जेल इतनी बुरी जगह नहीं है। अगर तुम यहाँ आ

सकते हो तो ज़रूर आओ" तो उसे ग्लानि हुई। उसके बाद वह मुझसे मिलने नहीं आया। लेकिन आध घंटे में उसने मुझे सारी खबरें बता दी थीं। नलिनी अब मद्रास में बस गई थी और अच्छी तरह अपनी देख-भाल कर रही थी। जाने से पहले उसने मणि को हज़ार रुपये इनाम में दिए थे। रेलवे प्लेटफार्म पर उसे सैकड़ों हार पहनाए गए थे। उसे विदाई देने के लिए कितनी भीड़ इकट्ठी हुई थी! जाने से पहले उसने कायदे से अपने कर्ज़ों की फेहरिस्त बनाई थी और उनका पूरा भुगतान किया था। घर का फर्नीचर और बाकी सामान उसने नीलाम करने के लिए एक कबाड़ी के हवाले कर दिया था। मणि ने बताया कि वह घर से सिर्फ एक किताब अपने साथ ले गई थी। शराब की अलमारी खोलकर उसने सारी शराब फिंकवा दी थी, किताब उसके भीतर छिपी थी। वह बड़ी सावधानी से उस किताब को साथ ले गई। मैंने बचकाने अंदाज़ में कहा, "वह किताब तो मेरी थी, वह क्यों ले गई! शायद वह उस पुस्तक को बहुत महान उपलब्धि समझती है। क्या इस बात से मार्को खुश हुआ था? या इस बात का उस पर कोई असर पड़ा था ?" मणि ने बताया, "केस के बाद ही वह कार में बैठकर अपने घर आ गई थी और वह अपनी कार में बैठकर सीधा रेलवे स्टेशन चला गया था। दोनों की मुलाकात नहीं हुई थी।

' "कम से कम इस एक बात की खुशी मुझे है। नलिनी में इतना स्वाभिमान है कि उसने मार्को के पैरों पर गिरने की दोबारा कोशिश नहीं की ।"

' जाने से पहले मणि ने कहा, "हाल ही में आपकी माँ से मुलाकात हुई थी। वे अच्छी तरह से हैं और गाँव में हैं ।" अदालत में मेरी माँ भी आई थी। आखिरी पेशी के दिन हमारे स्थानीय 'तारीखें टलवाने वाले' वकील ने उसे खबर दी थी। आमतौर पर उसी के द्वारा हमारा संपर्क स्थापित होता था। अभी भी वह मेरे घर को सेठ के यहाँ बन्धक रखने के लंबे, तकलीफदेह पचड़े में पड़ा था। मद्रास के विख्यात वकील के आने की बात सुनकर वह बेहद उत्तेजित हुआ था। हमने उसे ताज के सबसे शानदार कमरे में ठहराया था। हमारा छोटा वकील उत्तेजना से फिरकी की तरह नाच रहा था, यहाँ तक कि वह गाँव जाकर मेरी माँ को भी बुला लाया था, किसलिए यह तो वही जाने। जब मैं कटघरे में खड़ा था तो मेरी दुर्दशा देखकर मेरी माँ का दिल पिघल गया। जब रोज़ी माँ से कुछ कहने के लिए बरामदे में गई तो माँ की आँखों से चिनगारियाँ फूटने लगीं, "अब तुमने उसकी जो दुर्दशा की है उससे तो तुम्हें संतोष है न ?" रोज़ी सहम कर पीछे हट गई। अदालत बर्खास्त होने पर यह बात खुद माँ ने मुझे बताई थी। माँ दरवाजे के पास खड़ी थी। ज़िन्दगी में उसने कभी अदालत नहीं देखी थी, अपने इस दु:साहस पर उसे आश्चर्य हो रहा था। उसने मुझसे कहा, "तुमने अपने और अपने परिचितों के माथे पर कैसा कलंक लगाया है? जब तुम कई हफ्तों तक निमोनिया में पड़े थे तो मुझे डर लगता था कि कहीं तुम मर न जाओ लेकिन अब जो भुगतना पड़ रहा है, उससे तो तुम्हारी मौत ही अच्छी थी ....." वह अपना वाक्य पूरा नहीं कर पाई, भावावेश से उसकी बुरी हालत हो गई और फैसला सुनाने के लिए जब अदालत जमा हुई तो वह उससे पहले ही वहाँ से चली गई।

10

राजू की कहानी तड़के मुर्गे की बाँग के वक्त तक चलती रही। वेलान सीढ़ियों पर बैठा प्राचीन पत्थरों की रेलिंग का सहारा लेकर बड़े मनोयोग से सारी कहानी सुन रहा था। रात-भर बोलते रहने के कारण राजू का गला दुखने लगा था। गाँव के लोग अभी नहीं जागे थे–वेलान एक लम्बी उबासी लेकर खामोश हो गया। राजू ने अपने जन्म से लेकर जेल से छूटने तक की सारी बातें बिना कुछ छिपाए बता दीं। उसका ख्याल था कि वेलान ग्लानि से उठकर कहेगा, "हम तुम्हें धर्मात्मा समझते रहे थे। अगर तुम्हारे जैसा आदमी तपस्या करेगा तो जो थोड़ी-बहुत वर्षा की आशा है वह भी नहीं आएगी–हम तुम्हें यहाँ से उठाकर फेंक दें, उससे पहले ही तुम यहाँ से चले जाओ। तुमने हमें धोखा दिया है।" राजू इन्हीं शब्दों के इन्तज़ार में था, मानों उसे क्षमा मिलनेवाली हो। वह वेलान की खामोशी को परेशानी और चिन्ता से देख रहा था, मानों दूसरी बार जज उसे फैसला सुनानेवाला हो। फर्क इतना था कि अदालत के जज की बजाय यह जज ज़्यादा सख्त मिट्टी का बना था। वेलान खामोश रहा–इतना खामोश कि राजू को डर लगा कि कहीं उसे नींद न आ गई हो।

राजू ने पूछा, "अब तुमने मेरी सारी बात सुन ली ?" उसका स्वर ऐसे वकील की तरह था जिसे गलतफहमी हो गई हो कि जज ने उसकी तरफ ध्यान नहीं दिया।

' "हाँ, स्वामीजी !"

'स्वामी' शब्द सुनकर राजू को आश्चर्य हुआ। उसने पूछा, "तुम्हारा क्या विचार है?"

ऐसे सवाल का जवाब देने के लिए वेलान को बाध्य होना पड़ा, इसलिए उसे बड़ी तकलीफ हुई। उसने कहा, "स्वामीजी, पता नहीं, क्यों आपने मुझ तुच्छ दास को इतनी लम्बी कहानी सुनाई।"

इस व्यक्ति के मुख से निकलनेवाले हर आदरसूचक शब्द ने राजू के दिल को तीर की तरह भेद दिया। राजू ने भवितव्यता के आगे झुककर सोचा, 'यह आदमी अब मुझे नहीं छोड़ेगा और फौरन खत्म कर देगा।'

गहरी सोच के बाद न्यायाधीश उठ खड़ा हुआ और बोला, "मैं नित्यकर्म से निबटने के लिए गाँव जा रहा हूँ। बाद में मैं यहाँ आऊँगा। मैंने जो बातें यहाँ सुनी हैं, उनकी चर्चा किसी से नहीं करूँगा।" उसने नाटकीय ढंग से अपने सीने पर मुक्का मारकर कहा, "यह रहस्य यहीं बन्द रहेगा।" फिर साष्टांग प्रणाम करके वह सीढ़ियों से उतर गया और रेतीली नदी की तरफ चला गया।

किसी अखबार का संवाददाता गाँव में आ गया था। उसे इस खबर का सुराग लग गया था। सरकार ने सूखा पड़ने से पैदा हुई परिस्थितियों की जाँच और उन्हें दूर करने के सुझाव देने के लिए एक कमीशन भेजा था, उसी के साथ एक प्रेस-संवाददाता भी आया था। गाँव में घूमते हुए उसने स्वामीजी के विषय में सुना था, और वह नदी पार मन्दिर में गया था। फिर उसने मद्रास में अपने अखबार को एक तार भेजी थी। वह अखबार हिन्दुस्तान के सभी शहरों में जाता था। खबर का शीर्षक था, 'सूखा दूर करने के लिए संन्यासी की

तपस्या' उसके बाद संक्षिप्त विवरण था।

यहीं से शुरुआत हुई ।

जनता का कौतूहल जागृत हुआ। लोग अखबार के दफ्तर को घेरकर और खबरों की माँग करने लगे। रिपोर्टर को वापस गाँव में जाने का हुक्म मिला। उसने तार भेजी 'व्रत का पाँचवाँ दिन ।' उसने सारा दृश्य बयान किया। किस तरह स्वामीजी नदी के किनारे आकर उद्गम की तरफ मुँह करके सुबह छः से आठ बजे तक घुटने तक पानी में खड़े होकर, आँख मूँदे, हाथ जोड़े कुछ बोला करते हैं। गाँव में घुटने तक गहरा पानी मिलना मुश्किल था, लेकिन गाँववालों ने रेत में गड्ढा खोदकर, दूर-दूर के कुओं से पानी लाकर भर दिया था, ताकि स्वामीजी के लिए घुटने तक का पानी रहे। दो घंटे वहाँ खड़े रहने के बाद स्वामीजी धीरे-धीरे सीढ़ियाँ चढ़कर मन्दिर के खंभोंवाले हॉल में एक चटाई पर लेट जाते हैं। उनके भक्त लगातार उनपर पंखा करते रहते हैं। बहुत भारी भीड़ इकट्ठी रहती है, लेकिन स्वामीजी किसी की तरफ नहीं देखते।··· उसका व्रत सम्पूर्ण था। उसने लेटकर आँखें मूँद लीं, ताकि उसका व्रत सफल हो। इसी उद्देश्य के लिए उसने अपनी सारी शक्ति एकत्रित कर रखी थी। जब वह पानी में नहीं खड़ा होता था तो समाधि लगाकर बैठा रहता था। गाँववाले अपने काम-काज छोड़कर सारा वक्त इस महात्मा के पास बैठे रहते थे। जब वह सोता था तब भी वे उसकी रक्षा करते थे। इतनी भीड़ के बावजूद खामोशी छाई रहती थी।

लेकिन दिन-ब-दिन भीड़ बढ़ती जा रही थी। हफ्ते बाद तो वहाँ बड़ा शोर-शराबा सुनाई देने लगा। बच्चे चीखते हुए खेलने लगे। औरतें टोकरियों में पतीले, ईंधन और खाने का सामान लाने लगीं और वहीं खाना पकाने लगीं। नदी के दोनों किनारों पर धुआँ ही धुआँ दिखाई देता था। पिकनिक करनेवालों की टोलियाँ वहाँ आने लगीं। धूप में औरतों की रंगीन साड़ियाँ चमकने लगीं। मर्दों ने भी भड़कीले कपड़े पहने थे। बैलों का जुआ उतारकर उन्हें पेड़ों तले खड़ा कर दिया गया था। भूसा खाते वक्त उनकी गर्दन की घंटियाँ बजने लगती थीं। लोग पानी के छोटे-छोटे चहबच्चों के गिर्द इकट्ठे होने लगे।

जब राजू की आँखे खुलतीं तो वह इस दृश्य को देखता। वह धुएं का अर्थ समझता था– अर्थात् लोग खा-पी रहे हैं और मज़े उड़ा रहे हैं। वह सोचने लगा कि लोग क्या खा रहे हैं– घी और केशरवाला पुलाव, साथ में सब्ज़ियाँ कौन-सी होंगी? शायद सूखे में कोई सब्ज़ी नहीं उगेगी। इस दृश्य से उसे बड़ी चोट पहुँचती।

दरअसल यह उसके व्रत का चौथा दिन था। खुशकिस्मती से पहले दिन उसने थोड़ा-सा बासी भोजन एक एल्यूमिनियम के बर्तन में डालकर मन्दिर के भीतरी हिस्से में एक पत्थर के खंभे के पीछे छिपाकर रख दिया था, छाछ में मिले चावल और सब्ज़ी। पहले दिन खुशकिस्मती से दिन की प्रार्थना के बाद रात को उसे थोड़ा समय मिल गया था। तब इतनी भीड़ नहीं थी। वेलान को गाँव में कुछ काम था। वह पीछे दो आदमियों को स्वामीजी की देखभाल के लिए छोड़कर चला गया था। स्वामीजी खंभोंवाले हॉल में चटाई पर लेटे थे और दो ग्रामीण उनके चेहरे पर ताड़ के बड़े-से पंखे से हवा कर रहे थे। दिन-भर भूखा रहने के बाद राजू थक गया था। उसने कहा, "तुम लोग चाहो तो सो जाओ, मैं अभी आता हूँ ।" वह काम-काजी मुद्रा में उठा और मन्दिर के भीतरी हिस्से में चला गया। 'मुझे उन लोगों को यह बताने की ज़रूरत नहीं है कि मैं क्यों और कहाँ जा रहा हूँ, या कितनी देर में

लौटूँगा,' उसे गुस्सा आया। उसके एकान्त में बाधा पड़ गई थी। लोगों की नज़रें हर वक्त जंगली बिल्ली की तरह उसीपर गड़ी रहती थी जैसे वह कोई चोर हो। मन्दिर के भीतरी स्थान पर पहुँचकर उसने आले में हाथ डालकर एल्यूमिनियम का बर्तन निकाला और चबूतरे के पीछे बैठकर तीन या चार बड़े-बड़े कौरों में, बिना किसी आवाज़ के सारा खाना निगल गया। दो दिन का बासी चावल सूखकर सख्त हो गया था, उसका स्वाद बेहद बिगड़ा हुआ था। लेकिन उससे राजू की क्षुधा शान्त हो गई। ऊपर से उसने पानी पी लिया और पिछवाड़े के आँगन में जाकर बिना आवाज़ के कुल्ली की–वह नहीं चाहता था कि वापस चटाई पर लेटते वक्त उसके मुँह से खाने की बास आए।

चटाई पर लेटकर वह सोचने लगा। वह इन सारी बातों से तंग आ गया था। वह सोचने लगा कि जब भीड़ बहुत जम जाएगी तो क्या वह चबूतरे पर खड़ा होकर चिल्ला नहीं सकेगा, 'सबके सब यहाँ से चले जाओ। मुझे अकेला रहने दो। मैं तुम्हारा उद्धार नहीं कर सकता। अगर तुम्हारा विनाश हो रहा है तो संसार की कोई शक्ति तुम्हें नहीं बचा सकती। मूझे भूखा रहकर तपस्या करने के लिए क्यों मजबूर करते हो ?' लेकिन इससे कोई फायदा नहीं होगा। वे इसे मज़ाक समझकर हूँसेंगे–अब वह इस सीमा तक पहुँच गया है कि आगे जाने की गुंजायश नहीं है। इस एहसास से दूसरे दिन उसे मुसीबत झेलने में कुछ ज़्यादा मदद मिली। एक बार फिर वह पानी में खड़ा होकर पहाड़ियों की तरफ देखने लगा, जहाँ पिकनिक करनेवाले लोगों की टोलियाँ सब तरफ फैली थीं। रात के वक्त वह फिर वेलान को छोड़कर एल्यूमिनियम के बर्तन में रखे बचे-खुचे खाने की तलाश में चला गया–यह काम उसने नितान्त हताशभाव में किया था। वह अच्छी तरह जानता था कि वह पहली रात ही सारा बर्तन खाली कर चुका था, फिर भी बचकाने ढंग से वह किसी चमत्कार की आशा कर रहा था। 'जब लोग मुझसे चमत्कारों की आशा रखते हैं तो मैं सबसे पहले एल्यूमिनियम के बर्तन से ही चमत्कार क्यों न शुरू करूँ ।' उसने जल-भुनकर सोचा। उसे कमज़ोरी महसूस हो रही थी। अपने भंडार की रिक्तता पर उसे गुस्सा आ रहा था। क्षण-भर के लिए उसने सोचा कि क्या वह अन्तिम बार वेलान से भोजन की याचना कर सकता है या नहीं–अगर वेलान उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ले तो उसके प्राण बच सकते हैं। वेलान को असलियत का पता होना चाहिए, लेकिन वह मूर्ख भी राजू को उद्धारक ही समझेगा। राजू ने क्रुद्ध भाव से एल्यूमिनियम का बर्तन फर्श पर पटक दिया और जाकर चटाई पर बैठ गया। अगर बर्तन टूट गया तो? उसका कोई इस्तेमाल तो नहीं होनेवाला था, खाली बर्तन को सर चढ़ाने से क्या होगा? जब वह बैठ गया तो वेलान ने आदरपूर्वक पूछा, "वह आवाज़ कैसी थी महाराज ?"

"खाली बर्तन की–क्या तुमने कहावत नहीं सुनी कि खाली बर्तन ज़्यादा शोर मचाता है ?"

वेलान विनयपूर्वक हँस पड़ा और उसने प्रशंसा-भरे स्वर में कहा, "महाराज, कितनी अच्छी और दार्शनिक बातें आपने अपने दिमाग में जमा कर ली हैं ।"

राजू आँखें फाड़-फाड़कर वेलान की तरफ देखने लगा। वेलान की वजह से ही उसकी दुर्दशा हो रही है। वह अपने घर क्यों नहीं जाता? कितना अच्छा हो अगर नदी पार करते वक्त मगरमच्छ उसे पकड़ ले। लेकिन बेचारा बूढ़ा मगरमच्छ, जो किंवदन्ती बन गया था,

अब सूख चुका था। जब उसका पेट खोला गया तो उसमें से दस हज़ार रुपये के ज़ेवर निकले थे। इसका मतलब यह था कि मगरमच्छ सिर्फ औरतों को खाता था? नहीं, नसवार की कुछ डिब्बियाँ और मर्दों के इयररिंग भी मिले थे। सबकी ज़बान पर एक ही सवाल था, "इस खज़ाने का अधिकारी कौन है ?" गाँववालों ने मामले को वहीं दबा दिया था। वे नहीं चाहते थे कि सरकार तक इसकी भनक पहुँचे और सरकार सब गड़े खज़ानों की तरह इस खज़ाने की भी माँग करे। उन्होंने अफवाह फैलाई कि मगरमच्छ के पेट में से दो घटिया किस्म के गहने निकले हैं। दरअसल जिस आदमी ने मगरमच्छ का पेट चीरा था वह भारी जायदाद का मालिक बन गया था। लेकिन उसे मगरमच्छ का पेट काटने की इजाज़त किसने दी थी? कौन कह सकता है? ऐसी हालत में लोग इजाज़त के लिए नहीं रुकते। जब मगरमच्छ मरा हुआ पाया गया था तो लोगों के बीच इस तरह की बातें हुई थीं।

उसे पंखा झलते-झलते वेलान सो गया था–अभी पंखा उसके हाथ में ही था। राजू जाग रहा था और उसके विचार रुग्णता ओर हास्यास्पदता की गहराइयों को छू रहे थे । वेलान को उस मुद्रा में बैठे देखकर राजू को दया आ गई । बेचारा बहुत उत्साह में था और इस तपस्या को सफल बनाने के लिए खुद कष्ट उठा रहा था–भोजन के सिवा वह स्वामीजी के लिए हर सुख–सुविधा जुटा रहा था। राजू ने मन ही मन कहा, 'भोजन की इच्छा करने की बजाय क्यों न उस बेचारे को मौका दिया जाए ?' भोजन तो उसे किसी सूरत में नसीब नहीं हो सकता। बदला लेने की भावना से उसने फैसला किया। "मैं भोजन के विचारों को दिल से निकाल दूँगा । आगामी दस दिनों में मैं जीभ और पेट-सम्बन्धी किसी बात को मन में नहीं आने दूँगा ।

इस इरादे से उसमें एक विशेष प्रकार की शक्ति आ गई। उसने इस ढंग से सोचना शुरू किया, 'अगर मेरे भूखे रहने से वृक्षों पर पत्तियाँ आ सकती हैं और घास उग सकती है तो मैं क्यों न पूरी तरह से भूखा रहूँ ?' जीवन में पहली बार वह संजीदगी से किसी बात के लिए प्रयत्न कर रहा था, पहली बार वह सम्पूर्ण भाव से पैसे और प्यार के बाहर अपनी शक्तियों को लगा रहा था। वह पहली बार ऐसा काम कर रहा था, जिसमें उसकी व्यक्तिगत दिलचस्पी नहीं थी। अचानक उसमें इतना उत्साह आ गया कि कठिन परीक्षा में से गुज़रने के लिए उसमें एक नये बल का संचार हो गया। उपवास के चौथे दिन उसमें काफी फुर्ती थी। वह नदी के पास गया, आँखें बन्द करके उसने प्रार्थना की कि इन्द्र देवता, पानी बरसाकर मानवता की रक्षा करें। उस प्रार्थना की अपनी लय थी, जिसे दुहराते-दुहराते उसका सर चकराने लगा। लगातार ठण्डे पानी के स्पर्श से उसके घुटने सुन्न हो गए थे। भूखे रहने से उसे लग रहा था, जैसे वह हवा में उड़ा जा रहा हो। यह अनुभूति उसे सुखद मालूम हुई। वह सोचने लगा, 'वेलान यह सुख मुझसे नहीं छीन सकता ।'

आसपास लोगों का शोर बढ़ता जा रहा था। उसी अनुपात में अपनी परिस्थितियों के प्रति उसकी चेतना धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही थी। उसके जाने बगैर ही दुनिया उसके गिर्द इकट्ठी होने लगी थी। यह घुमक्कड़ पत्रकार की कलम का चमत्कार था। इसका असर दूर-दूर तक पड़ा। सबसे पहले रेलगाड़ियों पर दबाव पड़ा। रेलवे विभाग को मलगुड़ी के लिए स्पेशल ट्रेनें चलानी पड़ीं। लोग फुटबोर्डों पर लटककर और डिब्बों की छतों पर बैठकर सफर करने लगे। मलगुड़ी का छोटा-सा स्टेशन मुसाफिरों से भर गया। स्टेशन के बाहर बसें

खड़ी रहती थीं। कण्डक्टर ज़ोर से चिल्लाते थे, "स्पेशल बस मंगला जा रही है। जल्दी करो! जल्दी करो !"

लोग स्टेशन से निकलकर भगदड़ मचाते हुए बसों पर सवार हो जाते । गफ्फूर की टैक्सी दिन में कम से कम एक दर्जन चक्कर लगाती थी। सारी भीड़ मंगला पहुँचकर नदी के इर्द-गिर्द जमा हो जाती थी। लोग रेतीले किनारे पर, उसके पत्थरों और घाटों की सीढ़ियों पर, सामने किनारे पर, जहाँ भी जगह मिलती थी बैठ जाते थे। इस इलाके में कभी इतनी भीड़ इकट्ठी नहीं हुई थी। बाँस गाड़कर ऊपर से फूँस की छत डालकर रातों-रात जैसे किसी जादू के ज़ोर से दुकानें खड़ी कर ली गईं, जिनमें रंगीन सोडावाटर की बोतलें, केलों के गुच्छे और नारियल की टॉफियाँ बिकने लगीं। चाय-प्रचार-बोर्ड ने चाय का एक बड़ा-सा स्टॉल लगा लिया। मन्दिर की दीवार पर चारों तरफ नीले पहाड़ों की ढलानों, और हरे चाय-बगानों की तस्वीरें चिपका दी गईं (इस इलाके में लोग बहुत ज़्यादा कॉफी और बहुत कम चाय पीते थे)। चाय-बोर्ड वाले चीनी के प्यालों में दिन-भर लोगों को मुफ्त चाय पिलाते थे। जनता मक्खियों की तरह चाय पर मंडराती थी और मक्खियाँ प्यालों और चीनी के बर्तनों के गिर्द मंडराती थीं। मक्खियों की वजह से स्वास्थ्य विभाग को डर लगा कि बिना पानी के कहीं उस भीड़ वाली जगह में कोई महामारी न फूट निकले। खाली वर्दी वाले हेल्थ इन्स्पेक्टरों ने चप्पे-चप्पे ज़मीन पर डी. डी. टी. छिड़की और लोगों को हैज़ा, चेचक, टायफाइड और न जाने किस-किस बीमारी से बचने के लिए टीका लगवाने की सलाह देने लगे। कुछ छोकरों ने तमाशे की खातिर अपनी बाँहें आगे कर दीं, जबकि बाकी भीड़ तमाशबीन बनी देखती रही। मन्दिर की पिछली दीवार खाली थी। वहाँ ज़मीन साफ करके लोगों के बैठने का और फिल्म शो दिखाने का प्रबन्ध किया गया। वृक्षों की मुर्झाई टहनियों पर लाउडस्पीकर टांग दिए गए और लोकप्रिय फिल्मी गीतों के रिकॉर्ड बजाकर लोगों का ध्यान आकर्षित किया गया। मर्दों, औरतों और बच्चों की भीड़ फिल्म शो देखने के लिए इकट्ठी होने लगी। सारी फिल्में मलेरिया, प्लेग, तपेदिक और बी. सी. जी. के टीकों के बारे में थीं। जब पर्दे पर मच्छर की बृहदाकार तस्वीर दिखाई गई तो एक किसान ने कहा, "इतने बड़े मच्छर! तभी तो उन मुल्कों में लोगों को मलेरिया होता है। हमारे यहाँ के मच्छर इतने छोटे होते हैं कि वे मासूम होते हैं ।" यह सुनकर मलेरिया पर भाषण देने वाला आदमी इतना उदास हो गया कि वह दस मिनट तक खामोश रहा। स्वास्थ्य के बाद उसने भारत सरकार द्वारा निर्मित बाँधों और नदी-योजनाओं की तस्वीरें दिखाईं जिनमें मन्त्रीगण भाषण दे रहे थे। मन्दिर से दूर एक आदमी ने बाँस पर निशाने का तख्ता लगाकर जुए का अड्डा खोला था और एक फूहड़-सा गोल झूला भी लगाया था जो दिन-भर चरमराता रहता था। बहुत-से फेरीवाले भी बैलून, सरकण्डे की सीटियाँ और मिठाइयाँ बेचते हुए भीतर-बाहर आ-जा रहे थे।

लोगों की एक बड़ी भीड़ महात्मा के गिर्द भक्ति-भाव से खड़ी रहती थी। वे राजू के चरणों के नीचे से जल लेकर अपने सिरों पर छिड़कते थे। जब तक आयोजनकर्ता वेलान मिन्नत नहीं करता था, "मेहरबानी करके चले जाइए, अगर आपने दर्शन कर लिए हैं तो दूसरे लोगों को भी मौका दीजिए, स्वार्थी मत बनें," तब तक लोग आगे नहीं बढ़ते थे। जब स्वामीजी हॉल में आकर चटाई पर लेटते उस वक्त भी लोग उनके दर्शनार्थ आते और फिर

वेलान उन्हें सरकने के लिए कहता। कुछ लोगों को महात्मा के नज़दीक चटाई के किनारे बैठने का विशेषाधिकार प्राप्त था। उनमें से एक स्कूल मास्टर था, जिसने देश के कोने-कोने से आनेवाली डाक और तारों का ज़िम्मा ले लिया था। इन पत्रों और तारों में स्वामीजी की सफलता के लिए कामना की गई थी। मंगला के डाकघर में सिर्फ एक डाकिया था जो हफ्ते में एक बार गांव आता था। अगर कोई तार आती थी तो वह नदी के रास्ते सात मील दूर स्थित गाँव अरुणा में पहुँचती थी और जब कोई मंगला आनेवाला आदमी मिलता था तो उसके हाथ भेजी जाती थी। लेकिन अब उस छोटे-से तारघर को क्षण-भर का आराम नहीं मिलता था। दिन-रात सन्देश आते रहते थे। ऊपर केवल 'स्वामीजी' लिखा रहता था। स्पेशल हरकारे उन जमा हुई तारों को लेकर मंगला जाते थे। इसके अलावा तारघर से बहुत-सी तारें बाहर भेजी जाती थीं। मंगला में प्रेस रिपोर्टरों का जमघट था जो लगातार घण्टों-घण्टों की खबरें सारी दुनिया को भेजते रहते थे। वे लोग बड़े धौंसवाले थे, तारघर का बाबू उनसे डरता था। वे उसकी खिड़की खटखटाकर कहते,'अर्जेण्ट' फिर जेब से पुलिन्दे, फोटोग्राफ और रीलें निकालकर फौरन भेजने के लिए कहते, "अर्जेण्ट! अर्जेण्ट! अगर आज यह पुलिन्दा मेरे दफ्तर न पहुँचा तो ....." फिर वे तार बाबू को तरह-तरह के डर दिखाते और खौफनाक बातें कहते, " प्रेस अर्जेण्ट! प्रेस अर्जेण्ट!" वे चिल्लाते रहते जब तक तार बाबू विक्षिप्त न हो जाता। उसने बच्चों से वादा किया था कि वह उन्हें स्वामीजी के दर्शन करवाने ले चलेगा। बच्चे चिल्लाते, "वहाँ अलीबाबा की फिल्म भी दिखाई जा रही है ! एक दोस्त ने बताया है ।" लेकिन बेचारे बाबू को अपना वादा पूरा करने का समय ही नहीं मिला। जब प्रेसवालों का उत्पात कुछ शान्त होता तो बाहर से सन्देश आने शुरू हो जाते और तारों की खट्-खट् सुनाई देने लगती। अब तक उसकी ज़िन्दगी चैन से गुज़री थी, अब उसपर इतना बोझ आ पड़ा था कि वह पागल होने लगा था। जब भी उसे दम लेने का मौका मिलता, वह अपने सभी अफसरों को एस. ओ. एस. भेजता –"आज दो सौ तारें आईं और गईं । मैं रिलीफ चाहता हूँ।"

सड़कों पर इतना ट्रैफिक था कि तिल रखने की जगह नहीं थी। बैलगाड़ियों, बसों, साइकिलों, जीपों, हर किस्म और उम्र की मोटरकारों का तांता लगा था। पैदल चलनेवाले हाथों में छोटी और बड़ी टोकरियाँ लिए खेतों को पार कर रहे थे, जिस तरह चींटी दल मीठे के ढेर पर जमा होता है। स्वामी के नज़दीक बैठे लोगों के संगीत के स्वर हवा में गूँज रहे थे। वे लोग हारमोनियम और तबले के साथ भक्ति के गीत गा रहे थे।

यहाँ सबसे ज़्यादा व्यस्त आदमी एक अमेरिकन था। जिसने कॉर्डराय की पतलून के ऊपर पतली-सी एक बुशर्ट पहन रखी थी। उपवास के दसवें दिन वह एक जीप में आया था जिसके पीछे एक ट्रेलर लगा था । वह धूल में अंटा हुआ था और उसके बाल बिखरे थे। आते ही फौरन वह काम में जुट गया। मद्रास में उसने एक दुभाषिया जुटा लिया था और वह तीन सौ पचहत्तर मील का सफर करके यहाँ पहुँचा था। हर चीज़ को एक तरफ धकेलकर उसने क्षण-भर इधर-उधर देखने के बाद अपनी जीप मन्दिर के पिछवाड़े की झाड़ी के पास खड़ी कर दी। फिर वह कूदकर सबको पीछे छोड़ता हुआ खंभोंवाले हॉल में पहुँचा, दोनों हाथ जोड़कर उसने स्वामी को 'नमस्ते' कहा। भारत में उतरते ही वह नमस्ते करना सीख गया था और उसने भारतीय शिष्टाचार की शिक्षा ले ली थी। राजू ने दिलचस्पी से उनकी

तरफ देखा–गुलाबी चेहरेवाली यह विशाल नई आकृति एक नई चीज़ थी। अमेरिकन ने झुककर स्वामी के पास बैठे हुए स्कूल मास्टर से पूछा, "क्या मैं इनसे अंग्रेज़ी में बात कर सकता हूँ।"

"हाँ, इन्हें अंग्रेज़ी आती है।" अमेरिकन मुश्किल से फर्श पर भारतीय ढंग से पालथी मारकर बैठने में सफल हुआ। उसने झुककर स्वामी से कहा, "मैं जेम्स जे. मेलोन हूँ। मैं केलीफोर्निया से आया हूँ। मेरा काम फिल्म और टेलीवीज़न शो प्रोड्यूस करना है। जो कुछ यहाँ हो रहा है उसपर मैं फिल्म बनाने आया हूँ। इसके बाद मैं अपने देशवासियों को यह फिल्म दिखाऊँगा। नई दिल्ली से मुझे आज्ञापत्र मिल गया है, जो मेरी जेब में है। क्या मुझे आपकी आज्ञा मिलेगी ?"

राजू ने इस बात पर गौर किया, फिर शान्त भाव से सर हिला दिया।

"ओ. के, थैंक्स ए लौट। लेकिन क्या आप मुझे अपनी एक तस्वीर लेने देंगे? मैं आपको डिस्टर्ब नहीं करूँगा। अगर मैं कुछ चीज़ें लाकर तार और बत्तियाँ यहाँ लगा दूँ तो क्या इससे आपको तकलीफ पहुँचेगी ?"

"नहीं। तुम अपना काम कर सकते हो," स्वामी ने कहा।

अमेरिकन अब व्यस्त हो गया। अपने ट्रेलर को लाकर ठीक से खड़ा किया और जेनेरेटर चालू किया। उसकी घर्राहट में बाकी सारी आवाज़ें डूब गईं। बहुत से मर्द, औरतें और बच्चे तमाशा देखने के लिए जमा हो गए। कैम्प के दूसरे आकर्षण फीके पड़ गए। जब मेलोन ने तारें खींचनी शुरू कीं तो भीड़ उसके पीछे-पीछे जाने लगी। वह मैत्रीपूर्वक मुस्कुराता हुआ अपना काम पूरा करने लगा। वेलान और एक-दो दूसरे आदमी चिल्ला उठे, "यह क्या मछुओं का बाज़ार है? जिन लोगों के पास और कोई काम नहीं वे यहाँ से चले जाएँ।" लेकिन इस आदेश का किसीपर असर नहीं हुआ। वे खंभों और चबूतरों पर चढ़ गए। नज़दीक से तमाशा देखने के लिए हर किस्म के स्थानों पर इकट्ठे हो गए। किसी की तरफ ध्यान दिए बगैर मेलोन अपने काम में लगा रहा। जब लाइटें तैयार हो गईं तो उसने कैमरा लेकर लोगों की, मंदिर की और अनेक कोणों और दूरियों से स्वामी की तस्वीरें खींचीं और कहा, "माँफ कीजिएगा स्वामीजी, हो सकता है ये लाइटें तेज़ हों।" तस्वीरें लेने के बाद उसने एक माइक्रोफोन स्वामीजी के चेहरे के पास रखकर कहा, "आइए बातें करें। ओ-के? बताइए, आपको यहाँ कैसा लगता है ?"

"मैं सिर्फ अपना कर्त्तव्य पूरा कर रहा हूँ। मेरी नापसन्दगी, या पसन्दगी का कोई सवाल नहीं है।"

"आपको उपवास किए अब कितने दिन हो गए हैं ?"

"दस दिन।"

"आपको कमज़ोरी महसूस हो रही है ?"

"हाँ।"

"आप उपवास कब तोड़ेंगे?"

"बारहवें दिन।"

"आपको उम्मीद है कि तब तक वर्षा आएगी ?"

"क्यों नहीं ।"

"क्या उपवास से सारे युद्ध खत्म हो सकते हैं और संसार में शान्ति स्थापित हो सकती है ?"

"हाँ ।"

"क्या आप हरेक आदमी को उपवास रखने की सलाह देते हैं ?"

"हाँ ।"

"जाति-भेद के बारे में आपकी क्या राय है? क्या यह दूर हो रहा है ?"

"हाँ ।"

"क्या आप हमें अपने प्रारम्भिक जीवन के बारे में कुछ बताएंगे ?"

"मुझसे क्या कहलवाना चाहते हो?"

"मि-मिसाल के लिए क्या आप सदा से योगी रहे हैं ?"

"हाँ–कुछ सीमा तक रहा हूँ।"

लगातार बातचीत करना स्वामी के लिए बहुत कठिन हो रहा था। वह थककर फिर चटाई पर लेट गया। वेलान और दूसरे लोग चिन्तित भाव से देखने लगे। स्कूल-मास्टर ने कहा, "ये थक गए हैं ।"

"अच्छा, मैं सोचता हूँ कि कुछ देर इन्हें आराम करने दिया जाए। मुझे अफसोस है, कि मैंने आपको तंग किया।" अमेरिकन ने कहा।

स्वामीजी आँखें बन्द करके लेट गए।

सरकार ने स्वामीजी के स्वास्थ्य की देखभाल के लिए दो डाक्टर भेजे थे। उन्होंने स्वामीजी की नब्ज़ और दिल की जाँच की। फिर उन्हें चटाई पर लिटा दिया। भीड़ में खामोशी छा गई। वेलान तेज़ी से पंखा चलाने लगा। वह बड़ा परेशान और दुखी दिखाई दे रहा था। दरअसल उसने भी हमदर्दी दिखाने के लिए उपवास रखा था, लेकिन अब वह एक दिन छोड़कर बिना नमक की उबली हुई सब्ज़ियाँ खाने लगा था। वह बेहद थका-माँदा दिखाई दे रहा था। उसने स्कूलमास्टर से कहा, "एक दिन और। मुझे यह सोचकर डर लगता है कि वे एक दिन और कैसे काटेंगे ।" मेलोन धैर्यपूर्वक इन्तज़ार करता रहा। फिर उसने डॉक्टर की ओर देखकर पूछा, "कैसी हालत है ?"

"बहुत संतोषजनक नहीं। ब्लड प्रेशर 200 तक पहुँच गया है। हमें डर है कि इसका एक गुर्दा खराब हो गया है। बदन में पेशाब का ज़हर पैदा होने लगा है। हम इन्हें सेलाइन और ग्लूकोज़ की थोड़ी-थोड़ी मात्रा देने की कोशिश कर रहे हैं। देश के लिए इनकी ज़िन्दगी बहुत कीमती है ।"

मेलोन ने माइक्रोफोन आगे बढ़ाकर कहा, "क्या आप इनकी सेहत के बारे में कुछ शब्द कहेंगे?" वह हॉल की सीढ़ियों पर बनी एक हाथी की मूर्ति के ऊपर बैठा था। डॉक्टरों ने घबराकर एक-दूसरे की तरफ देखा और कहा, "सॉरी, हम सरकारी नौकर हैं। बिना इजाज़त के हम कुछ नहीं बता सकते। हमारी रिपोर्टें सीधी हेड क्वार्टर पहुँचती हैं। वे ही जनता को बताते हैं। सॉरी। हम सीधे आपको नहीं बता सकते ।"

"ओ-के । मैं आपके रस्म-रिवाजों पर चोट नहीं करूँगा ।" मेलोन ने अपनी घड़ी

देखकर कहा, “आज के लिए इतना काफी है।” फिर स्कूल-मास्टर के पास आकर पूछा, “बताइए कल स्वामीजी नदी में कितने बजे दाखिल होंगे?"

“छह बजे सुबह ।”

“क्या आप आकर मुझे वह जगह दिखा सकते हैं ?” स्कूल-मास्टर उठकर उसे अपने साथ ले गया। अमेरिकन ने कहा, “रुको, रुको, पहले मुझे उनकी नकल करके यह बताओ कि वे कहाँ से चलेंगे, ऊपर कैसे जाएँगे और वे कहाँ रुककर खड़े होते हैं ।” स्कूल-मास्टर हिचकिचाया, उसे महात्मा की नकल करने में संकोच हो रहा था। अमेरिकन उससे आग्रह करता गया, “आओ भी, मेरी ज़रा मदद करो। अगर कोई गड़बड़ हुई तो मैं संभाल लूँगा ।” स्कूल-मास्टर ने तख्त शुरू किया, “वे यहाँ से चलना आरम्भ करते हैं। अब मेरे पीछे-पीछे आइए ।” उसने नदी तक का पूरा मार्ग चलकर दिखाया और वह स्थान भी बताया जहाँ स्वामी जी पानी में दो घंटों तक खड़े रहकर प्रार्थना करते हैं। भीड़ इन दोनों की हरकतों का निरीक्षण करती हुई साथ चल रही थी। किसी ने भीड़ में से मज़ाक करते हुए कहा, “ओ हो, अब तो मास्टर भी तपस्या करेगा और उपवास रखेगा !” और सारे लोग ठहाका मारकर हँस पड़े। मेलोन बीच-बीच में भीड़ की ओर देखकर मुस्कुरा देता था, यद्यपि उसे यह नहीं मालूम था कि वे क्या कह रहे थे। उसने हर कोने से उस स्थान की जाँच-पड़ताल की, जेनेरेटर से उसकी दूरी नापी और स्कूल-मास्टर से हाथ मिलाते हुए कहा, “अच्छा, कल सुबह मिलेंगे ।” और फिर इंजन के शोर और झाड़ियों और गड्ढों पर से उछलती हुई जीप में बैठकर सड़क की ओर चला गया।

ग्यारहवें दिन, प्रात:काल । चूँकि यह उपवास का आखिरी दिन था, इसलिए रात-भर बाहर से आनेवालों का तांता लगा रहा था और भीड़ तिगुनी हो गई थी। रात-भर आनेवाले लोगों का शोरगुल और सड़कों और गलियारों में गाड़ियों और मोटरों के चलने की आवाज़ें आती रहीं। वेलान और उसके साथियों ने खंभोंवाले हॉल से भीड़ का रेला दूर रखने के लिए घेरा बना लिया था। वह कहता, “स्वामीजी को साँस लेने के लिए शुद्ध वायु की ज़रूरत है। वे सिर्फ हवा पर ही जी रहे हैं, इसलिए हवा को अशुद्ध मत करो। नदी पर सब लोग उनके दर्शन कर सकेंगे। मैं वायदा करता हूँ। इस वक्त वापस जाओ। स्वामीजी विश्राम कर रहे हैं ।” रात-भर उन लोगों को निगरानी करनी पड़ी थी। असंख्य लैम्पों और लालटेनों की रोशनियाँ झाड़ियों, पेड़ों और दीवारों पर विचित्र-विचित्र छायाकृतियाँ बना रही थीं।

तड़के साढ़े पाँच बजे डाक्टरों ने स्वामीजी की परीक्षा की। उन्होंने एक बुलेटिन लिखकर उसपर हस्ताक्षर किए। उसमें उन्होंने कहा कि “स्वामीजी की हालत बहुत गम्भीर है। वे ग्लूकोज़ और सेलाइन लेने से इन्कार करते हैं। उनको अपना उपवास तुरंत तोड़ देना चाहिए। क्या कार्रवाई की जाए, इसकी हिदायत भेजें ।” उन्होंने अपने सदर दफ्तर को तार द्वारा यह सूचना भेजने के लिए एक आदमी दौड़ाया। यह ‘टॉप प्रायोरिटी’ सरकारी टेलीग्राम था और इसका एक घंटे के भीतर ही जवाब आ गया। “स्वामीजी के जीवन की रक्षा ज़रूरी है। आग्रह करके उन्हें उपवास तोड़ने के लिए राज़ी करो। जीवन को खतरे में न डालें। ग्लूकोज़ और सेलाइन देने की कोशिश करो। स्वामीजी से आग्रह करो कि उपवास बाद में फिर कभी करें ।”

डाक्टरों ने स्वामी के पास बैठकर उन्हें यह सन्देश पढ़ सुनाया। वह इसपर मुस्कुरा

दिया। उसने वेलान को संकेत द्वारा पास आने के लिए कहा। डाक्टरों ने फिर अनुरोध किया, "स्वामीजी से कहो कि वे अपने जीवन की रक्षा करें। मेहरबानी करके इन्हें राज़ी करें। ये बहुत क्षीण हो गए हैं।" वेलान ने झुककर स्वामी से कहा, "डाक्टर कहते हैं कि—" इसके उत्तर में राजू ने वेलान को और निकट आने का संकेत किया और फिर क्षीण स्वर में फुसफुसाते हुए कहा, "मुझे खड़ा होने में मदद करो," और वह उसका सहारा लेकर उठने की कोशिश करने लगा। वह खड़ा हो गया। वेलान और उसके एक साथी को दोनों बगलों से थामकर उसे सहारा देना पड़ा। गंभीर शान्ति के बीच सारी भीड़ उसके पीछे चल दी। हरेक के मुख पर गंभीर, उदात्त भावना थी। पूरब के आकाश में उषा की लाली थी। कैम्प में बहुत-से लोग अभी तक सो रहे थे। राजू में चलने की शक्ति नहीं थी, फिर भी वह सारा मार्ग चलकर तय करने पर तुला था। इस श्रम से वह हाँफ रहा था। वह नदी के घाट की सीढ़ियाँ उतरकर नीचे गया। हर सीढ़ी पर रुककर साँस लेते हुए वह आखिरकार नीचे पानी के किनारे तक पहुँच गया। वह पानी में दाखिल हुआ, आँखें बन्द कर वह पहाड़ की ओर मुड़ा। उसके होंठ प्रार्थना के शब्दों से हिल रहे थे। वेलान और उसका साथी उसकी बाँहों को थामे सहारा दे रहे थे। इस समय तक प्रात: का सूरज क्षितिज के ऊपर उठ आया था। प्रकाश की किरणों ने सारे दृश्य-पट को आलोकित कर दिया था। राजू को पैरों के बल खड़े रखने में वेलान और उसके साथी को बड़ी कठिनाई हो रही थी। क्योंकि वह गिर रहा था। वे उसे इस तरह थामे रहे जैसे वह एक शिशु हो। राजू ने आँखें खोलीं, चारों ओर दृष्टि डाली और कहा, "वेलान, पहाड़ियों पर वर्षा हो रही है। मैं वर्षा को अपने पाँवों अपनी टाँगों पर आते हुए महसूस कर रहा हूँ ..." और यह कहकर वह निढाल होकर वहीं गिर पड़ा।

□□□